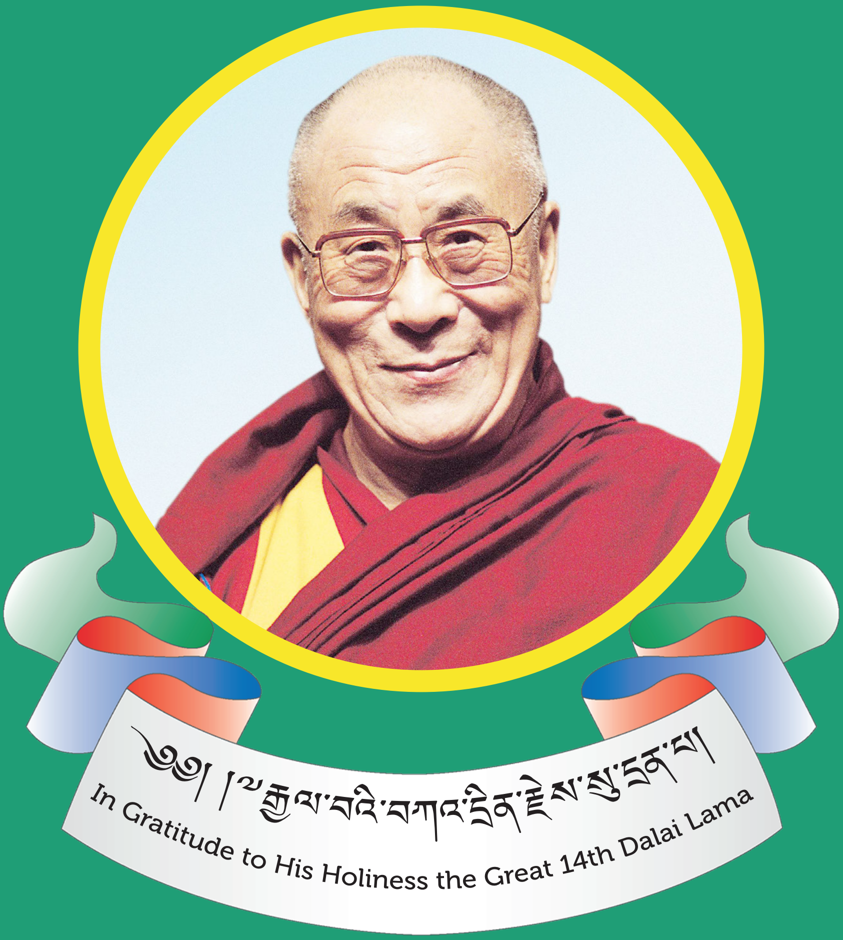
༄༅། །རྒྱལ་བའི་བཀའ་དྲིན་རྗེས་སུ་དྲན་པ།
In Gratitude to His Holiness the Great 14th Dalai Lama

परम पावन दलाई लामा जी के जीवन की चार प्रमुख प्रतिबद्धताएं

केन्द्रीय तिब्बती प्रशासन के सूचना एवं अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्ध विभाग द्वारा परम पावन चौदहवें दलाई लामा जी के 85वें जन्मदिवस पर आयोजित बातचीत/संवाद श्रृंखला का वक्तव्य

DIIR PUBLICATION

Published By:
Department of Information & International Relations (DIIR)
Central Tibetan Administration (CTA)
Gangchen Kyishong, Dharamshala 176215
H.P. INDIA

Copyright © 2025 DIIR, Central Tibetan Administration All rights reserved.

> “WHEN I WAKE IN THE MORNING, I MAKE A
> WISH TO BE USEFUL TO OTHERS”
>
> -HIS HOLINESS THE 14TH DALAI LAMA

प्रस्तावना

केंद्रीय तिब्बती प्रशासन के पंद्रहवें कशाग की निर्देश अनुसार सूचना एवं अंतरराष्ट्रीय संबंध विभाग द्वारा परम पावन दलाई लामा जी के जीवन की चार प्रमुख प्रतिबद्धता व प्रतिज्ञा पर विश्व के सौ से अधिक विशेषज्ञों तथा विद्वानों द्वारा पंद्रह भाषाओं में आभासी बातचीत श्रृंखला का सफलतापूर्वक आयोजित किया गया था। मैं खुशी है कि इस बातचीत श्रृंखला में विद्वानों द्वारा दिये गये विचार का अनुलेखन तथा किताब में संकलित किया गया है।

परमपावन दलाई लामा जी ने 16 साल की उम्र में तिब्बत के राजनीतिक तथा अध्यात्मिक नेतृत्व का जिम्मेदारी लिया था। 25 साल की उम्र में उन्हें मजबूरन भारत में निर्वासन आना पड़ा था। निर्वासन में आने के तुरन्त बाद परम पावन दलाई लामा जी ने कड़ी मेहनत के द्वारा केंद्रीय तिब्बती प्रशासन स्थापित किया तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तिब्बती आंदोलन को बहुत बड़ा समर्थन मिला। इसी प्रकार सन 2011 में परम पावन दलाई लामा जी ने तिब्बती जनता द्वारा लोकतंत्र तरीके से चुने गये नेतृत्व को राजनीतिक जिम्मेदारी सौंपी है। साथ ही परम पावन दलाई लामा जी ने अपने पूरी जीवन विश्व शांति और धार्मिक सद्भाव को बढावा देने के लिए समर्पित किया है जो उनकी जीवन की चार प्रमुख प्रतिबद्धताओं में निहित है।

प्रथम प्रतिबद्धता- परम पावन दलाई लामा जी एक खुशहाल और शांतिपूर्ण दुनिया विकसित करने के लिए सार्वभौमिक उत्तरदायित्व व मानवीय मूल्यों को बढावा देने के लिए प्रोत्साहित करते है। परमपावन दलाई लामा जी एक मनुष्य के तौर पर लोगों के मन में इस समझ को उत्पन्न करने में उनकी मदद करने के लिए कटिबद्ध हैं कि यदि हमारा मन अशांत रहता है तो बाहरी भौतिक सुख-साधन भी हमारे भीतर शांति नहीं ला पायेंगे, लेकिन यदि हमारा मन शांत रहता है तो शारीरिक कष्ट भी मन की शांति को भंग नहीं कर पायेंगे। इस तरह वे लोगों को जीवन में खुश रहने के लिए प्रोत्साहित करते हैं।

दूसरी प्रतिबद्धता- परमपावन दलाई लामा जी दुनिया के विभिन्न आध्यात्मिक परंपराओं के मध्य धार्मिक सौहार्द को प्रोत्साहित करने के लिए प्रतिबद्ध हैं। क्योंकि सभी धार्मिक परंपराओं प्रेम, करुणा, अहिंसा, सहनशीलता, दया इत्यादि जैसे बुनियादी मूल्यों का संदेश सिखाता है।

तीसरी प्रतिबद्धता- तिब्बती भाषा, संस्कृति तथा भारत के नालंदा विश्वविद्यालय के आचार्यो से प्राप्त गौरवशाली विरासत को संरक्षित करने एवं तिब्बत के प्राकृतिक पर्यावरण के संरक्षण के

लिए प्रतिबद्ध हैं।

चौथी प्रतिबद्धता- भारत के प्राचीन ज्ञान और विद्या को पुनर्जीवित करना है जिसमें मन और भावना की कामकाज तथा अहिंसा और करुणा की सिद्धांत की अभ्यास करना पूरी तरह से विकसित है।

इस अभासी बातचीत श्रृंखला में भाग लेने वाले विद्वानों ने परमपावन दलाई लामा जी के जीवन की चार प्रमुख प्रतिबद्धताओं पर अपने समझ और विचार के आधार पर ज्ञान प्रस्तुत किया है। मुझे विश्वास है कि इस पुस्तक के पाठक, इसमें निहित परमपावन दलाई लामा जी के ज्ञान और विद्या से जरूर लाभ मिलेगा। साथ ही उन उद्देश्यों के आधार पर जीवन में आगे बढ़ेंगे जिनके लिए हमने परम पावन के प्रति कृतज्ञता का वर्ष मनाया है। मैं आशा और प्रार्थना करता हूं कि परम पावन दलाई लामा जी की चार प्रमुख प्रतिबद्धताएं पूरी मानवता के लिए लाभ सिद्ध हो।

सिक्योंग पेंपा छेरिंग
केंद्रीय तिब्बती प्रशासन

सूचना एवं अंतरराष्ट्रीय संबंध विभाग के सचिव का संदेश

परम पावन दलाई लामा जी के जीवन की चार प्रमुख प्रतिबद्धताओं में समाहित ज्ञान और विचार दुनिया का सबसे बड़ा मूल्यवान चीज़ है। इस संदर्भ में केंद्रीय तिब्बती प्रशासन के कशाग के सूचना एवं अंतरराष्ट्रीय संबंध विभाग द्वारा परम पावन दलाई लामा जी के प्रति 'कृतज्ञता वर्ष' के तहत दिसंबर 2020 में उनके जीवन की चार प्रमुख प्रतिबद्धताओं पर एक वर्चुअल बातचीत शृंखला का आयोजन किया गया था। यह विशेषकर परम पावन दलाई लामा जी के विचार और ज्ञान को दुनिया के सभी लोगों तक पहुंचाने का एक भरसक प्रयास है। ज्ञातव्य है कि जैसा हमने कल्पना की है, यह बातचीत शृंखला बहुत ही सफल रही है। इसमें 120 से अधिक वक्ताओं, जिनमें रिन्पोछे, प्रोफेसर, इतिहासकार, शिक्षक तथा सामाजिक कार्यकर्ता शामिल हुए। इन हस्तियों ने पंद्रह अलग-अलग भाषाओं में अपना संबोधन दिया। सभी वक्ताओं ने परम पावन दलाई लामा जी की चार प्रतिबद्धताओं पर अपने ज्ञान, समझ एवं विचार के साथ ही परम पावन दलाई लामा जी के साथ काम करने तथा उनसे सीखने के अपने व्यक्तिगत अनुभवों को भी साझा किया।

इस बातचीत शृंखला के सफल समापन के बाद, कई वक्ताओं, श्रद्धालुओं, तिब्बत समर्थकों तथा परम पावन दलाई लामा जी के शुभचिंतकों ने इन भाषणों को संकलित करके पुस्तक के रूप में प्रकाशित करने का सुझाव दिया था। इस सुझाव के आधार पर, इन भाषणों का लिखित पाठ सभी वक्ताओं को उनकी स्वीकृति और संपादन के लिए भेजा गया। कुछ वक्ताओं को छोड़कर सभी वक्ताओं ने अपने व्यस्त समय में से बहुमूल्य समय निकालकर हमे पाठ की समीक्षा और संपादन लिखित रूप में वापस भेजा। फिर उसके बाद संकलित पाठ को परम पावन दलाई लामा जी के कार्यालय को अंतिम सुझाव और अनुमोदन के लिए भेजा गया था।

समीक्षा और संपादन की सभी उचित प्रक्रिया के बाद, हम वर्चुअल बातचीत शृंखला में दिए गए व्याख्यानों का संकलन पुस्तक के रूप में प्रकाशित करने में खुशी महसूस कर रहे हैं। यद्यपि इस बातचीत शृंखला की पुस्तक का मुख्य विषय परम पावन दलाई लामा जी की चार प्रतिबद्धताएं हैं, परन्तु इस पुस्तक में व्यक्त विचार और विश्लेषण पूरी तरह से वक्ताओं के ही हैं। इस तरह सभी वक्ताओं ने स्वतंत्र रूप से परम पावन दलाई लामा जी की चार प्रतिबद्धताओं को जैसा समझा, साथ ही इन प्रतिबद्धताओं को अपने दैनिक जीवन में कैसे शामिल किया, उसी के अनुरूप उनकी व्याख्या की है।

इस पुस्तक को प्रकाशित करने का मुख्य उद्देश्य परम पावन दलाई लामा जी के जीवन की चार प्रमुख प्रतिबद्धताओं के ज्ञान को अध्ययन करने वाले लोगों के लिए एक स्त्रोत के रूप में उपलब्ध कराना है। हमारा यह विश्वास है कि यह पुस्तक उन लोगों के लिए लाभकारी साबित होगी, जो इसे पढ़ते है तथा दुनिया के लिए परम पावन दलाई लामा जी के विचार को उजागर करने और बढ़ावा देने में योगदान दे सकेंगे। हमें यकीन है कि इस पुस्तक के पाठक न केवल परम पावन दलाई लामा जी की चार प्रतिबद्धताओं की बुनियादी समझ के साथ चलें बल्कि हमारे दिलों में परम पावन दलाई लामा जी द्वारा निर्धारित पुण्य के मार्ग पर चलने की क्षमता भी विकसित करें।

यह स्पष्ट है कि परम पावन दलाई लामा जी का जीवन प्रेम, करुणा और अहिंसा की शक्ति का प्रमाण है। यह चार प्रतिबद्धताएं परम पावन दलाई लामा जी के मानव प्राणी के लाभ हेतु दुनिया के लिए सबसे बड़े योगदानों में से एक है। यह पुस्तक ज्ञान, नैतिकता और उस विशाल बुद्धिमत्ता के इमारत का एक छोटा सा पत्थर है, जिसका प्रतिनिधित्व परम पावन दलाई लामा जी करते हैं।

सचिव, सूचना एवं अंतरराष्ट्रीय संबंध विभाग
केंद्रीय तिब्बती प्रशासन

विषय-सूची

- प्रस्तावना
- सूचना एवं अंतरराष्ट्रीय संबंध विभाग के सचिव का संदेश

उद्घाटन वक्तव्य

- पहली प्रतिबद्धताः मानवीय मूल्यों को बढ़ावा देना
डॉ थुपतेन जिनपा
परम पावन दलाई लामा के प्रधान अंग्रेजी अनुवादक एवं मैकगिल विश्वविद्यालय में धार्मिक अध्ययन स्कूल में सहायक प्रोफेसर..1

- दूसरी प्रतिबद्धताः धार्मिक सद्भाव को प्रोत्साहित करना
वेन कर्मा गेलेक युथोक
कलोन, धर्म एवं संस्कृति विभाग, केंद्रीय तिब्बती प्रशासन..12

- तीसरी प्रतिबद्धताः तिब्बती भाषा, संस्कृति और तिब्बत के प्राकृतिक पर्यावरण का संरक्षण।
गेशे ल्हाकदोर
निदेशक, तिब्बती ग्रंथ एवं अभिलेख पुस्तकालय..19

- चौथी प्रतिबद्धताः भारत की प्राचीन नालंदा परम्परा को पुनर्जीवित करना।
गेशे नवांग समतेन
कुलपति, केंद्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान..28

उद्घाटन वक्तव्य

- पहली प्रतिबद्धताः मानवीय मूल्यों को बढ़ावा देना
लोपोन लोबसंग त्सुलट्रीम
सहायक प्रोफेसर, केंद्रीय बौद्ध विद्या संस्थान (समवत विश्वविद्यालय), लद्दाख..39

- दूसरी प्रतिबद्धताः धार्मिक सद्भाव को प्रोत्साहित करना
गेशे वांगचुक दोर्जी नेगी
प्रोफेसर, केंद्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, वाराणसी..44

- तीसरी प्रतिबद्धताः तिब्बती भाषा, संस्कृति और तिब्बत के प्राकृतिक पर्यावरण का संरक्षण।
डा. पेमा तेंजिन
प्रोफेसर, केंद्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, वाराणसी..54

- चौथी प्रतिबद्धताः भारत की प्राचीन नालंदा परम्परा को पुनर्जीवित करना।
श्री छोक्योंग वांगचुक
स्वास्थ्य मंत्री, केंद्रीय तिब्बती प्रशासन, धर्मशाला..64

परम पावन दलाई लामा जी के जीवन की चार प्रतिबद्धताएं

- जमयंग ग्यालत्सेन
पूर्व प्रोफेसर, केंद्रीय बौद्ध विद्या संस्थान, लद्दाख..69

- कैलाश चंद्र बौद्ध
हिंदी अनुवादक, परम पावन दलाई लामा कार्यालय..76

पहली प्रतिबद्धता: मानवीय मूल्यों को बढ़ावा देना

- कर्मा मोनलम
पूर्व वरिष्ठ अधिकारी, केंद्रीय तिब्बती प्रशासन एवं तिब्बती और हिंदी के अनुवादक...................................85

- लोछेन रिन्पोछे
तिब्बत के महान अनुवादक रिन्छेन ज़ागपो के अवतार एवं बौद्ध दर्शन और तन्त्रायन बौद्ध धर्म के विद्वान........89

दूसरी प्रतिबद्धता: धार्मिक सद्भाव को प्रोत्साहित करना

- छोगोन रिन्पोछे
ड्रुक्पा काग्यू के बौद्ध शिक्षक एवं परम पावन दलाई लामा के पूर्व हिंदी अनुवादक...................................93

- डा0 उपनन्द थेरो
श्री लंका थेरवाद बुद्धिज़्म के विद्वान और शिक्षक..97

तीसरी प्रतिबद्धता: तिब्बती भाषा, संस्कृति और तिब्बत के प्राकृतिक पर्यावरण का संरक्षण

- गेशे जंगछुप छोड़ोन
महासचिव, गेलुग इंटरनेशनल फाउंडेशन एवं गादेन शरत्से मठ के पूर्व मठाधीश....................................102

- मलिंग गोम्पो
संस्थापक, इंडियन हिमालयन काउंसिल ऑफ नालंदा बुद्धिस्ट ट्रेडीशन तथा सदस्य, अल्पसंख्यक शिक्षा, मानव संसाधन मंत्रालय, भारत सरकार...111

चौथी प्रतिबद्धता: भारत की प्राचीन नालंदा परम्परा को पुनर्जीवित करना

- गेशे जिन्पा डकपा
तिब्बती बौद्ध धर्म में गेशे डिग्री से सम्मानित प्रथम गैर-हिमालय मूल के व्यक्ति....................................118

डॉ थुपतेन जिनपा

परम पावन दलाई लामा के प्रधान अंग्रेजी अनुवादक एवं मैकगिल विश्वविद्यालय में धार्मिक अध्ययन स्कूल में सहायक प्रोफेसर

मैं केंद्रीय तिब्बती प्रशासन के सूचना एवं अंतरराष्ट्रीय संबंध विभाग द्वारा परम पावन दलाई लामा जी के जीवन और उनके योगदानों के बारे में आयोजित बातचीत शृंखला में आमंत्रित किए जाने पर खुद को सम्मानित महसूस कर रहा हूं।

यह बातचीत शृंखला परम पावन दलाई लामा के जीवन की अनेक कार्यक्रमों में से सबसे प्रमुख, उनकी चार प्रमुख प्रतिबद्धताओं पर केंद्रित की गई है। पहली प्रतिबद्धता में, एक सामान्य मुनष्य के रूप में परम पावन दलाई लामा का योगदान अपनी क्षमता के अनुसार साझा मानवीय मूल्यों, विशेष रूप से एक समावेशी गैर-धार्मिक या पंथनिरपेक्ष दृष्टिकोण के आधार पर मूल्यों को बढ़ावा देना है। उनकी दूसरी प्रतिबद्धता, दुनिया की महान धार्मिक परंपराओं में समझ और सद्भाव को बढ़ावा देना है। इस विशेष प्रतिबद्धता के प्रति परम पावन दलाई लामा जी खुद एक आध्यात्मिक गुरु के रूप में प्रतिबद्ध हुए हैं। तीसरी प्रतिबद्धता, दलाई लामा होने की नाते उनकी एक ऐतिहासिक जिम्मेदारी है कि वह तिब्बत देश और तिब्बती लोगों की अनूठी संस्कृति, भाषा और बौद्ध धर्म की संरक्षण तथा उन्हें जीवित रखने के लिए करें। अंत में, परम पावन दलाई लामा की चौथी प्रतिबद्धता भारत के प्राचीन ज्ञान को पुनर्जीवित करना तथा उसका संवर्धन करना है। यह चौथी प्रतिबद्धता वास्तव में परम पावन दलाई लामा द्वारा भारत के प्रति अपनी गहरी कृतज्ञता की भावना को प्रकट करना है। क्योंकि भारत के महान नालंदा परम्परा से तिब्बती परंपरा हजारों वर्षों से लाभ उठाती रही है। आज, तिब्बती परंपरा और तिब्बती लोग भारत के नालंदा विरासत के ऐतिहासिक संरक्षक बने हुए हैं। अब जबकि परम पावन दलाई लामा और तिब्बती लोग निर्वासन में रह रहें हैं, इस प्रतिबद्धता के माध्यम से परम पावन दलाई लामा एक तरह से तिब्बती लोगों के लिए भारत की करुणा को अभिव्यक्त कर रहे हैं। विशेषकर वह भारत की प्राचीन ज्ञान-दर्शन की विरासत मन-विज्ञान के बारे में महत्वपूर्ण विषयों को दुनिया के समक्ष प्रस्तुत कर रहे है।

मुझे यहां विशेष रूप से मानवीय मूल्यों को बढ़ावा देने के बारे में उनकी पहली प्रतिबद्धता पर बोलने के लिए कहा गया है। मुझे परम पावन दलाई लामा के प्रमुख अंग्रेजी अनुवादक के रूप में 35 से अधिक वर्षों तक उनकी सेवा करने का सौभाग्य मिला है। लगभग पैंतीस साल पहले अक्तूबर 1985 में जब मैं 20 वर्ष का था, तब मुझे धर्मशाला में आयोजित एक प्रवचन में आकस्मिक रूप से परम पावन दलाई लामा के अनुवादक के रूप में सेवा करने का सुअवसर मिला था।

तब से, मुझे दुनिया भर में उनकी यात्राओं में साथ रहना, उनकी पुस्तक परियोजनाओं में सहयोग करना और विभिन्न सार्वजनिक वार्ताओं के साथ-साथ सम्मेलनों, प्रवचनों आदि में उनकी सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। एक तिब्बती होने के नाते विशेष रूप से एक मठवासी छात्र के रूप में, मैं खुद को परम पावन के एक समर्पित विद्यार्थी के रूप में देखता हूं। उस समय एक मठवासी सदस्य होने के अलावा, मैंने परम पावन जी से सम्पूर्ण मठवासी प्रतिज्ञाएं प्राप्त की थीं। अवश्य ही, एक तिब्बती मठवासी के लिए, परम पावन एक वरिष्ठ मठवासी, एक महाथेर हैं; वह आध्यात्मिक गुरु है और वह वज्रयान संप्रदाय के गुरु (दोर्जे लोपोन) भी हैं। मेरे लिए तब, मेरे संबंधों में एक बहुत ही मजबूत भक्ति और धार्मिक आयाम था। लेकिन समय के साथ निश्चित रूप से मेरे काम में, उनके साथ मेरे संबंधों में एक व्यावसायिक आयाम भी विकसित हुआ है।वास्तव में, जब मुझे पहली बार परम पावन का अनुवादक बनने का आकस्मिक सौभाग्य प्राप्त हुआ, तब मैंने खुद को शिक्षित और प्रशिक्षित करना शुरू किया। जैसे कि परम पावन के लेखन, भाषणों के प्रतिलेख तथा यूरोप और उत्तरी अमेरिका की उनकी यात्राओं के बारे में लिखे हुए सभी लेखों का अध्ययन करना शुरू किया। वहां एक सुंदर कॉफी टेबल पुस्तक था जिसका शीर्षक है- 'परम पावन दलाई लामा की उत्तरी अमेरिका की ऐतिहासिक यात्रा'। इस पुस्तक में परम पावन की कई सार्वजनिक वार्ताओं और बौद्ध शिक्षाओं के पाठ के साथ यात्रा से संबंधित कुछ सुंदर और प्रेरक तस्वीरें भी हैं।

मैं लोगों को यह पुस्तक पढ़ने की सलाह देता हूं। यह पुस्तक कुछ प्रमुख पुस्तकालयों में उपलब्ध है। पुस्तक के बारे में उल्लेखनीय बात यह थी कि इसमें एक सशक्त भावना व्यक्त की गई है। इसमें परम पावन दलाई लामा की उत्तरी अमेरिका की पहली यात्रा के दौरान दिए गए सार्वजनिक भाषण में शांति और करुणा को बढ़ावा देने के उनके वैश्विक संकल्प का पहले से ही एक मजबूत दृष्टि और दर्शन विकसित हुआ है।

परम पावन दलाई लामा की उत्तरी अमेरिका की पहली दो यात्राओं के दौरान दिए गए अधिक महत्वपूर्ण व्याख्यान और शिक्षाओं का अनुवाद मेरे पूर्ववर्ती प्रोफेसर जेफरी हॉपकिंस द्वारा एक पुस्तक - 'दयालुता, स्पष्टता और अंतर्दृष्टि' में प्रकाशित किया गया था। आखिर में 'विश्व शांति के लिए एक मानव दृष्टिकोण' नामक एक प्रेरक पुस्तक है, जिसमें परम पावन के शांति के दर्शन को संक्षेप में व्यक्त किया गया है। इन तीन पुस्तकों से मुझे परम पावन के अनुवादक के रूप में सेवा करने की काफी प्रेरणा प्राप्त हुई।

1970 के दशक से परम पावन बिल्कुल स्पष्ट थे कि भले ही वे विश्व के अग्रणी बौद्ध गुरु हैं, लेकिन जब व्यापक विश्व की बात आती है तो वे बौद्ध धर्म के प्रचार करने की विचार से प्रेरित नहीं थे। उनकी रुचि बौद्ध धर्म के शिक्षाओं, रीतियों, अंतर्दृष्टि और ज्ञान के अंदर तक जाना तथा इसे एक ऐसी भाषा और दृष्टिकोण में पूरे दुनिया के लिए पेश करना है जो वास्तव में

सार्वभौमिक हो और जिससे हर कोई लाभान्वित हो सके। उस समय एक बौद्ध भिक्षु के रूप में मैंने इसे वास्तव में उल्लेखनीय और व्यावहारिक पाया था। यह उनकी ओर से एक साहसिक कार्य था, क्योंकि दुनिया के अन्य आध्यात्मिक गुरुओं की तरह वह भी अपने बौद्ध धर्म को प्राथमिकता देते हुए पारंपरिक दृष्टिकोण को चुन सकते थे।

अगर हम दुनिया के विभिन्न धर्मों के गुरुओं को देखें, तो ज्यादातर की पहली प्राथमिकता अपनी परंपरा का प्रचार करना और उन लोगों की देखभाल करना है जो उनके धार्मिक समुदाय के सदस्य हैं। उनकी नजर में दुनिया की सेवा को गौण रखा जाता है। परम पावन के साथ यह ठीक उल्टा प्रतीत होता है। हालांकि, तिब्बती लोगों और तिब्बती बौद्ध धर्म के गुरु के रूप में वह अपनी ऐतिहासिक भूमिका के लिए प्रतिबद्ध रहे हैं और आगे भी रहेंगे। लेकिन जब वे दुनिया के सामने होते हैं, जब वे वैश्विक मंच पर होते हैं, उस समय उनका दृष्टिकोण तिब्बती लोगों या तिब्बती बौद्ध धर्म की विशिष्ट आवश्यकताओं और चिंताओं पर नहीं रहता है। उस समय उनका दृष्टिकोण और सोच वास्तव में पूरी मानवता के सर्वोत्तम हित में होता है। उनकी चिंताएं इस पृथ्वी पर रह रहे सभी सात अरब मनुष्यों की हित के लिए होती हैं। अब हम सात अरब से अधिक मनुष्य हैं। इन महत्वपूर्ण अनुभूति से मेरे मन में परम पावन दलाई लामा के ज्ञान दर्शन, उनकी दृष्टि और विश्व के प्रति प्रेम के लिए अधिक श्रद्धा उत्पन्न हुई है।

मैंने यह भी देखा कि 1970 के दशक से परम पावन दलाई लामा ने भूमंडलीकृत विश्व की चुनौतियों के बारे में गहराई से सोचना और बोलना शुरू किया था। उन्होंने देखा कि कैसे अंतरराष्ट्रीय यात्राओं और वैश्विक व्यापार की अर्थव्यवस्था ने परस्पर अन्योन्याश्रित विश्व का निर्माण किया था जहां राष्ट्रीय सीमाएं गौण हो जाती हैं। उन्होंने इस बारे में भी चिंतन किया कि कैसे हमें राष्ट्रीय सीमाओं से आगे बढ़ती पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना करने के बारे में सोचना चाहिए।

उदाहरण के लिए, यदि और पर्यावरणीय तबाही से गंभीर वायु प्रदूषण होता है, तो यह वायु प्रदूषण किसी देश की सीमा तक जाकर रुकने वाला नहीं है। पासपोर्ट जांच या पासपोर्ट नियंत्रण की मांग की तरह वायु प्रदूषण को रोका नहीं जा सकता है। यह पूरी तरह से वैश्विक घटना होगी। वैश्विक अंतर्संबंध की इस नए वास्तविकता को देखते हुए परम पावन ने वैश्विक और सार्वभौमिक उत्तरदायित्व की भावना को विकसित करने की आवश्यकता पर बोलना शुरू किया है। वास्तव में परम पावन ने 'ग्लोबल रिस्पॉंसिबिलिटी' नामक एक पुस्तक भी लिखा था। उस समय परम पावन जिस बात की वकालत कर रहे थे, वह थी मानव चेतना में बदलाव की आवश्यकता, सामूहिक रूप से मानवता के रूप में सोचने के लिए एक शक्तिशाली इच्छाशक्ति की आवश्यकता - पर्यावरण, विश्व शांति, आदि जैसे वैश्विक मुद्दों के संदर्भ में अपने राष्ट्रों के मुद्दों के बारे में भी सोचना। पर बहुत कम लोग इस बात से इत्तेफाक रखते हैं कि परम पावन विश्व के प्रति अपने दृष्टिकोण में कितने आगे थे।

1989 में परम पावन दलाई लामा को नोबेल शांति पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। उस दौरान मुझे नोबेल पुरस्कार समारोह में शामिल होने का सौभाग्य मिला। परम पावन दलाई लामा को नोबेल शांति पुरस्कार समिति द्वारा प्रदान की गई प्रशस्ति-पत्र में वास्तव में परम पावन द्वारा पर्यावरण चेतना के प्रति जागरुकता की दिशा में योगदान का उल्लेख किया है। मैं समझता हूं कि यह पहली बार है जहां नोबेल शांति पुरस्कार के प्रशस्ति-पत्र में पर्यावरण का संदर्भ दिया गया है। इसलिए 1980 के दशक के अंत तक हम देख सकते है कि अंतरराष्ट्रीय समुदाय में परम पावन दलाई लामा को जिन बातों के लिए सम्मान प्राप्त हो रहा था, उसमें पर्यावरण जागरुकता को बढ़ावा देने में उनका योगदान भी शामिल था।

परम पावन की महानता, उनके दर्शन, उनके योगदान के प्रति जैसे-जैसे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रशंसा का भाव बढ़ा, उन्होंने इस अवसर का लाभ लेकर वैश्विक शांति, करुणा और मतभेदों के बीच समझ के अपने दर्शन को प्रभावशाली तरीके से उठाना शुरू किया और संवाद शुरू करने लगे। उनके दृष्टिकोण का मूलमंत्र स्वयं की बुनियादी मानवीय स्थिति से जुड़ने का आह्वान है और फिर हमारी साझा मानवता - 'संपूर्ण मानवता की एकता' की समझा को दूसरों से संबद्ध करना है। वह इसे 'नैतिकता और साझा मानवीय मूल्यों को बढ़ावा देने के लिए एक धर्मनिरपेक्ष, सार्वभौमिक दृष्टिकोण' कहते हैं।

मैं इस विषय में रुचि रखने वाले सभी लोगों से परम पावन दलाई लामा की दो पुस्तकों को पढ़ने का आग्रह करता हूं। पहला 'एथिक्स फॉर द न्यू मिलेनियम' है, जो 1999 में नई सहस्राब्दी शुरू होने के समय आई थी। दूसरी पुस्तक 'बियॉन्ड रिलिजनः एथिक्स फॉर ए होल वर्ल्ड' है, जो पहली पुस्तक की ही अगली कड़ी है। इन दो पुस्तकों में मानवीय मूल्यों को बढ़ावा देने के अपने कार्यों की सोच के बारे में परम पावन ने विस्तृत और व्यवस्थित तरीके से व्यक्त किया हैं।

नैतिकता के पंथनिरपेक्ष मूल्यों के द्वारा साझा मानवीय मूल्यों को बढ़ावा देने के क्रम में परम पावन जी ने वास्तव में भाषा, वैचारिकता और मानव मूल्यों के बारे में एक ऐसा प्रवचन विकसित करने के लिए कठोर प्रयास किया है जो वास्तव में सार्वभौमिक हो। इसमें करुणा, दया, उदारता, क्षमा और समझ जैसे मूल्यों का पुनर्मूल्यांकन शामिल है- जो परंपरागत रूप से धार्मिक ढांचे और भाषा में अंतर्निहित होते हैं- और इसे एक ऐसे स्तर पर लाते हैं जहां उन्हें अधिक सार्वभौमिक और पंथनिरपेक्ष शब्दों में पिरोया जा सकता है। इस महत्वपूर्ण बदलाव को इंगित करने के लिए परम पावन ने 'पंथनिरपेक्ष नैतिकता' वाक्यांश का उपयोग करना शुरू किया है। अब, यहां 'पंथनिरपेक्ष' शब्द को धर्म के किसी प्रकार के विरोध में नहीं समझना चाहिए। इसे धर्म के विभाजन से परे सोच करके, एक ऐसे परिप्रेक्ष्य में समझना चाहिए जो सार्वभौमिक हो। इसलिए, यहां 'पंथनिरपेक्ष' शब्द का अर्थ नैतिकता के प्रति इस दृष्टिकोण की ऐसी रूपरेखा है, जो किसी विशेष धार्मिक सिद्धांत या धार्मिक विश्वास पर निर्भर नहीं है। इसके बजाय इसका पूरा तंत्र ऐसे साझा मानवीय

स्थिति और मूल्यों पर आधारित है जो बुनियादी मानव कल्याण को बढ़ावा देते हैं।

परम पावन नैतिकता के प्रति पंथनिरपेक्ष दृष्टिकोण के माध्यम से साझा मानवीय मूल्यों को कैसे बढ़ावा देते हैं? परम पावन नैतिकता के इस तरह के सार्वभौमिक दृष्टिकोण को बढ़ावा देने के लिए तीन मुख्य स्त्रोतों का उपयोग करते हैं। इनमें पहला इस बात को उजागर करता है कि हममें से प्रत्येक को अपने सामान्य मानवीय अनुभव को गहराई से देखने की क्षमता है। हमारी सामान्य मानव स्थिति की मूल वास्तविकता यह है कि हममें से कोई भी दुख नहीं चाहता है। प्रत्येक व्यक्ति सुख चाहता है। यह एक मूलभूत प्रश्न है कि हम मनुष्य के रूप में कौन हैं। वास्तव में, कोई तर्क दे सकता है कि यह हमारे सभी कार्यों का मूल आधार है, जिनमें से कुछ अच्छे हैं और कुछ इतने अच्छे नहीं हैं। दूसरे शब्दों में, प्रत्येक गतिविधि जिसमें हम शामिल होते हैं, वह किसी न किसी तरह से हमारी खुशी की तलाश और दुख से बचने की हमारी अंतर्निहित महत्वाकांक्षा से उत्पन्न होती है। हम अपने निजी अनुभव से जानते हैं कि जब कोई हमारे साथ कुछ बुरा करता है तो हमें अच्छा नहीं लगता। हम आहत, घायल और क्षति महसूस करते हैं। इसी तरह, जब कोई हमारे लिए कुछ अच्छा करता है, हम खुशी महसूस करते हैं और हम दूसरों की दयालुता की सराहना करते हैं। साथ ही, जब हम दूसरों के लिए कुछ अच्छा करते होते हैं तो वे इसका लाभ उठाते हैं और इसकी सराहना करते हैं। ये सब हमारे साझा मानवीय अनुभव का हिस्सा हैं। यहां पर वास्तव में आप किस धर्म के अनुयायी हैं और किसके नहीं हैं, इस धर्म या उस धर्म के आस्तिक है या नही, इस जातीयता या उस जातीयता से है या नही, आप इस भाषा या उस भाषा बोलते है या नही का कोई अंतर नहीं पड़ता हैं। इस मूलभूत मानवीय स्तर पर इस तरह के अंतर के मामले मायने नहीं रखते हैं।

इसलिए, मानवीय मूल्यों को बढ़ावा देते समय परम पावन एक प्रमुख मुद्दा को उठाते हैं। वह हममें से प्रत्येक व्यक्ति को साझा मानवीय अनुभव के रूप में अपने स्वयं के अनुभव को पहचानने और उसकी सराहना करने के लिए जोर देते हैं। ये अनुभव हम व्यक्तियों के लिए अद्वितीय नहीं हैं। इन सभी सामान्य मानवीय अनुभव को हमें इस धरती पर हर एक इंसान के साथ साझा करना चाहिए।

नैतिकता के प्रति अपने धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण में परम पावन जिस दूसरे स्त्रोत का उपयोग करते हैं, वह हमारी प्रकृत्ति से प्राप्त व्यावहारिक बुद्धिमत्ता है। एक मनुष्य के रूप में, हममें से प्रत्येक व्यक्ति के पास व्यावहारिक बुद्धिमत्ता होती है। इससे हम अपने लिए क्या अच्छा है और क्या बुरा है, उसके बीच का अंतर करने की क्षमता रखते है। इसलिए, व्यावहारिक बुद्धिमत्ता की इस प्राकृतिक क्षमता को विकसित करके, अपनी समझ का विस्तार कर इसे समृद्ध करके, हम इस बात का आकलन कर सकेंगे कि कैसे साझा मानवीय मूल्य व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों तरह से भलाई को बढ़ावा देते हैं। इसलिए, व्यावहारिक बुद्धिमत्ता का उपयोग, हमारी साझा मानवीय

स्थिति की गहरी संवेदना में निहित नैतिक विवेक को विकसित करने का एक महत्वपूर्ण पहलू है।

अंत में, परम पावन पंथनिरपेक्ष नैतिक दृष्टिकोण के माध्यम से मानवीय मूल्यों को बढ़ावा देने की अपनी मूल स्थापना- प्रमुख वैज्ञानिक खोजों- का आह्वान करते हैं। आज विज्ञान का बड़े पैमाने पर उपयोग मानव कल्याण या मनुष्य की वास्तविक खुशी, भावनाओं आदि की खोज में हो रहा है। इन नए वैज्ञानिक अध्ययनों से यह पता चलता है कि कैसे करुणा, दया और अन्य प्रमुख गुण, जिन्हें हम मौलिक गुण के तौर पर महत्व देते हैं, वह वास्तव में हमारे लिए कितने अच्छे हैं। न केवल मनोवैज्ञानिक भावनात्मकता के स्तर पर, बल्कि शारीरिक स्वास्थ्य के तौर पर भी। ये गुण हमारे दिल की सेहत, रक्तचाप, प्रतिरक्षा प्रणाली आदि के लिए अहम साबित हुए हैं। विशेष रूप से, 'कल्याणकारी विज्ञान' के रूप में प्रचलित विज्ञान का क्षेत्र लगातार यह दिखाता है कि नैतिक रूप से जीना वास्तव में अच्छे स्वास्थ्य और खुशहाल जीवन जीने का बेहतर तरीका है। परम पावन इन वैज्ञानिक अंतर्दृष्टि पर जोर देते हैं और हमारे साझा मानवीय मूल्यों को अपनाने और उनके द्वारा अपना जीवन जीने के लाभ की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं। इस तरह, ये तीन प्रमुख स्त्रोत परम पावन को मानवीय मूल्यों को बढ़ावा देते समय ऐसे सिद्धांत और जीवन तंत्र के रूप में आकर्षित करते हैं जो सार्वभौमिक है और सार्वभौमिक साझा मानव मूल्यों में निहित है।

परम पावन दलाई लामा द्वारा मानवीय मूल्यों और नैतिकता को बढ़ावा देने की पंथनिरपेक्ष सार्वभौमिक दृष्टिकोण के महत्व को कम मूल्यवान नहीं समझा जा सकता है। ऐतिहासिक रूप से, जब एक अच्छा जीवन जीना, नैतिक अनुशासन और नैतिकता के साथ जीवन जीने की सलाह की बात आती है तब पूर्व, पश्चिम, उत्तर या दक्षिण हर वर्ग के समाज आमतौर पर धर्म पर निर्भर करते रहें हैं। अधिकांश मानव इतिहास में, धार्मिक विश्वास और धार्मिक आस्था ही नैतिकता और आवश्यक गुणों को बढ़ावा देने के आधार रहे हैं। उदाहरण के लिए बौद्ध धर्म में नैतिकता पर प्रवचन को पुनर्जन्म, कर्म जैसी अवधारणाओं पर आधारित किया है और बताया गया है कि कैसे अच्छे कर्म बेहतर पुनर्जन्म की ओर ले जाते हैं तथा कैसे बुरे कर्म दुर्भाग्यपूर्ण पुनर्जन्म की ओर ले जाते हैं। ईसाई धर्म और हिंदू धर्म जैसे आस्तिक धर्मों में अंतिम सत्ता के रूप में ईश्वर को माना जाता है। यह विश्वास है कि अच्छे और बुरे कर्म का नियंता ईश्वर हैं। ऐसे कानूनों का उल्लंघन करना एक अधर्मी कार्य है। नैतिकता के लिए एक पंथनिरपेक्ष सार्वभौमिक दृष्टिकोण की चुनौती यह है कि हम अच्छे और बुरे के बीच अंतर कैसे करते हैं? दूसरे शब्दों में, यदि हम ईश्वर, कर्म और पुनर्जन्म जैसी धार्मिक अवधारणाओं का पालन नहीं करते हैं, तो हम अपनी नैतिकता को किस आधार पर रखते हैं? परम पावन के नैतिकता के प्रति पंथनिरपेक्ष दृष्टिकोण को मज़बूती से बढ़ावा देना एक चुनौती है। एक विश्व धर्मगुरु की ओर से की जाने वाली यह पहल सभी व्यक्तियों के लिए और ऐतिहासिक रूप से महत्वपूर्ण हैं। यद्यपि, मानव चिंतन के लंबे इतिहास में, धर्म से स्वतंत्र नैतिकता को जमीन पर उतारने का प्रयास किया गया है- प्राचीन भारत में भौतिकवादी और पश्चिम

में पंथनिरपेक्ष मानवतावादी इसमें अग्रणी रहे हैं। लेकिन मेरी राय में, परम पावन के पंथनिरपेक्ष नैतिक दृष्टिकोण की प्रतिभा के समान दूसरा कोई नहीं है। परम पावन विज्ञान, सामान्य ज्ञान और साझा मानव अनुभव को मिलाकर सभी मानवीय प्रकृति के दृष्टिकोण पर आधारित सहानुभूति और करुणा की भावना को उसके मूल रूप में शक्तिशाली रूप से व्यक्त करते हुए हमारे गहरे सामाजिक स्वभाव को व्यक्त करते हैं। परम पावन पूरी तरह से उपन्यास करने और सोचने का सम्मोहक तरीका विकसित करने में सफल हुए हैं। नैतिकता के बारे में बात करना और समझना वास्तव में सार्वभौमिक है और अपने प्रवचन और ढांचे में समृद्ध है। इसके हिस्से के रूप में, नैतिकता पर इस तरह के प्रवचन को विकसित करने के लिए बुनियादी मानव प्रकृति की हमारी अवधारणा के भीतर सहानुभूति और करुणा के स्थान की एक मजबूत समझ है।

ऐतिहासिक रूप से करुणा भी नैतिकता की तरह धार्मिक शिक्षाओं में अंतर्निहित रही है। उदाहरण के लिए, बौद्ध धर्म में हमारे पास जातक कथाएँ हैं। इनमें बुद्ध के पिछले जीवन की कहानियाँ हैं जिसमें वे अद्भुत परोपकारी कार्यों में लगे रहते हैं। इन कथाओं से, शिष्य भगवान बुद्ध के पिछले जीवन की प्रेरक कहानियों का उदाहरण लेते हुए करुणा और अन्य संबंधित गुणों जैसे दूसरों के प्रति सेवा करने के लिए समर्पण के मूल्य को सीखते हैं। ईसाई धर्म में, सूली पर जीसस की कहानी करुणा के बारे एक प्रभावशाली शिक्षा है। इसमें इस बात की सीख दी गई है कि कैसे जीसस ने दुनिया की पीड़ा को अपने ऊपर लिया है। इसलिए हम यह देख सकते हैं कि कैसे दुनिया के महान धर्मों के दिल में करूणा की नैतिक शिक्षाएं निहित है। परम पावन का कहना है कि, वास्तव में विश्व के महान धर्म प्रेम, करुणा और दया के संदेश को प्रभावशाली रूप से प्रोत्साहित करता है और ये सभी गुण विभिन्न धर्मों की महत्वपूर्ण शिक्षाएँ हैं। हालांकि, परम पावन अपने आप में यह मानते है कि करुणा और दयालुता धार्मिक मूल्य नहीं है। वे बुनियादी मानवीय मूल्य हैं जो हमें अपनी गहरी सामाजिक प्रकृति और मानव समाज के सदस्य के रूप में हमें विरासत में मिले हैं। इसलिए, कुछ अर्थों में, परम पावन नैतिकता के इस पंथनिरपेक्ष दृष्टिकोण के माध्यम से जो कह रहे हैं उसे दार्शनिक 'नैतिकता का प्रकृतिकरण' कहते हैं। इस तरह की प्राकृतिक परियोजना का सबसे महत्वपूर्ण बिंदु हमारे अपने जैविक और सामाजिक प्रकृति में नैतिकता को स्थापित करना है।

परम पावन लगातार हमें यह याद दिलाते हैं कि सामाजिक प्राणियों के रूप में हमारा अस्तित्व और खुशी दूसरों, विशेषकर हमारे समुदाय के सदस्यों पर बहुत अधिक निर्भर करती है। हार्वर्ड में एक अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि कैसे शारीरिक स्तर पर भी यानि हमारी जीजिविषा और खुशी काफी हद तक दूसरों के साथ हमारे संबंधों पर निर्भर करती है। 'हार्वर्ड एडल्ट डेवलपमेंट स्टडी' का यह अध्ययन केवल पुरुषों पर ही किया गया था ताकि इस विशिष्ट अध्ययन में लैंगिक भेदभाव की छाया न पड़ सके। लंबे समय तक चले इस अध्ययन में हजारों

पुरुषों को शामिल किया गया था। ये पुरुष अपनी उम्र के पाचवें दशक में चल रहे थे। उनसे उनकी स्वास्थ्य स्थिति, सामाजिक-आर्थिक स्थिति, रिश्ते की स्थिति इत्यादि पर कई तरह के प्रश्नों की एक पूरी शृंखला पूछी गई थी। तीस साल बाद, शोधकर्ता उन्हीं विषयों पर वापस गए और कई चीजों की फिर से जांच की। उनका मकसद यह देखना था कि उनमें से कितने अभी भी जीवित हैं। उनमें से जो जीवित हैं, उनसे वे यह देखना चाहते थे कि वे किस स्तर की खुशी प्राप्त कर रहें हैं। उन्होंने जो पाया वह उल्लेखनीय था। जब लंबी उम्र और भविष्य में खुशी की बात आती है तो रिश्तों की गुणवत्ता से बेहतर कुछ नहीं होता है। आपकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति इसे प्रभावित नहीं करती है। तीस साल पहले की आपकी प्रारंभिक स्वास्थ्य स्थिति भी इसे मात नहीं देती है। इसमें जो बातें मायने रखती हैं, वह यह थी कि ये लोग अपनी उम्र के पांचवें दशक में संतोषजनक मानवीय संबंधों में जी रहे थे। वे सबसे खुश थे, वे सबसे लंबे समय तक जीवित थे। इसलिए शोधकर्ता इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि दीर्घायु होने और प्रसन्न रहने के लिए मानवीय संबंधों की गुणवत्ता सबसे ज्यादा मायने रखता है। ज़ाहिर है कि स्वस्थ मानवीय रिश्ते के मूल में करुणा और दया रहती है। दया के बिना, प्रेम के बिना, स्नेह के बिना और संबंधों की भावना के बिना, गुणवत्तापूर्ण मानवीय संबंध प्राप्त नहीं किया जा सकता है। करुणा और दया हमारे खुश रहने, आनंद पाने और वास्तविक तृप्ति पाने का मूल आधार है। इस प्रकार परम पावन दलाई लामा के करुणा को बढ़ावा देने के प्रयासों से एक नया क्षेत्र शुरू हुआ जिसे ‘करुणा का विज्ञान’ कहा जाता है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि 2016 में ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस ने ‘द हैंडबुक ऑफ़ कम्पैशन साइंस’ नामक एक संपूर्ण खंड प्रकाशित करने की आवश्यकता महसूस की थी। परम पावन दलाई लामा की करुणा और नैतिकता की पंथनिरपेक्ष सार्वभौमिक भाषा तथा ढांचे की वकालत करने की बात को बीच में लाए बिना, मैं यह स्पष्ट रूप से कह सकता हूं कि ऐसा ऐतिहासिक प्रकाशन आज तक नहीं हुआ होगा।

आज, करुणा पर चर्चा न केवल संसारिक और सार्वभौमिक हो गई है, बल्कि वास्तव में मानसिक प्रशिक्षण के माध्यम से करुणा उत्पन्न करने के लिए पंथनिरपेक्ष दृष्टिकोण भी व्यापक हो रहा है। जब मैंने स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी के मेडिकल स्कूल में न्यूरोसाइंस इंस्टीट्यूट में कुछ वर्षों तक काम किया तब मुझे अन्य सहयोगियों की मदद से एक प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करने का अवसर और सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इस कार्यक्रम को सीसीटी अर्थात ‘कम्पेशन कल्टीवेशन ट्रेनिंग’ का नाम दिया गया था। यह आठ सप्ताह का कार्यक्रम था, जहां परम पावन की ‘एथिक्स फॉर द न्यू मिलेनियम’ के साथ-साथ तिब्बती लोजोंग अर्थात मन के प्रशिक्षण की परंपरा की शिक्षाओं और चिंतनशील प्रथाओं पर ध्यान केंद्रित किया गया था। सीसीटी के निर्माण के बारह वर्षों बाद शोधकर्ताओं द्वारा सीसीटी के अध्ययन और कार्यक्रम के प्रभावों को लेकर कई शोध पत्र प्रकाशित किए गए हैं। दुनिया भर में लगभग तीन सौ प्रमाणित प्रशिक्षकों के साथ, सीसीटी आज दुनिया

के कई हिस्सों में व्यापक रूप से उपलब्ध है। करुणा संस्थान के माध्यम से, जिसका मैं सह-संस्थापक हूं, आज सीसीटी को स्वास्थ्य सेवाएं, शिक्षा और विधि प्रवर्तन जैसे प्रमुख व्यवसायों में अनुकूलन करके लाया जा रहा है। करुणा संस्थान कैलिफोर्निया में स्थित है। आज के समय में संस्थान का अधिकांश कार्य कैलिफोर्निया के प्रमुख क्षेत्रों में करुणा आधारित कार्यक्रमों को लेकर किया जा रहा है। संक्षेप में कहे तो आज न केवल करुणा का एक मजबूत विज्ञान है बल्कि करुणा प्रशिक्षण का प्रसार भी बढ़ रहा है, जिनमें से लगभग सभी किसी न किसी तरह से परम पावन दलाई लामा की शिक्षाओं से प्रेरित हैं। जैसा कि तिब्बती कहावत है, 'शीतल नदियों का स्त्रोत बर्फीले पहाड़ों में पाया जाता है उसी प्रकार शुद्ध धर्म शिक्षाओं का स्त्रोत भगवान बुद्ध में पाया जाता है'। इसी तरह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से वर्तमान विज्ञान की उत्पत्ति करुणा के साथ-साथ पंथनिरपेक्ष करुणा प्रशिक्षण परम पावन दलाई लामा की शिक्षाओं और अंतर्दृष्टि से पाया जा सकता है।

एक हद तक, आज के सुख या कल्याण के विज्ञान के बारे में भी यही कहा जा सकता है। परम पावन वास्तविक सुख के स्त्रोत को अपने भीतर ही होने की बात करते हैं न कि बाहरी सुख को सुख कहते हैं। परम पावन द्वारा अधिक भावनात्मक जागरुकता पैदा करने का आह्वान और अपने स्वयं के मानसिक कल्याण के लिए मन-आधारित दृष्टिकोण को माइंडफुलनेस के माध्यम से बढ़ावा देना, दयालुता के लिए अपनी क्षमता से जुड़ना और स्व-नियमन कौशल का अधिग्रहण-निस्संदेह आज के कल्याणकारी विज्ञान और लचीलापन की नींव है।

इसलिए परम पावन दलाई लामा ने अब तक जितने भी महान योगदान दिए हैं और जो अब भी दे रहे हैं, मुझे विश्वास है कि वह पंथनिरपेक्ष नैतिकता, मौलिक मानवीय मूल्यों को बढ़ावा देने के लिए धर्म से स्वतंत्र दृष्टिकोण को अपनाने और इसकी हमारे साझा मानवीय अनुभव, सामान्य ज्ञान और वैज्ञानिक निष्कर्षों की गहन समझ से जुड़े होने को बढ़ावा देने के लिए ही होगा, जो इतिहास में सबसे प्रभावशाली सिद्ध होगी। जैसा कि पहले उल्लेख किया है, इस काम का एक महत्वपूर्ण हिस्सा मानवता की एकता की मौलिक धारणा है। इसे कुछ विचारक 'सामान्य मानवता' या 'साझा मानवता' के समान मानते हैं। सामान्य मानवता के माध्यम से दूसरों के साथ जुड़ने में सक्षम होने के लिए किसी भी व्यक्ति से कम से कम प्रारंभिक चरण में मौलिक मानवीय स्तर पर आपके साझा मानव अनुभव को पहचानने में सक्षम होना आवश्यक है। यह दूसरे व्यक्ति से संबंधित होने की हमारी क्षमता को संदर्भित करता है, बस इस विचार के साथ कि मेरे सामने यह व्यक्ति भी खुश रहना चाहता है और दुख नहीं चाहता है। जब परम पावन दलाई लामा 'सात अरब मनुष्यों की एकता' की बात कर रहे हैं, तब यह वाक्यांश 'बिल्कुल मेरे जैसा' वास्तव में उस भावना को दर्शाता है, जिसका परम पावन उल्लेख कर रहे हैं। मनुष्य की एकता के विचार के साथ, परम पावन के मन में कोई रहस्यमयी या गूढ़ बात नहीं है। वह हमसे जो पूछ रहे हैं, वह बस हमारे

दिमाग के अंदर से सोचने और अपने आप को देखने के लिए है और खुद से पूछने के लिए है कि, 'ऐसा क्या है जो हमें खुश करता है, हमें दुख देता है, क्या चीज हमें उदास करता है। हम जो सीखते हैं उसे आधार के रूप में उपयोग करे और जिससे हम फिर दूसरों से जुड़ सकते हैं। इस तरह से हम दूसरों के साथ बुनियादी मानवीय स्तर पर जुड़ सकते है। उस स्तर पर, हमारे मतभेद कोई मायने नहीं रखते। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप सामने वाले को जानते हैं या नहीं; वे आपकी भाषा बोलते हैं या नहीं; वे एक ही जनजाति के हैं या नहीं; या वे समान धार्मिक अस्थाओं से जुड़ते हैं या नहीं। इनमें से कोई भी अंतर मायने नहीं रखता। हालांकि यह सभी अंतर महत्वपूर्ण हैं या फिर गौण हो जाते हैं। परम पावन हमें यह याद दिला रहे हैं कि एक मनुष्य के रूप में हमारे पास यह क्षमता है कि हम बुनियादी स्तर पर अन्य मनुष्यों के साथ जुड़ने और संबंध बनाने में सक्षम हैं। दुनिया में हमारे पास अनेक तरह के मतभेद हो सकते हैं लेकिन अगर हम यह सोच रखते हैं कि हममें से प्रत्येक व्यक्ति मौलिक स्तर के मानव अनुभव तक पहुंचने की क्षमता रखता है तथा हम पहले चरण से ही हमारे सामने दूसरे व्यक्ति के साथ जुड़ने और देखने की साझा मानवीय वास्तिविकता का दृष्टिकोण रखते हैं।

परम पावन का यह मानना है कि मानवता की एकता की अवधारणा इक्कीसवीं सदी के हमारे वैश्वीकृत और गहरी परस्पर जुड़ी हुई दुनिया के लिए अत्यंत आवश्यक है। क्योंकि आज की ज्यादातर चुनौतियों, जिसका हम सामना कर रहे हैं- जैसे जलवायु संकट और बढ़ती अर्थिक असमानताओं के खिलाफ सामूहिक प्रतिक्रिया की अत्यंत आवयकता है। इसके अलावा, चाहे हम इसे पसंद करें या ना करें, जैसा कि परम पावन हमेशा यह याद दिलाते हैं कि आज हम एक ऐसी वैश्वीकृत और परस्पर जुड़ी हुई दुनिया में रह रहे हैं कि विविधता और मतभेद हमारी रोजमर्रा की वास्तविकता का हिस्सा हैं। हम यह उम्मीद नहीं कर सकते हैं कि हम एक ऐसी दुनिया में रह रहे हैं जहां हर कोई एक जैसा दिखता हो, जहां हर कोई एक ही धार्मिक विश्वास को मानते हों और एक ही मातृभाषा बोलते हों।

सचमुच, हम एक बहु-जातीय, बहु-धार्मिक, बहुभाषी और बहुसांस्कृतिक दुनिया में रह रहे हैं। ऐसी दुनिया में, जहां हमें व्यक्तिगत रूप से परिभाषित करना है और मानवीय स्तर पर दूसरों के साथ जुड़ा हुआ महसूस करने की विशिष्टता से परे जाने की क्षमता की आवश्यकता है। अवश्य, ये भिन्नता जो हमें एक विशेष समुदाय के सदस्य के तौर परिभाषित करते हैं, बहुत महत्वपूर्ण हैं। लेकिन इन भिन्नताओं को वास्तव में एक बड़े 'हम' के रूप में सामूहिक रूप से सोचने की अपनी क्षमता को बाधित नहीं करना चाहिए। इतने बड़े 'हम' को अपनाने से, हम मानवता के रूप में वास्तव में अपने समय की चुनौतियों का सामना कर सकते हैं। मानवता की एकता के इस विचार को आत्मसात करते हुए परम पावन हमें और दुनिया की मानवीय चेतना में - अहंकार-केंद्रित से एक समावेशी समग्र दृष्टिकोण की ओर बढ़ते हुए मौलिक बदलाव करने का आह्वान कर रहे हैं।

परम पावन का मानना है कि चेतना में इस तरह के बदलाव के बिना इक्कीसवीं सदी की परस्पर जुड़ी हुई वैश्वीकृत दुनिया में रहना एक वास्तविक चुनौती बन जाएगा और वास्तव में भय और चिंता का एक स्त्रोत बन जाएगा। दूसरी ओर आज की दुनिया और इसकी चुनौतियां हमें मानवता को अपनी चेतना को बदलने और एक अलग तरह की दुनिया की कल्पना करने का अवसर प्रदान करती है, जहां लोग वास्तव में एक-दूसरे की परवाह करते हैं, जहां लोग अपनी सीमाओं के पार भी लोगों की परवाह करते हैं। मानवता की एकता की इस धारणा को अपनाना परम पावन द्वारा पंथनिरपेक्ष नैतिकता को बढ़ावा देने का एक महत्वपूर्ण पहलू है।

मैं परम पावन के पंथनिरपेक्ष दृष्टिकोण के माध्यम से साझा मानवीय मूल्यों के प्रचार पर अपने विचार को समाप्त करना चाहता हूं जो कि उनकी चार प्रमुख प्रतिबद्धताओं में से एक है। इससे पूर्व में मैं, परम पावन दलाई लामा द्वारा दिए गए एक पाठ को श्रोताओं और दर्शकों के बीच रखना चाहूंगा। यह पाठ परम पावन की पुस्तक, 'टुवड्र्स ए ट्रू किन्शिप ऑफ़ फेथ्स' से है और पुस्तक के अंत में शामिल किया गया है।

'मैं धार्मिक और नास्तिक- सभी लोगों से यह अपील करता हूं कि हमेशा सामान्य मानवता को गले लगाओ, जो हम सभी के दिल में है। हमेशा अपने मानव परिवार की एकता की पुष्टि करें। अपने दिल को करुणा के बाम से नरम होने दें, अपनी और दूसरों की जरुरतों और आकांक्षाओं पर गहराई से प्रतिबिंबित करें। दूसरों के भिन्न विचार उनकी शांति, खुशी और कल्याण की इच्छा को अपने रास्ते में न आने दें। जब हम किसी अन्य व्यक्ति को देखें तो हम अपनी बुनियादी आत्मीयता को महसूस करें। इस जगह पर कोई अजनबी नहीं है- जीवन के सफर में सभी हमारे भाई-बहन हैं।'

धन्यवाद।

वेन कर्मा गेलेक युथोक

कलोन, धर्म एवं संस्कृति विभाग, केंद्रीय तिब्बती प्रशासन

ताशी देलेक। आज मुझे परम पावन चौहदवें दलाई लामा जी की जीवन की चार प्रतिबद्धताओं में से दूसरी प्रतिबद्धता पर बोलने के लिए मुख्य वक्ता के तौर पर आमंत्रित किया गया है। इससे मैं खुद को सम्मानित महसूस करता हूं। ये प्रतिबद्धताएं संपूर्ण मानवता और विश्व की भलाई के लिए है।

मैं केंद्रीय तिब्बती प्रशासन के सूचना एवं अंतरराष्ट्रीय संबंध विभाग (डीआईआईआर) को बधाई देना चाहता हूं, जिन्होंने वर्ष 2020-2021 को परम पावन दलाई लामा जी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए एक विशेष बातचीत शृंखला का आयोजन किया है। यह वर्ष 'परम पावन दलाई लामा जी की करुणा को याद करने तथा उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करने' के वर्ष के रूप में मनाया जा रहा है।

महान गुरुओं या आचार्यों की करुणा को याद रखना और उनके प्रति कृतज्ञ रहना न केवल एक बुनियादी मानवीय चरित्र है, बल्कि दुनिया की सभी प्रमुख आध्यात्मिक परंपराओं की एक सामान्य बुनियादी शिक्षा भी है। सामान्य रूप से बौद्ध शिक्षाओं और विशेष रूप से तिब्बती बौद्ध परंपराओं के अनुसार, व्यक्ति के आध्यात्मिक गुरु और अन्य साथियों की करुणा को याद रखने के लिए प्रेमपूर्ण करुणा (मैत्री), महान करुणा (महाकरुणा), और चित्त का ज्ञान (बोधिसत्त्व) सामूहिक रूप से पूर्ण ज्ञान या ज्ञान प्राप्ति के अंतिम आध्यात्मिक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए आवश्यक आधार होता है।

यहां, यह बताना आवश्यक हो जाता है कि परम पावन चौदहवें दलाई लामा, जिन्हें उनके अनुयायी मानव रूप में महान आर्य अवलोकितेश्वर मानते हैं, जैसे प्रबुद्ध आध्यात्मिक गुरुओं की करुणा को याद करने और उस करुणा का प्रतिदान करने का वास्तव में क्या अर्थ हैं। ऐसे असाधारण प्रकृति के आचार्य होने के कारण उनकी करुणा के अर्थ और उस करुणा का प्रतिदान, हमारी सामान्य अवधारणा से बहुत आगे निकल जाता है। वास्तव में, वे बस अकल्पनीय हैं। जब कोई करुणा सांसारिक अवधारणा महानता के साथ-साथ पवित्रता से परे हो जाती है, तो वे वास्तव में अकल्पनीय और अप्रतिदेय हो जाते हैं। यही कारण है कि पूर्ण आध्यात्मिक गुरुओं (गुरु या कल्याण मित्र) की करुणा के बारे में बात करते समय हमें कई शास्त्रीय बौद्ध ग्रंथों में निम्नलिखित उदाहरण मिलते हैं।

'यदि तीनों लोकों के पूरे स्थान को सप्त रत्नों से भर कर दे दें, तब भी यह गुरु द्वारा बरसाई गई करुणा का एक हिस्सा भी चुकाने के लिए पर्याप्त नहीं होगा।'

जब हम आध्यात्मिक दुनिया के दायरे में कुछ वास्तविकताओं के बारे में सोचते हैं, तो कई अकल्पनीय घटनाओं का होना सामान्य बात है। हालांकि, एक रहस्य मौजूद है जो करुणा की बराबरी एक हद तक कर सकता है। यह कोई छिपा हुआ या उच्च रहस्य नहीं, बल्कि महान गुरु की मुख्य दीक्षाओं का शत-प्रतिशत विश्वास और निष्ठा के साथ मन-वचन-कर्म से पालन करना है। दूसरे शब्दों में, महान आध्यात्मिक गुरुओं द्वारा अपने ऊपर बरसाई गई करुणा के लिए सबसे अच्छी गुरुदक्षिणा कोई भौतिक उपहार या उनकी प्रशंसा में पुस्तकें लिखना नहीं है, बल्कि खुद को उन महान शिक्षाओं का एक जीवंत उदाहरण और माध्यम बनाना है।

यहां कुछ पारंपरिक स्त्रोतों का जिक्र करने के लिए कृपया मेरे साथ बने रहें। कोई फर्क नहीं पड़ता कि यह कैसा लगता है पर मुझे इसकी आवश्यकता महसूस हुई। वास्तव में, सामान्य रूप से मानव जाति और विशेष रूप से समकालीन मानव जाति के साथ एक बुनियादी समस्या यह है कि उसका सबसे मजबूत स्वभाव यह रहा है कि जो कुछ भी भौतिक है उस पर विश्वास करना और उसके पीछे भागो।

परम पावन दलाई लामा ने अनेक अवसरों पर कहा है कि सबसे अच्छा उपहार जो कोई उन्हें दे सकता है वह यह होगा कि दया, करुणा और परोपकारिता का अपने जीवन में पालन करने के माध्यम से एक स्नेही व्यक्ति बनकर स्वयं का भला करें। परम पावन दलाई लामा द्वारा दी गई सभी शिक्षाओं का अध्ययन और उनका जीवन में पालन करना एक जीवनकाल में किसी भी व्यक्ति के लिए संभव नहीं हो सकता है, लेकिन इसे चिंता और निराशा का कारण बनने देने की जरूरत नहीं है। कुछ महत्वपूर्ण शिक्षाएं हैं जिसे कि हर व्यक्ति समझ सके और अपने जीवन में उसे लागू कर सके। कुछ बुनियादी शिक्षाओं को ध्यान से समझना और अडिग विश्वास और प्रतिबद्धता के साथ उनकी साधना में लगन से संलग्न होना अन्य उच्च शिक्षाओं की सफल समझ, उसे उसकी साधना की ओर ले जाएगा।

लगभग बीस साल पहले, जब परम पावन दलाई लामा ने तिब्बती लोगों और केंद्रीय तिब्बती प्रशासन के राजनीतिक और प्रशासनिक नेतृत्व से अपनी अर्ध-सेवानिवृत्ति के बारे में बात करना शुरू किया, तब उन्होंने वैश्विक समुदाय के कल्याण हेतु अपने जीवन के तीन प्रमुख प्रतिबद्धताओं के बारे में सार्वजनिक रूप से बात करना शुरू किया था- उनकी तीन प्रतिबद्धताएं हैं:

1) मानव समुदाय के सदस्य के रूप में अपनी क्षमता के अनुसार, मानवीय मूल्यों के संवर्धन के लिए काम करना।
2) एक धार्मिक व्यक्ति और गुरु के रूप में अपनी क्षमता के अनुसार, धार्मिक सद्भाव को बढ़ावा देने के लिए काम करना। और
3) एक तिब्बती होने के नाते तिब्बती संस्कृति, भाषा और पर्यावरण के संरक्षण पर काम करना।

लगभग दस साल बाद, परम पावन ने चौथी प्रतिबद्धता जोड़ी और इसके बारे में व्यापक रूप से और अक्सर चर्चा करना शुरू किया। चौथी प्रतिबद्धता नालंदा बौद्ध विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय ज्ञान और परंपराओं का पुनरुद्धार और उसके संवर्धन पर काम करना था। इस प्रकार, हाल ही में हम इन चार प्रतिबद्धताओं को परम पावन चौहदवें दलाई लामा की जीवन की चार मुख्य प्रतिबद्धताओं के रूप में गिनाते हैं।

यहां यह बताना जरूरी है कि वास्तव में परम पावन दलाई लामा ने उनकी जीवन की चार प्रतिबद्धताओं पर निर्वासन में आने के बाद, विशेष रूप से 1970 के बाद अथक रूप से कार्य किया है। लेकिन लगभग बीस साल पहले उन्होंने इन प्रतिबद्धताओं को इस कारण से व्यक्तिगत स्तर पर नहीं रखा था, क्योंकि वे सर्वोच्च राजनीतिक नेतृत्व होने के साथ-साथ तिब्बती लोगों और केंद्रीय तिब्बती प्रशासन के आध्यात्मिक प्रमुख होने के साथ जुड़े हुए थे। यहां ध्यान देने की बात यह है कि परम पावन दलाई लामा ने निर्वाचित नेतृत्व को अपनी राजनीतिक और प्रशासनिक उत्तरदायित्व सौंपने के बाद भी उपरोक्त चार प्रतिबद्धताओं पर अपने प्रयासों को जारी रखने के लिए खुद को समर्पित कर रखा है।

परम पावन दलाई लामा की चार प्रतिबद्धताओं में से इस वर्चुअल बातचीत शृंखला में, मुझे दूसरी प्रतिबद्धता 'धार्मिक सद्भाव को प्रोत्साहित करने' के विषय पर बोलने के लिए आमंत्रित किया गया है। सामान्य तौर पर धार्मिक सद्भाव का विषय बहुत गहरा और विशाल है और इस पर मुझे बोलने की कोई इच्छा नहीं है। जैसा कि मैं समझता हूं, इस बातचीत शृंखला का उद्देश्य परम पावन दलाई लामा की चार प्रतिबद्धताओं के मुख्य पहलुओं और विषयों को साझा तथा प्रकट करना है- न कि सामान्य रूप से उनकी प्रतिबद्धताओं के चार विषयों पर चर्चा करना। इसलिए मैं अपनी बात को अपनी समझ और ज्ञान के अनुसार धार्मिक सद्भाव पर परम पावन दलाई लामा के कुछ मुख्य विचारों और प्रयासों तक सीमित रखना चाहूंगा।

पृष्ठभूमि

जैसा कि हम सभी जानते हैं, सभी आध्यात्मिक परंपराओं का मुख्य उद्देश्य मानवता के कष्टों तथा समस्याओं को हल करना है। यह भी स्पष्ट है कि कई वैश्विक, राष्ट्रीय और क्षेत्रीय समस्याएं धार्मिक मुद्दों पर आधारित हैं। इस तरह सदियों से समस्याओं को हल करने की दिशा में सभी धर्मों और प्रतिष्ठित धार्मिक गुरुओं और संरक्षकों द्वारा गंभीर प्रयास किए गए हैं और उनका काफी हद तक सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। पिछले सभी प्रयासों के बावजूद, धार्मिक असामंजस्य की समस्याएं अभी भी मौजूद हैं और यह हमारे समय में चिंता का विषय हैं। इस संदर्भ में परम पावन दलाई लामा की धर्मों के साथ-साथ विभिन्न आध्यात्मिक परंपराओं के बीच धार्मिक सद्भाव को बढ़ावा देने की प्रतिबद्धता सामने आती है। मेरी जानकारी के अनुसार, परम पावन चौदहवें दलाई लामा की धार्मिक सद्भाव को बढ़ावा देने की प्रतिबद्धता पर कुछ मुख्य पहलू इस प्रकार हैं

1. धर्मों के बीच आपसी सम्मान को बढ़ावा देना

परम पावन दलाई लामा विभिन्न धर्मों और धार्मिक परंपराओं के बीच वास्तविक सम्मान और समझ को धार्मिक सद्भाव को बढ़ावा देने की नींव की रूप में देखते हैं। विभिन्न धर्मों और धार्मिक परंपराओं के बीच किसी भी प्रकार का औपचारिक संबंध बनाना और बनाए रखना बहुत ही प्रशंसनीय और महत्वपूर्ण रहा है। लेकिन परम पावन दलाई लामा की दृष्टि उस स्तर से बहुत आगे जाती है। जब तक सम्मान और विश्वास एक दृढ़ आधार पर आधारित न हो, तब तक अधिकांश लोगों के लिए दूसरे पक्ष के प्रति वास्तविक सम्मान और विश्वास विकसित करने की संभावना बहुत कम हो जाती है। इसलिए परम पावन दलाई लामा तीन प्रमुख आधारों पर चिंतन के माध्यम से सम्मान विकसित करने पर जोर देते हैं।

क) सबसे पहले, विश्व के सभी प्रमुख धर्मों की बुनियादी और मूल शिक्षाएं एकसमान हैं। उनमें प्रेम, दया, करुणा, सहिष्णुता, क्षमा, और सभी मौलिक नैतिक उपदेशों की शिक्षाएं शामिल हैं।

ख) सभी प्रमुख धर्म लाखों लोगों को लाभान्वित करते हैं और उनकी आध्यात्मिक जरूरतों को पूरा करते हैं। जिस प्रकार विभिन्न रोगों और रोगियों के लिए अलग-अलग औषधियां और उपचार आवश्यक हैं, उसी प्रकार भिन्न-भिन्न आध्यात्मिक योग्यताओं और मानसिक स्वभाव वाले व्यक्तियों के लिए भिन्न-भिन्न धर्म आवश्यक हैं।

ग) धर्मों के बीच दार्शनिक भिन्नता को समग्र रूप से आध्यात्मिक शिक्षाओं की समृद्धि के रूप में देखा जाना चाहिए। उन्हें संघर्ष और असामंजस्य के आधार पर नहीं देखना चाहिए। इस तरह के मतभेदों को समझने के अनेक कारण हैं। सबसे पहले, कुछ निश्चित प्रकृति या ज्ञान होते हैं, जिन्हें शब्दों द्वारा अच्छी तरह से या पूरी तरह से व्यक्त नहीं किया जा सकता है और उन्हें सैद्धांतिक विचारों द्वारा अनुभव किया जा सकता है। मूल विचार देने वाले आचार्यों को उसे अपने शब्दों में व्यक्त करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है और उनके अनुयायियों द्वारा इन शब्दों को अलग-अलग अर्थों में इस आधार से लिया जाता है, जिन्हे वह समझ सके। इसके कारण मतभेद उत्पन्न होता है। दूसरा, मूल गुरु सोच-समझकार एक ही विषय को अलग-अलग शिष्यों या शिष्यों के समूहों को उनकी आध्यात्मिक योग्यता और समझ के स्तर पर अलग-अलग पढ़ा सकते हैं। बौद्ध धर्म के संस्थापक भगवान बुद्ध को इस विचारधारा का अनुपालन किए जाने के तौर पर भी जाना जाता है, जिससे बाद में चार बौद्ध दार्शनिक परंपराओं का जन्म हुआ था। तीसरा, जिस प्रकार एक शब्द को अलग-अलग अर्थों में व्याख्या की जा सकती है, उसी तरह विभिन्न शब्दों को भी एक ही अर्थ में व्याख्या की जा सकती है। इसलिए कुछ भिन्नता केवल शब्द के हो सकते हैं, अर्थ के नहीं। चौथा, यदि हमें दार्शनिक विचारों के बीच की भिन्नता को जानना है, तो इस तरह की भिन्नता सभी धार्मिक परंपराओं की उप-विद्याओं में भी मौजूद हैं। इस प्रकार, दार्शनिक

भिन्नता से अंतर-धार्मिक या अंतर-धार्मिक समझ और मैत्री विकसित होने के दौरान धर्मों या धार्मिक परंपराओं की मौजूदगी बाधा उत्पन्न होने का कोई वैध कारण नहीं है।

2. अंतर-धार्मिक समझ का संवर्धन

परम पावन दलाई लामा मानते हैं कि विभिन्न आध्यात्मिक परंपराओं के बीच अंतर-धार्मिक सभाएं और सम्मेलन के माध्यम से धार्मिक सद्भाव विकसित किया जा सकता है और इस सद्भाव को और बढ़ाया जा सकता है। इसके अलावा परम पावन दलाई लामा धर्म और धार्मिक परम्पराएं को समझने एवं विश्वास विकसित करने के लिए उचित अध्ययन के द्वारा अन्य धर्मों के बुनियादी सिद्धांतों और शिक्षाओं के ज्ञान के बारे में समझ विकसित करने को सद्भाव बढ़ाने का सर्वोत्तम और सबसे विश्वसनीय तरीका मानते हैं। इसीलिए वह इस बारे में अध्ययन करने की सलाह देते है। अपने धर्म और अपनी परंपराओं के बारे में भी ज्ञानवर्द्धन करने और सही समझ बनाने के लिए इस मौलिक दृष्टिकोण को अपनाना चाहिए। इस संदर्भ में, मैं पिछले छह दशकों से निर्वासित तिब्बती धार्मिक समुदाय द्वारा हासिल की गई सफलता के तीन उदाहरण पेश करना चाहूंगा।

क) परम पावन दलाई लामा सहित तिब्बती धार्मिक गुरु जब पहली बार निर्वासित होकर भारत आए, तो तिब्बती बौद्ध धर्म को किसी अन्य बौद्ध परंपरा की तुलना में 'लामावाद' के तौर पर देखा गया है। धीरे-धीरे इनकी छवि के साथ-साथ नाम भी बदल गया और तिब्बत से आए इस बौद्ध समुदाय ने नालंदा बौद्ध विश्वविद्यालय की एक शुद्ध और पूर्ण परंपरा को प्राप्त कर लिया। यह छवि और मान्यता का बदलाव परम पावन दलाई लामा की दूरदर्शी दृष्टि का ही उपोत्पाद था, जिन्होंने अतीत में प्रमुख तिब्बती मठवासी पीठाधीश के रूप में गहन अध्ययन कार्यक्रमों पर जोर दिया था। सभी पारंपरिक धार्मिक मतवादों ने इन कार्यक्रमों का सम्मानपूर्वक पालन किया और प्रवासी देश में तिब्बती आध्यात्मिक विरासत के संरक्षण का कठिन कार्य संभव हो पाया।

ख) दूसरा उदाहरण यह है कि परम पावन दलाई लामा के प्रत्यक्ष मार्गदर्शन और सानिध्य में ऐतिहासिक सम्मानित मठों, भिक्षुणी विहारों और सहायक शैक्षणिक संस्थाओं के नियमित पाठ्यक्रम में महत्वपूर्ण सुधार लाया गया। यह वह पाठ्यक्रम है जिन्हें सभी मठों में मुख्य बौद्ध विषयों से परिचय कराने के लिए अध्ययन कराया जाता है। इस सुधार ने अपनी खुद की परंपरा को समझने और अन्य धर्मों के प्रति सम्मान और समझ विकसित करने में बहुत ज्यादा लाभ दिया है।

ग) मैं विश्वास के साथ यह कह सकता हूं कि मुख्य रूप से परम पावन दलाई लामा के महान मार्गदर्शन और तिब्बती धार्मिक परंपराओं के प्रमुखों और आध्यात्मिक गुरुओं के समान मार्गदर्शन और प्रयासों से निर्वासित तिब्बतियों में पिछले छह दशकों में धार्मिक सद्भाव, आपसी समझ, आपसी सहयोग और तिब्बती धार्मिक परंपराओं के बीच एकता हमेशा बहुत अधिक रही हैं।

3. अंतर-धार्मिक बैठक, संवाद और आदान-प्रदान कार्यक्रम

परम पावन दलाई लामा ने हमें अनेक अवसरों पर अंतर-धार्मिक बैठकों, संवादों और आदान-प्रदान

कार्यक्रमों की सलाह दी है। व्यक्तिगत रूप से परम पावन दलाई लामा ने ऐसे कार्यक्रमों में पिछले चार दशकों से अधिक समय तक योगदान दिया हैं।

क) परम पावन दलाई लामा ने हमेशा अन्य धार्मिक गुरुओं के साथ बैठक और संवादों को अपने नियमित कार्यक्रमों और यात्राओं में प्राथमिकता दी है। आज तक, परम पावन दलाई लामा ने ईसाई धर्म, इस्लाम धर्म, हिंदू धर्म, यहूदी धर्म, सिख धर्म, बौद्ध धर्म और अन्य धर्मों के प्रतिष्ठित धार्मिक गुरुओं और प्रतिनिधिमंडलों के साथ सैकड़ों बैठकें और संवाद किए हैं। उस दिशा में उनके महान प्रयासों और समर्पण के कई स्पष्ट परिणाम सामने आए हैं। यदि मैं एक सबसे विशिष्ट उदाहरण दूं, तो यह सामान्य रूप से बौद्ध शिक्षाओं और विशेष रूप से पिछले कुछ दशकों में तिब्बती बौद्ध परंपराओं द्वारा प्राप्त सम्मान और मान्यता प्रदान करना है।

ख) परम पावन दलाई लामा की संयुक्त राज्य अमेरिका और पश्चिमी यूरोप की प्रारंभिक यात्राओं के बाद परम पावन दलाई लामा की धार्मिक और विदेशी मामलों की परिषद ने एक अत्यधिक नवीन और अंतर-धार्मिक आदान-प्रदान कार्यक्रम के तहत पूर्व-पश्चिम वार्ता नामक कार्यक्रम का आयोजन किया है। इसमें यह परिषद संयुक्त राज्य अमेरिका और यूरोप से ईसाई पादरियों के प्रतिनिधिमंडल को भारत के तिब्बती मठों में स्वागत करता है तथा भारत से अमेरिका एवं यूरोप के देशों में तिब्बती बौद्ध प्रतिनिधिमंडल को भेजने का कार्य करता है। बौद्ध धर्म और ईसाई धर्म के बीच आपसी सम्मान और समझ विकसित करने में इस आदान-प्रदान कार्यक्रमों के प्रभाव और लाभ महत्वपूर्ण और विशाल रहे हैं।

ग) यह स्पष्ट हो गया है कि धार्मिक सद्भाव और अंतर-धार्मिक समझ को बढ़ावा देने के लिए संगोष्ठियों और सम्मेलनों जैसी अंतर-धार्मिक सभाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। हालांकि, इस प्रयास की वर्तमान स्थिति सभी स्तरों पर विशेष रूप से वैश्विक और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बहुत नगण्य प्रतीत होती है। कई अन्य कारणों से दुनिया के उच्च स्तर के धार्मिक नेताओं की इस तरह की बैठकों के लिए आने की संभावना नहीं है। इस प्रकार, यह विश्व के आध्यात्मिक गुरुओं और संयुक्त राष्ट्र जैसे विश्व संगठनों के विवेक पर निर्भर करता है कि वे इसको देखें और निर्णय करें कि प्रमुख विश्व धर्मों का वर्तमान वैश्विक समस्याओं से कोई लेना-देना है या नहीं।

4. अन्य धर्मों के अध्ययन का महत्व

जैसा कि मैंने पहले कहा, अन्य धर्मों की शिक्षाओं और सिद्धांतों के बुनियादी ज्ञान के बिना उनके प्रति कोई वास्तविक सम्मान विकसित करना मुश्किल होगा। ऐसा होने पर अपने स्वयं के धर्म का अध्ययन करने के साथ-साथ अन्य धर्मों के मूल सिद्धांतों और शिक्षाओं का अध्ययन स्वाभाविक रूप से महत्वपूर्ण हो जाता है। भारत में प्रतिष्ठित नालंदा बौद्ध विश्वविद्यालय जैसे प्रमुख बौद्ध शिक्षा केंद्रों द्वारा प्राचीन काल में इस विवेकपूर्ण दृष्टिकोण का पालन किया गया था। हालांकि, यह कहा जाना चाहिए कि उस समय अन्य धार्मिक परंपराओं का अध्ययन करने का उद्देश्य थोड़ा अलग

था। यह मुख्य रूप से उन दिनों प्रचलित दार्शनिक बहसों के दौरान गैर-बौद्ध संस्थाओं के खिलाफ बौद्ध परंपराओं की रक्षा के लिए था। ऐसा कहा जाता है कि इस तरह के विरोधी कारकों और दलों ने, वास्तव में, बौद्धों की स्थिति को मजबूत किया और अनजाने में उनकी परंपरा में योगदान दिया। इस प्रकार, अन्य धर्मों का अध्ययन और समझ, इसके उद्देश्य चाहे कोई भी हो, निश्चित रूप से एक लाभप्रद प्रस्ताव है।

5. वर्तमान विश्व की समस्याएं और धर्म

पिछली शताब्दियों में विज्ञान और भौतिक विकास की तीव्र प्रगति इस प्रकार से है कि दुर्भाग्य से मानव दुखों को न तो समाप्त किया जा सका है और न ही कम किया जा सका है। वास्तव में, मानवीय समस्याएं न केवल अनेक प्रकार की हैं बल्कि प्रकृति में भी अनेक प्रकार की हो गई प्रतीत होती हैं। वर्तमान मानवीय समस्याओं की बढ़ती संख्या का स्पष्ट रूप से कोई भौतिक समाधान या उपचार नहीं है। वे मानव बुद्धि और नैतिकता के स्रोत हैं। यहीं पर विश्व धर्मों की अपेक्षा की जाती है जो नैतिक रूप से चुनौतियों का सामना करने में साक्षम हैं। इस तरह की विकट चुनौतियों के सामने, दुनिया की सभी धार्मिक परंपराओं को एकजुट होकर हमारे समय में मानव जाति के सबसे गंभीर मामले में सद्भाव और एकजुटता से काम करने की एक अतिरिक्त जिम्मेदारी है।

6. निष्कर्ष

अंत में, मैं आप सभी को मेरे साथ प्रार्थना में आमंत्रित करना चाहता हूं।
परम पावन महान दलाई लामा दीर्घायु रहें;
उनकी सभी पवित्र और महान इच्छाएं बिना प्रयास के पूरी हों;
उनके जीवन की चार महान प्रतिबद्धताएं पूरी तरह और तेजी से पूरा हो; तथा
हम सभी उनके महान दर्शन और उनकी चार प्रमुख प्रतिबद्धताओं के विश्वसनीय माध्यम बनें।

बहुत-बहुत धन्यवाद।

गेशे ल्हाकदोर

निदेशक, तिब्बती ग्रंथ एवं अभिलेख पुस्तकालय

ऊँ स्वस्ति। आज मुझे तिब्बती भाषा और संस्कृति के बारे में बात रखने के लिए अवसर दिए जाने से बहुत खुशी महसूस हो रही है। केंद्रीय तिब्बती प्रशासन द्वारा वर्ष 2020 को परम पावन चौदहवें दलाई लामा जी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने के लिए 'कृतज्ञता वर्ष' के रूप में मनाया जाना न केवल उपयुक्त हैं, बल्कि बहुत ही महत्वपूर्ण हैं।

इस संदर्भ में, हमने अनेक कार्यक्रमों का आयोजन किया हैं और मुझे तिब्बती भाषा और संस्कृति के बारे में बोलने पर खुशी हो रही है। किसी भी देश के किसी भी व्यक्ति के लिए उनकी भाषा और संस्कृति के बिना उनके लोगों और राष्ट्र के बारे में नहीं सोच सकते हैं, क्योंकि भाषा और संस्कृति, व्यक्ति की पहचान का प्रतिनिधित्व करतें है।

बहुत समय पहले लोगों के पास शायद ही कोई संस्कृति थी, और मैं समझता हूं तिब्बत उसमें से एक देश हैं। हमारे पास अन्य देश और अन्य लोगों की तरह कोई लेखन की प्रथा नही थी, लेकिन धीरे-धीरे जब भाषा अधिक परिष्कृत हो गई और संचार अधिक जटिल हो गया तब लोगों को लगा कि हमें लिखित रूप में भी संवाद करने में सक्षम होना चाहिए, इसलिए लेखन अस्तित्व में आया।

लेखन पर चर्चा करने से पूर्व हमें यह जानने की जरूरत है कि एक बच्चा जब 2 साल का हो जाता है, वह भी बोलना शुरू कर देता है। इसलिए सबसे पहले मैं यह बताना चाहता हूं कि यदि आप अपनी भाषा और संस्कृति विशेष रूप से प्रामाणिक प्रकार की भाषा को संरक्षण करना चाहते हैं तो आपको उस बच्चे की भाषा का ध्यान रखना चाहिए जो अभी-अभी अपने राष्ट्र की भाषा बोलना शुरू कर रहा है। और जिसका एक तरह से मस्तिष्क का प्रारंभिक या उचित विकास हो रहा है। यह बहुत महत्वपूर्ण है।

हमें विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं हैं क्योंकि जब हम तिब्बती भाषा और संस्कृति के बारे में बात करते हैं तो वह बहुत बड़े विषय के बारे में बात कर रहे हैं, जिसके बारे में कुछ सीमित समय में कोई फैसला देना मुश्किल है। लेकिन हमें यह स्पष्ट रूप से जानने की जरूरत है जैसे कि मैंने शुरुआत में कहा था और फिर मैं दोबारा जोर देते हुए कहता हूं कि किसी भी देश और राष्ट्र की महानता उसकी सभ्यता और संस्कृति के परिष्कार के आधार पर निर्धारित होती है। अब जब हम संस्कृति और वास्तव में सभ्यता की बात करते हैं तो सभ्यता और संस्कृति का एक गहरा रूप है। सामान्य रूप से सभ्यता को तब मान्यता दी जाती है जब उस देश और देश में रिकॉर्ड रखने आदि में लिखने की कला भी होती है।

लेकिन चाहे आप सभ्यता के संदर्भ में सोचें या संस्कृति के संदर्भ में, अंग्रेजी शब्द कल्चर और सिविलाइजेशन- दोनों में किसी को संस्कारित करने या किसी को सभ्य बनाने का यह अद्भुत अर्थ समाया हुआ है।

शुरुआत में जैसा कि मैंने कहा था, बहुत समय पहले लोग वास्तव में सुसंस्कत नहीं थे, सभ्य नहीं थे। इसलिए लोग जानवरों की तरह रहते थे और वह समय अब चला गया है। लेकिन दुर्भाग्य से आज की अधुनिक दुनिया में ऐसा लगता है कि आधुनिकीकरण के नाम पर लोग सभ्यता और संस्कृति के वास्तविक अर्थ को भूल गए हैं।

यदि आप तिब्बती संस्कृति और सभ्यता की दृष्टि से देखे तो वहां बाहरी भौतिक विकास पर ज्यादा ध्यान नहीं देते हुए आंतरिक संस्कृति और अंतरिक सभ्यता पर ज्यादा ध्यान दिया जाता है। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि हमें भौतिक विकास की आवश्यकता है परन्तु जितना अधिक आप बाहर की ओर जाते हैं और जितना अधिक आंतरिक समृद्धि को अनदेखा करते हैं, उतना ही आंतरिक बाहुल्य धीरे-धीरे दुर्बल होता जाता है और इस प्रकार पूरी संस्कृति और सभ्यता प्रभावित होती है।

आज हम कोविड-19 महामारी के समय के दौरान यह देख रहें है कि लोग न केवल भौतिक सुविधाओं की कमी से पीड़ित हैं, बल्कि मुख्य रूप से आंतरिक गरीबी, अनावश्यक भय, अनावश्यक चिंता और अनुशासन का पालन नहीं करना चाहते हैं जो खुद को कोविड से बचाने के लिए जरूरी है। लेकिन ऐसा न करने के कारण लोग पीड़ित हो रहे हैं। इसे हम सब कहीं पर भी देख सकते हैं।

ऐसा है कोविड-19 का मामला। इसे नियंत्रित करने के लिए तमाम कोशिशों के बावजूद यह तेजी से फैल रहा है। इन सब बातों से यह स्पष्ट होता है कि जब तक हम आवश्यक अनुशासन और संस्कृति का पालन नहीं करते हैं तथा अपने मन को संतुलित नहीं करते हैं, समाधान सिर्फ एक टीका से नहीं मिल सकेगा। अगर टीका आता भी है, तो उससे केवल बीमारी कम करने में मदद मिलेगी, लेकिन इससे महामारी पूरी तरह से मिटा नहीं जा सकती, क्योंकि पूर्व में भी हमारे यहां एड्स जैसी अनेक महामारी तथा भयानक रोग आ चुकी हैं। इन जैसे कई रोगों का सही मायने में कोई उचित टीका नहीं है। इसे कम कर सकते है, कुछ टीका हैं जो बहुत मदद करती हैं लेकिन फिर भी कई अन्य बीमारियां और वायरल बीमारियां है जो अभी भी प्रबल हैं।

तो यह सब हमें आंतरिक संस्कृति और आंतरिक सभ्यता को मजबूत करने की आवश्यकता के बारे में बताता है। इसलिए तिब्बत के मामले में, मुझे यह कहते हुए अत्यंत गर्व और प्रसन्नता हो रही है कि तिब्बती संस्कृति और सभ्यता अत्यंत समृद्ध है। इसे सामान्य रूप से अध्ययन के पांच या दस विषयों (रिग्ने नगा और रिग्ने चू) के श्रेणी में समझाया गया है - पांच प्रमुख ज्ञान के विषय और पांच अल्प ज्ञान के विषय होती हैं।

लेकिन इन दस विषयों में अनिवार्य रूप से मानव ज्ञान के लगभग हर पहलू शामिल हैं और ये सभी इस बात पर ध्यान केंद्रित करते हैं कि दूसरों की मदद कैसे करें। मैं इस तथ्य पर जोर देना चाहता हूं कि चीन सरकार यह दावा कर रही है कि उन्होंने तिब्बत में बहुत विकास किया है। उनका दावा है कि 'उनके आने से पहले हमारा सारा ज्ञान केवल इन तथाकथित पाँच और दस विषयों में ही सीमित था। लेकिन और भी कई विषय थे जिन्हें हमें सीखना था जो उपलब्ध नहीं थे और उन्होंने इन विषयों से हमारा परिचय कराया।' यह चीनी शासन द्वारा तिब्बत में बिना किसी कारण या आधार के अपनी महानता दिखाने की सामान्य रणनीति है।

क्योंकि यदि आप इन दस विषयों में से प्रत्येक को ध्यान से देखें, तो इसमें वास्तव में विस्तार करने और ज्ञान के सभी क्षेत्रों को शामिल करने का अवसर है। उदाहरण के लिए बौद्ध मनोविज्ञान या बौद्ध धर्म के क्षेत्र में, जैसा कि परम पावन कर रहे हैं, हम वैज्ञानिकों के साथ समृद्ध संवाद कर बौद्ध दर्शन, वैज्ञानिक सोच, वैज्ञानिक निष्कर्षों को शामिल कर सकते हैं क्योंकि यह बौद्ध दर्शन और बौद्ध ज्ञान का विरोध नहीं करता है।

निश्चित रूप से कोई भी देश, विज्ञान और प्रौद्योगिकी या किसी भी अन्य मानव ज्ञान के क्षेत्र में शुरू से बहुत अच्छी तरह से विकसित नहीं होता है, इसमें समय लगता है। चीन भी विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आज जैसा नहीं था। लेकिन मेरा यह मानना है कि चीन बाहरी विकास के पीछे दौड़ने लगा और आंतरिक आध्यात्मिकता को नजरअंदाज कर दिया। इसलिए आज चीन आध्यात्मिक रूप से दिवालिया हो गया है और देश को बल और धमकी के द्वारा शासन करना पड़ रहा है। चीन एक समय महान सभ्यता का देश हुआ करता था, लेकिन अब वह भौतिक विकास पर अधिक ध्यान दे रहे है और आंतरिक समृद्धि को पूरी तरह से अनदेखा कर रहा है। साथ ही बाहरी सामग्री संग्रह के मामले में भी वे मुख्य रूप से दूसरों को नियंत्रित करने और दूसरों को मारने के लिए हथियार और अस्त्र-शस्त्र बनाने पर ध्यान केंद्रित कर रहा है।

इसलिए चीन शासन चीनीकरण के नाम पर अपनी सभ्यता और संस्कृति के अनुसार चीजों को बदलने का ही प्रयास नहीं कर रहा है, बल्कि दूसरों को धमकाने के कम्युनिस्ट तानाशाही तरीके के कार्य कर रहा है। वह दूसरों को अपने आदेश का पालन करने के लिए कह रहा है ताकि शी जिनपिंग जैसे कुछ चीनी नेता मरने तक शासन कर सकें और किसी भी तरह से अपनी सत्ता और कुरसी को बनाए रखें। यह दुर्भाग्यवश उनका अंतिम खेल या उनकी आखरी सोच नहीं है।

मैं वास्तव में यह कहना चाहता हूं कि दमनकारी तरीकों का उपयोग करके, नकारात्मक भावनाओं का सहारा लेकर और नकारात्मक भावनाओं को भड़काकर लंबे समय तक शांति, सद्भाव और खुशी प्राप्त करने की उम्मीद करना व्यर्थ और बेकार है, जिसके बारे में चीनी नेता खूब बातें करते हैं।

जैसा कि मैंने पहले कहा, तिब्बती सभ्यता और संस्कृति के मामले में केवल मैं ही नहीं, बल्कि आंतरिक ध्यान, आंतरिक त्रिरत्न और आंतरिक समृद्धि को स्पष्ट रूप से इंगित करने वाले कई पश्चिमी विचारकों ने भी इस बात को पुष्ट किया है कि तिब्बतियों ने सदियों से इसे जमा किया है। यह कुछ ऐसा है जिससे मनुश्यों और मानव जगत को बहुत लाभ हो सकता है।

कुछ विद्वानों के अनुसार, चीजों को खोजने की पश्चिमी पद्धति बाहरी है। बाहर जाकर, परमाणुओं की खोज करके अन्य भौतिक वस्तुओं की खोज करके जो परिष्कृत विज्ञान और तकनीक आई है, वह कुछ हद तक अच्छी है। बशर्ते कि उन्हें ठीक से इस्तेमाल किया जाए।

लेकिन दुर्भाग्य से अगर उपयोगकर्ता इंसान या मानव का मन असंस्कृत, अनियंत्रित, अनुशासनहीन है, तब इन सभी शक्तिशाली हथियारों, तकनीकों का इस्तेमाल दूसरों पर अत्याचार करने, दूसरों को धमकाने के लिए किया जाएगा, जैसा कि चीनी सरकार और कई अन्य लोग कर रहे हैं। यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है। इसलिए अंत में, मुझे यह विश्वास और भरोसा है कि तिब्बती संस्कृति वास्तव में पूरे विश्व के लिए बहुत बड़ा योगदान दे रहा है। यह केवल मैं नहीं कह रहा हूं। आप देख सकते है कि परम पवन ने तिब्बती बौद्ध दर्शन और बौद्ध विज्ञान को लेकर जो कहा हैं, उसमें शीर्ष वैज्ञानिकों सहित कई लोग रुचि दिखा रहे हैं।

इसलिए यह समृद्ध तिब्बती संस्कृति, तिब्बती भाषा, तिब्बती लिपि, तिब्बती लेखन पर आधारित है। आप कल्पना कर सकते हैं कि तिब्बती भाषा और तिब्बती लिपि के बिना तिब्बती समाज कैसा होगा। मैं यहां व्याकरण पढ़ाने नहीं आया हूं, इसलिए मैं इस बारे में विस्तार से नहीं बताऊंगा कि ध्वन्यात्मकता का उपयोग कैसे किया जाता है, इसका उच्चारण कैसे किया जाना चाहिए। मैं सामान्य रूप से बात कर रहा हूं। ऐसी स्थिति की आप कल्पना करें जब तिब्बती समाज, तिब्बती राष्ट्र और तिब्बती लोग अपनी भाषा को ठीक से उपयोग करने में सक्षम नहीं हों, इसके लेखन और लिपि को संरक्षित करने में सक्षम नहीं हों, तब क्या होगा।

मैं यह इसलिए कह रहा हूं, क्योंकि आज तिब्बती लोग दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति का सामना कर रहे हैं। मैं इसलिए दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति कहता हूं क्योंकि आज हमारी तिब्बती संस्कृति पूरी तरह विलुप्त होने के बहुत ही कठिन दौर से गुजर रही हैं। जब मैं आज के युवा तिब्बतियों को देखता हूं, तो मैंने यह देखा कि बहुत से युवा तिब्बती भाषा को ठीक से बोलने में असमर्थ हैं। वे तिब्बती बोल रहे हैं लेकिन यह सब टूटी-टूटी भाषा में या गलत उच्चरण के साथ। लेखन के साथ भी ऐसा ही है। मैं सिर्फ यह कह नहीं रहा हूं, आप खुद इसकी जांच कर सकते हैं।

मुझे यह कहने में कोई हिचक नहीं है कि यहां केंद्रीय तिब्बती प्रशासन में भी अधिकांश पत्राचार अंग्रेजी में किए जाते हैं क्योंकि वे अंग्रेजी में लिखने में बहुत सहज महसूस करते हैं, चाहे वह सही हो या नहीं हो। इसके विपरीत तिब्बती भाषा के साथ उन्हें कई बार सोचना पड़ता है कि मैं कैसे लिखूं, फॉन्ट कहां है आदि-आदि। यह बहुत गंभीर स्थिति है। इसलिए आज हम

अपनी अनूठी पहचान को संरक्षित रखने के मामले में बहुत कठिन समय से गुजर रहे हैं। अनूठी पहचान एक विशेष प्रकार की नाक या मुंह या भौतिक संरचना होने के बारे में नहीं है, बल्कि अपने विशेष तिब्बती संस्कृति के संदर्भ में है, जो कि तिब्बती भाषा और लिपि में निहित है। अद्वितीय तिब्बती संस्कृति मुख्य रूप से करुणा, ज्ञान, अखंडता जैसे आंतरिक गुणों- आंतरिक उत्कर्ष और भावनात्मक स्थिरता से संबंधित है। इसलिए मेरी यह आशा और इच्छा है कि हम ऐसे विशेष अवसरों को न केवल औपचारिक रूप से न मनाते हुए बल्कि एक दीर्घकालिक रणनीति और उचित योजना तैयार करके इस अनूठी संस्कृति और तिब्बती भाषा को जीवित रखने में सक्षम हों।

हमारे लिए सिर्फ इतना कहना काफी नहीं है कि सभी स्कूलों में तिब्बती पढ़ाई जाती है। हां पढ़ाई जाती है, लेकिन जब छात्र अपना स्कूल खत्म करते हैं, तब उनके गुणवत्ता के स्तर को देखें। इसमें इतना भर ही पर्याप्त नहीं है कि वे यहां और वहां कुछ अंक प्राप्त कर रहे हैं। यह बेहद गंभीर मामला है।

इसलिए यदि आप इसे ऐसे ही छोड़ देते हैं तो तिब्बती भाषा और तिब्बती संस्कृति भी पर्यावरण विनाश की तरह धीरे-धीरे लुप्त हो जाएगी। पर्यावरण विनाश के मामले को इस तरह देखें, यदि कोई व्यक्ति एक पेड़ काटता है या वहां के पानी को प्रदूषित करता है, तो इस पर शायद ही ध्यान दिया जाता है। लेकिन जब हर कोई ऐसा करना शुरू कर देता है और धीरे-धीरे आप एक ऐसी अवस्था में पहुंच जाते हैं जहां पर्यावरण को हुए नुकसान की भरपाई करना असंभव हो जाता है। यह कोविड-19 से कहीं ज्यादा खतरनाक और अधिक जोखिम भरा है जैसे कि आज के कई विशेषज्ञ कह रहे हैं। आज हम जिस हद तक पर्यावरण का विनाश कर रहे हैं, वह इतना अधिक है कि अगर हम जल्दी और बड़े पैमाने पर कुछ नहीं करते हैं तो एक समय आएगा, जब हमने पर्यावरण को इस हद तक नुकसान पहुंचाया है कि कुछ भी नहीं किया जा सकता है। कोई भी वैज्ञानिक तबाह हो चुके पर्यावरण को ठीक करने के लिए कोई इंजेक्शन या वैक्सीन नहीं बना सकता। तिब्बती संस्कृति और भाषा भी ऐसी ही है। यदि हम ध्यान नहीं देते हैं, कड़ी मेहनत नहीं करते हैं और एक दीर्घकालिक प्रभावी रणनीति के साथ नहीं आते हैं तो हमारी संस्कृति और भाषा ऐसे ही लुप्त हो जाएगी। तिब्बती भाषा का पतन पहले से ही हो रही है। बहुत कम लोग इस पर ध्यान देते हैं और जो लोग जागरूक और अधिकार रखते हैं वे हमारी विशिष्ट पहचान के संरक्षण के अलावा अन्य चीजों पर अधिक ध्यान देते हैं या वे कुछ करने के बारे में सोचते हैं। लेकिन फिर उनके दिन शिथिलता के आलस्य, सुस्त आलस्य, व्याकुलता के आलस्य और खुद को कम आंकने के आलस्य से गुजरते हैं।

जो मैं रोजाना देखता हूं, कभी-कभी मुझे थोड़ी निराश और खेद होता है। बहुत से तिब्बती लोगों को, युवाओं को, बुजुर्गों को शायद ही ऐसा लगता है कि हम निर्वासन में रह रहे हैं और हमारी संस्कृति और भाषा एक बड़े खतरे का सामना कर रही है। दूसरी तरफ चीन है कि तिब्बतियों

को चीनीकरण, सांस्कृतिक क्रांति, आधुनिकीकरण, एकता, सुरक्षा और ऐसी ही चीजों के नाम पर जानबूझकर नष्ट कर रहे हैं।

तिब्बत के अंदर रहने वाले तिब्बतियों के लिए यह बाहरी और आंतरिक खतरा चीन सरकार द्वारा बनाई गई परिस्थितियों के कारण है। उन्हें चीनी भाषा बोलने और लिखने के लिए मजबूर किया गया है। उनका तर्क है कि इस तरह से वे बेहतर आजीविका कमा सकते हैं। इसलिए वहां शायद ही किसी को तिब्बती संस्कृति और भाषा के संरक्षण के लिए काम करने या सोचने का अवसर मिलता है। इसलिए तिब्बत में रहने वाले अधिकांश तिब्बतियों की स्थिति ऐसी ही है।

अब निर्वासन में स्वतंत्रता के साथ रह रहा तिब्बतियों का छोटा सा समुदाय भी चारों ओर फलियों के ढेर की तरह बिखरा हुआ है। हम तिब्बती लोग दुनिया भर में फैले हुए हैं और नौकरियों और आजीविका के लिए उस देश की भाषा सीखने और बोलने के लिए भी मजबूर हैं। इसलिए तिब्बती भाषा और संस्कृति को जानबूझकर या अनजाने में स्वाभाविक रूप से पृष्ठभूमि में धकेल दिया गया है।

हम न केवल पतन हो रही संस्कृति को बचाने के लिए एक ठोस प्रयास करने में अक्षम हैं, बल्कि कुछ लोग यह भी सोचते हैं कि यदि आप अंग्रेजी जैसी कुछ अन्य भाषाओं को धाराप्रवाह बोलने में सक्षम हैं तो आपको लगता है कि आप कोई बहुत ही खास, आधुनिक और उन्नत हैं और आप गर्व के साथ रह सकते हैं। यह अच्छी बात है कि आपके पास आधुनिक शिक्षा है, जिसकी हम सभी को आवश्यकता है लेकिन आपकी अपनी भाषा और संस्कृति का क्या? इसे कौन संरक्षित करेंगा? क्या परम पावन ने बार-बार तिब्बतियों को दो पंखों वाला पक्षी होने की सलाह नहीं दी, जिसमें आधुनिक शिक्षा और पारंपरिक तिब्बती शिक्षा दोनों हों?

इसलिए वास्तव में मैं जो कह रहा हूं, उसका सार यह है कि अब समय केवल इसके बारे में बात करने का नहीं है। बल्कि पतन हो रही तिब्बती संस्कृति और तिब्बती भाषा को संरक्षित करने के लिए दीर्घकालिक योजनाओं के साथ कार्य करने का समय है। जो लोग इसके लिए काम करते हैं और अपना जीवन समर्पित करते हैं, उनकी बहुत सराहना की जानी चाहिए और उन्हें तिब्बती लोगों के सही मायने में बहादुर और रोल मॉडल के रूप में देखना चाहिए। उन लोगों को प्रेरित करें, उनका अनुसरण करें और उनका समर्थन करें। तिब्बती भावना जैसे करुणा, बहादुरी, ईमानदारी, एकता इत्यादि ऊंची उड़ान भरें।

मैंने गुगल किया और यह देखने की कोशिश की कि क्या तिब्बती भाषा को मृत भाषा के रूप में गिना जाता है। सौभाग्य से मैंने पाया कि तिब्बती भाषा अभी मरी नहीं है। दुनिया में 77 हजार से अधिक विभिन्न भाषाएं हैं। लेकिन इनमें से आधी भाषाओं में लिखने की व्यवस्था नहीं है, इसलिए लेखन पहले से ही गायब हो गया है। मैंने रूस के कई गणराज्यों का दौरा किया था जहां उन्होंने अपनी भाषा पूरी तरह से खो दी है और इस तरह उनकी संस्कृति विलुप्त होने के

खतरे का सामना कर रही है।

हमारे निर्वासन में भी, जिन देशों में स्वतंत्रता है, वहाँ अंग्रेजी जैसी भाषाएं हैं जो इतनी प्रभावशाली और प्रबल हैं कि आप जानबूझकर या अनजाने में उस भाषा को मिली तथाकथित सुविधाओं के कारण इसी भाषा में बात करते हैं। तो यह एक ऐसी आंतरिक और बाहरी स्थितियों और दबाव के कारण है कि जब तक हम सभी स्तरों, सीटीए, व्यक्तिगत संस्थानों, संगठनों और व्यक्तियों को लेकर प्रभावी दीर्घकालिक योजना नहीं बनाते हैं, तब तक चुनौतियों से सफलतापूर्वक निपटना बहुत कठिन कार्य होगा। जो लोग हर प्रकार से शिक्षित हैं, उन्हें तिब्बती भाषा और संस्कृति के संरक्षण में योगदान देने के लिए आगे आना चाहिए, जो आज पूरी तरह विलुप्त होने के खतरे का सामना कर रही है।

जब तक हम कठोर कदम नहीं उठाएंगे, हम इसे जीवित नहीं बचा सकेंगे। यही मेरी चिंता का विषय है। परसों मैं तिब्बत में तिब्बती भाषा की स्थिति पर एक पुस्तक पढ़ रहा था। इनमें से कुछ लेखकों ने कुछ तिब्बतियों और चीनी लोगों से पूछा और उनका साक्षात्कार लिया। जब उन्होंने तिब्बती समुदाय के साथ तिब्बत में रह रहे चीनियों से पूछा कि वे तिब्बती बोलते हैं, तो उनमें से लगभग सभी ने कहा नहीं। उन लोगों ने कहा कि वे तिब्बती नहीं बोलते हैं और कहा कि ‘तिब्बती भाषा को समझना बहुत कठिन है, यह बहुत जटिल है।’ वे तिब्बती भाषा से नफरत करत हैं और उसके बारे मे निन्दापूर्ण टिप्पणियां करते हैं और सोचते हैं कि यह भाषा सीखने और बोलने से कोई काम नहीं होने वाला है। वह सोचते है कि तिब्बती भाषा को सीखने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसके बजाय वे तिब्बतियों द्वारा चीनी भाषा नहीं सीखने की आलोचना करते हैं। लेकिन जब व्यक्तिगत तिब्बतियों का साक्षात्कार लिया गया तो वे चीनी बोल रहे थे, जो एक मायने में अच्छा है क्योंकि उन्हें कई गंभीर समस्या के कारण इसकी आवश्यकता है, लेकिन दूसरी ओर आपकी अपनी भाषा और संस्कृति के बारे में क्या?

आइए हम निर्वासन में तिब्बती भाषा और लिपि की स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं। मेरी पिछली पीढ़ी का तिब्बती भाषा और लिपि पर ज्ञान, तिब्बती लिपि लिखने की क्षमता, हमारी अपनी संस्कृति का ज्ञान कैसा था। अगर मेरी समझ अदूरदर्शी नहीं है तो तब की मेरी पीढ़ी, फिर मेरी अगली पीढ़ी- यह केवल बद से बदतर होती जा रही है।

यही मेरी चिंता है। लेकिन फिर भी एक उम्मीद है, अगर हम सशक्त कार्य योजना और ठोस प्रयास के साथ काम करते हैं। उम्मीद करते है क्योंकि युवा तिब्बतियों में अभी भी बहुत से अच्छे विद्वान हैं, जिन्होंने वास्तव में कड़ी मेहनत के साथ प्राध्यापक या शिक्षक का दर्जा हासिल किया है। इसलिए उन्हें तिब्बती लिपि, भाषा और व्याकरण आदि का अच्छा ज्ञान है। अब हमें युवा तिब्बतियों के अगले गुट को तैयार करने की जरूरत है जो उनकी जगह ले सकें और तिब्बती संस्कृति और भाषा को संरक्षित रखने में सफल हो सकें।

हमेशा की तरह कुछ साल पहले मैंने कई रूसी गणराज्यों का दौरा किया था। जब मैं एक रूसी गणराज्य का दौरा कर रहा था तब कुछ वरिष्ठ लोगों के समूह ने मुझे उनके सांस्कृतिक केंद्र में आमंत्रित किया था। इस केंद्र का मुख्य उद्देश्य निश्चित रूप से उनकी भाषा, लिपि और संस्कृति को संरक्षित करना था। इसलिए मैं खुशी-खुशी वहां चला गया। लेकिन मैंने पाया कि बहुत से लोग अपने लिपि और मूल भाषा नहीं जानते थे। कई बोल भी नहीं पाते थे। वे लोग बहुत मुश्किल स्थिति में हैं, हालांकि वे कड़ी मेहनत कर रहे हैं। तिब्बती भाषा के मामले में, अभी भी कई विदेशी तिब्बती लिखना और बोलना-सीखना चाहते हैं। वह इस आशा में कि बौद्ध धर्म के अध्ययन के लिए किसी अनुवादक पर निर्भर न करना पड़े। सौभाग्य से हमारे सभी प्रमुख तिब्बती मठों में बौद्ध धर्म के अध्ययन के लिए ज्ञान अभी भी सुरक्षित हैं। इसलिए तिब्बती भाषा की निरंतरता सुनिश्चित करने के लिए हमें तिब्बती कला, खेल, व्यवसाय, मनोरंजन, पर्यटन आदि जैसे अन्य क्षेत्रों में भी सक्रिय दिखाना चाहिए जहां भाषा और लिपि का उपयोग किया जा सकता है।

इसलिए मुझे डर है और मैं दोहराता हूं कि जब तक हम सही मायने में कठोर और सक्रिय कदम नहीं उठाते, हम अपनी तिब्बती संस्कृति और भाषा को संरक्षित नहीं कर पाएंगे। खासकर जब हम तिब्बती संस्कृति के संरक्षण की बात करते हैं तो सबसे महत्वपूर्ण कारक भाषा और फिर लिपि है। लिपि का अर्थ है जो कांग्यूर और तेंग्यूर आदि में निहित है। आजकल, मैं नहीं जानता कि कितने लोग कांग्यूर और तेंग्यूर को पढ़ सकते हैं और इसका अर्थ समझ सकते हैं। इन बहुमूल्य ग्रंथों में तिब्बती संस्कृति का सार निहित है। इसलिए इन पवित्र ग्रंथों को सजावट के रूप में नहीं रखना चाहिए। परन्तु इस पाठ्य-पुस्तकों का अध्ययन करना चाहिए।

जब हम तिब्बती संस्कृति के बारे में बात करते हैं तो यह मुख्य रूप से आंतरिक गुणों, व्यक्ति के सकारात्मक परिवर्तन को संदर्भित करता है। संस्कृति के सभी बाहरी रूप एक गहरी आंतरिक संस्कृति का प्रतिबिंब हैं। व्यक्ति की वास्तविक संस्कृति को आंतरिक अंतर्दृष्टि और परिवर्तन के माध्यम से आना पड़ता है। एक ऐसा ज्ञान जो वास्तविकता के हर पहलू में व्याप्त सर्वव्यापी वास्तविकता को देखता है और एक हृदय या करुणा जो बिना किसी भेदभाव के सभी के साथ समान व्यवहार करता है। उस संस्कृति को विकसित करना और उसका संरक्षण करना एक तरह से आसान नहीं है और दूसरी तरफ कई आंतरिक बाहरी बाधाएं भी हैं। उदाहरण के लिए, अहिंसा और करुणा के बारे में बात करना आसान है। लेकिन अहिंसा के वास्तव में क्या अर्थ है? यह क्यों महत्वपूर्ण है? जब तक आप नहीं जानते, जब तक आपको इन गुणों का गहन ज्ञान नहीं होगा, आप इसकी सराहना नहीं कर पाएंगे। यदि आप इसकी सराहना नहीं करते हैं तो इसे संरक्षित करने का कोई सवाल ही नहीं है। इसलिए हमें अपनी समृद्ध और बहुमूल्य सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण के लिए अथक प्रयास करने की आवश्यकता है और ऐसा करने के लिए एक

दुर्लभ विशेषाधिकार के रूप में माना जाना चाहिए न कि एक बोझ के रूप में।

फिर हमारे सामने कई बाहरी बाधाएँ भी हैं। प्रमुख बाहरी बाधाओं में से एक है, चीन सरकार द्वारा जान-बूझकर हमारी संस्कृति को नष्ट करने की कोशिश करना। तिब्बत पर आक्रमण करने के बाद से उन्होंने जो विनाश किया है, उतना ही नहीं है। हाल ही में चीनी अधिकारियों ने स्थानीय कानूनों को 'नस्लीय अल्पसंख्यकों' की बोली और लिखित भाषा के उपयोग को 'असंवैधानिक' घोषित किया था। इस प्रकार चीनी अधिकारी ऐसे कानूनों, नीतियों और प्रथाओं के साथ आ रहे हैं जो तिब्बती भाषा को कमजोर करती हैं, जिससे तिब्बती भाषाई और सांस्कृतिक पहचान के अस्तित्व पर सीधा प्रभाव पड़ रहा हैं।

लेकिन मैं निराशावादी सोच के साथ नहीं, बल्कि आशावादी शब्दों के साथ अपनी बात समाप्त करूंगा। हम सौभाग्यशाली हैं कि परम पावन दलाई लामा जी को कृतज्ञता अर्पित करने के लिए ऐसे अवसरों का आयोजन करने में सफल रहे हैं। लेकिन कृतज्ञता प्रकट करने के लिए सबसे अच्छा तरीका केवल उत्सव मनाना नहीं, बल्कि वास्तविक कार्यान्वयन और दैनिक कार्यों में उसका उपयोग करना है। अभी भी देर नहीं हुई है। इसे हासिल करने के लिए हर किसी के दिल में यह इच्छा होनी चाहिए और यह याद रखना चाहिए कि तिब्बत में क्या हुआ, क्या हो रहा है और अभी हमारी क्या स्थिति है। हमारी युवा पीढ़ी की स्थिति क्या है और आप हमारी बहुमूल्य भावी पीढ़ी को किस प्रकार की विरासत, मूल्य, शिक्षा और संस्कृति देने जा रहे हैं? यह काफी नहीं है कि आप उन्हें कुछ सुंदर कपड़े, कुछ पैसे और रहने के लिए एक घर दें, नहीं! इसलिए परम पावन दलाई लामा जी के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के इस महत्वपूर्ण अवसर पर, आइए हम यह प्रतिबद्धता या संकल्प लेते हैं कि हम अपने तरीके से तिब्बती संस्कृति और भाषा के संरक्षण में योगदान दे सकें। हम तिब्बतियों के बीच एकता की सभी गतिविधियां, हमारी अनूठी सांस्कृतिक पहचान का संरक्षण इत्यादि सभी परम पावन दलाई लामा जी के प्रति वास्तविक कृतज्ञता प्रस्तुत करतें हैं।

शुक्रिया!

गेशे नवांग समतेन

कुलपति, केंद्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान

सभी को नमस्कार। इस वर्ष को केंद्रीय तिब्बती प्रशासन या निर्वासित तिब्बत सरकार ‘परम पावन दलाई लामा जी के प्रति कृतज्ञता वर्ष’ के रूप में मना रही है। इसलिए मुझे नालंदा परंपरा पर कुछ बात रखने के लिए कहा गया है। मैं नालंदा परंपरा के बारे में कुछ तथ्यों और वास्तविकताओं को संक्षेप में रखूंगा। यह एक ज्ञान है जो तिब्बती संस्कृति में संरक्षित है।

शुरुआत में, परम पावन दलाई लामा जी की करुणा तथा परम पावन दलाई लामा जी द्वारा तिब्बती लोगों के जीवन एवं तिब्बत देश के प्रति जो योगदान दिया गया है, उसे शब्दों में वर्णित नहीं किया जा सकता है। परम पावन दलाई लामा जी ने 16 वर्ष की उम्र में अपने देश के चूनौतिपूर्ण समय के दौरान राजनीतिक उत्तरदायित्व संभाला था। आज भी वह राजनीतिक चुनौतियों, सामाजिक चुनौतियों, सांस्कृतिक चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। 10 मार्च 1959 में जब चीनी सेना ने तिब्बत पर आक्रमण किया था, तब परम पावन दलाई लामा जी ने तिब्बत से पलायन कर भारत में शरण लिया था। चीनी कम्युनिस्ट शासन द्वारा स्वतंत्र तिब्बत पर कब्ज़ा केवल एक देश पर राजनीतिक शक्ति का कब्ज़ा नहीं था, बल्कि यह तिब्बत की पहचान, उसकी संस्कृति, भाषा और अन्य सभी पहचान को हर तरह से मिटाने की एक बहुत व्यवस्थित षडयंत्र के साथ किया गया था।

तिब्बत पर कब्जे के बाद चीन ने सांस्कृतिक क्रांति के नाम पर तिब्बत में हज़ारों मठों, मंदिरों, अध्ययन केंद्रों एवं पुस्तकालयों को नष्ट कर दिया। साथ ही तिब्बत में बौद्ध धर्म की साधना तथा उसकी संस्कृति पर भी प्रतिबंध लगाया गया। यह लगभग पूरी तरह से विनाश के पटल पर था। इसके पश्चात परम पावन दलाई लामा जी ने कफी मेहनत करके तिब्बती संस्कृति को जारी रखने के लिए भारत में तिब्बत के प्रसिद्ध मठवासी संस्थान तथा अध्ययन केंद्रों को पुनः स्थापित किया है। इसी प्रकार परम पावन के मार्गदर्शन में तिब्बत संस्कृति को संरक्षण देने के लिए भारत के अलग-अलग जगहों में स्थित तिब्बती समुदाय के लिए अलग स्कूलों का स्थापना की गई। इन स्कूलों में तिब्बती छात्रों को तिब्बती संस्कृति के संरक्षण के लिए तिब्बती इतिहास, भाषा, संस्कृति, आध्यामिकता, धर्म इत्यादि विषयों की शिक्षा दी जाने लगी। ज्ञात हो कि परम पावन दलाई लामा जी के साथ तिब्बत के कई प्रख्यात गुरुओं, विद्वानों समेत 80 हज़ार तिब्बती निर्वासन में भारत आए थे।

बुद्ध की शिक्षाओं से उत्पन्न नालंदा परंपरा के बारे में जानने के लिए हमें बुद्ध के समय में जाने की जरूरत है। भगवान बुद्ध ने बोधगया में ज्ञान प्राप्त करने के बाद सारनाथ जाकर उन्होंने

पहला धर्म चक्र परिवर्तन का उपदेश दिया जिसे चार आर्य सत्य का धर्म उपदेश भी कहा जाता है।

कारणों और स्थितियों के दो भाग हैं। पहला भाग संसार में संलग्न होने से संबंधित कारण और स्थितियां है जो कि दुख और पीड़ा का मूल है। क्योंकि दुख को समझने के लिए हमें यह जानने की जरूरत है कि ये दुख वास्तव में क्या हैं। दुख कितने प्रकार के होते हैं और अगर हम यह जान लेते है कि ये विभिन्न प्रकार के दुख हैं। जैसे- दुःख दुःखता, विपरिणाम दुःख, संस्कार दुःख- इन्हें केवल तभी समझा जा सकता है जब किसी के पास आध्यात्मिकता और वास्तविकता की समझ हो। आप काफी हद तक जानते हैं, तभी कोई उस स्तर की दुःख को समझ सकता है। एक बार जब वे दुख के विभिन्न स्तरों को समझ जाते हैं तो बुद्ध ने इन दुखों की उत्पत्ति के बारे में सिखाया, जहां से ये दुःख आते हैं। दरअसल दुःख हमारे कार्यों से आते हैं जो कि हमारे पीड़ित मन से प्रेरित होते हैं और फिर हमारी बाहरी और आंतरिक दुनिया की वास्तविकता को समझने में सक्षम नहीं होकर गलतफहमी वास्तविकता पर आधारित होते हैं।

इन वास्तविक कारणों और स्थितियों के परिणाम, प्रभाव तथा दुख को समझने के बाद हम केवल इन चीजों को जानने से पीछा नहीं छुड़ा सकते हैं। बुद्ध ने कारणों और स्थितियों के एक और भाग के बारे में सिखाया है जो कि दुख के अंत, दुख का अंत की सत्यता और दुख के अंत का मार्ग है। दुख के अंत की सत्यता का अर्थ बुद्ध अपनी तरह से कहते हैं। उनके अनुसार दुख के कारण, स्थितियों और दुखों को समाप्त किया जा सकता है, क्योंकि वे उत्पन्न होते हैं। वे मिश्रित घटनाएं हैं, इसलिए उन्हें समाप्त किया जा सकता है। इसके अलावा, उन्होंने दुख की अंत के मार्ग के बारे में बताया है जो इन दुखों से बाहर निकलने का मार्ग दिखाता है। इससे दुख और उसके कारणों की समाप्ति हो जाती है। इसलिए इस प्रकार के मार्ग की एक महान व्याख्या, मार्ग के विस्तृत विवरण में बुद्ध बताते है कि इन दुखों का अंत कैसे किया जा सकता है। इसके लिए संसार में अनुरक्त होना और संसार से विरक्त होने संबंधी शिक्षाओं के ये दो सेट बौद्ध आध्यात्मिकता और बौद्ध दर्शन की प्रणाली के बारे में पूर्ण विचार देते हैं। यह आध्यात्मिकता और दर्शन की मौजूदा प्रवृत्ति में महान, मौलिक और क्रांतिकारी बदलाव है।

इसीलिए बुद्ध के उपदेश चार आर्य सत्यों की शिक्षाओं से शुरू होते हैं जिसके बारे में उन्होंने जीवन भर व्यापक प्रवचन दिए हैं। इस पहले धर्म उपदेश ने बाकी शिक्षाओं के लिए आधारभूत ढांचा तैयार किया। इसने भारतीय दार्शनिक प्रणाली और आध्यात्मिक प्रणाली में क्रांति कर दी। साथ ही, अपने पहले धर्म उपदेश से लेकर शेष शिक्षाओं सहित हर जगह बुद्ध ने चार मुख्य सिद्धांतों पर जोर दिया। इसमें पहला, प्रत्येक मिश्रित घटना अस्थायी है जिसका अर्थ है कि इसे समझकर हम अपने बहुत से दुखों को कम कर सकते हैं क्योंकि आम लोगों की धारणा और वास्तविकता के बीच की खाई बड़ी चौड़ी है। हम आम तौर पर चीजों को स्थायी देखते हैं, चाहे वह हमारे रिश्ते

हों, हमारे रिश्तेदार हों, बाहरी दुनिया हों, आंतरिक दुनिया हों, पहाड़ हों और घर हों जो दशकों और सदियों और हजारों सदियों से रहे हों। एक प्रकार की धारणा है कि ये स्थायी हैं। लेकिन बुद्ध ने कहा है कि वास्तव में सभी मिश्रित घटनाएं अनित्य हैं। यह कहते हुए कि प्रत्येक वस्तु क्षण भर में बदल जाती है, यहां तक कि एक सेकंड के बहुत छोटे अंश तक भी यह नहीं रहता है। उस समय, भारत के बाकी दार्शनिक धाराओं द्वारा इसे स्वीकार नहीं किया गया था और फिर अन्य दार्शनिक परंपराओं में इस तरह की चीजों से विचारों का बड़ा आदान-प्रदान और समालोचनाएं हुई थीं। दूसरा बुनियादी सिद्धांत यह है कि सभी दूषित चीजें प्रकृति से पीड़ित हैं। यहाँ दूषित अर्थात दूषित ही पीड़ित मन है। जो कुछ भी पीड़ित मन है - हमारी घृणा, क्रोध, ईर्ष्या, अज्ञान और इन सभी प्रकार के पीड़ित मन- पीड़ित हैं क्योंकि इन पीड़ित मन और मानसिक कारकों की उपस्थिति से वे हमें पीड़ित करते हैं और हमें परेशान करते हैं। अतः पीड़ित मन और पीड़ित मन से संबंधित जो पीड़ित मन के कारण होते हैं, वे सभी स्वभाव से पीड़ित हैं। फिर तीसरा है निस्वार्थता। अर्थात्, ऐसी कोई चीज नहीं है जो स्वतंत्र या स्थायी हो। न केवल व्यक्ति के संदर्भ में, बल्कि गैर-व्यक्तिगत घटनाओं के संदर्भ में भी। ऐसा कुछ भी स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है जो कारणों, स्थितियों और अतीत पर निर्भर किए बिना और मानसिक आरोपण और प्रयोजन पर निर्भर किए बिना बाहर खड़ा हो। इसलिए, इस निस्वार्थता या निःस्वार्थता के विचार, निःस्वार्थता की अवधारणा को पहली बार न केवल आध्यात्मिक क्षेत्र में बल्कि दार्शनिक क्षेत्र में भी पेश किया गया था। विश्व स्तर पर, हम कह सकते हैं कि किसी भी दर्शन या बौद्धिक प्रणाली ने कभी इस मुद्दे को नहीं उठाया। लेकिन अब, बाद की वैज्ञानिक दुनिया में, क्वांटम फीजिक्स का उल्लेख है जो चीजों के विघटन की एक बहुत ही समान अवधारणा की बात करता है। यदि हम उनका खुलासा करते हैं और अन्वेषण करते हैं, यदि हम उन्हें काटते हैं तो ऐसा कुछ भी नहीं है जो हमारी परीक्षा और जांच में खड़ा हो, लेकिन वे विघटित हो जाते हैं। यह उसी के समान है। लेकिन भौतिक दुनिया में वैज्ञानिक अन्वेषण बहुत अधिक है। लेकिन बुद्ध ने न केवल भौतिक दुनिया की खोज के बारे में बल्कि मानसिक दुनिया के बारे में भी बताया है। मानसिक दुनिया पर बहुत जोर है।

इन चार प्रमुख सिद्धांतों के अंत में निर्वाण और शांति आती है। इसका अर्थ है कि एक बार जब हम पीड़ित मन से मुक्त हो जाते हैं, अब कोई कर्म नहीं बचा रहेगा, जिसके परिणामस्वरूप कोई दुख नहीं होगा। तो वह अवस्था निरोध या निर्वाण की अवस्था है जहाँ पीड़ित मन की कोई उपस्थिति नहीं होती है। जिसका अर्थ है कि यह पूर्ण शांति की स्थिति है। जब भगवान बुद्ध ने इन चार प्रमुख सिद्धांतों को अपने शिष्यों, अनुयायियों और दुनिया को समझाया और प्रस्तुत किया, तो इससे दार्शनिक परंपराओं और इसके परिणामस्वरूप आध्यात्मिक परंपरा में वास्तविक प्रतिमान आया क्योंकि बौद्ध दर्शन और आध्यात्मिकता बहुत अधिक परस्पर और अटूट रूप से जुड़े हुए

हैं। दरअसल, यह केवल केवल बौद्ध धर्म में नहीं बल्कि भारत के अन्य आध्यात्मिक परंपराओं में भी निहित हैं। क्योंकि बुद्ध के समय में, भारत में कई आध्यात्मिक मतवाद और दार्शनिक विचार काफी समृद्ध थे। लेकिन बुद्ध ने इन सभी मौलिक विचारों और आध्यात्मिक मतवादों को एक साथ किया जो मौजूदा प्रवृत्ति से एक क्रांतिकारी प्रस्थान हैं। इसलिए भगवान बुद्ध की समृद्ध शिक्षाओं के परिणामस्वरूप धीरे-धीरे नालंदा, विक्रमशिला, तक्षशिला, ओदंतपुरी तथा सभी महान आध्यात्मिक शिक्षा केंद्र स्थापित हुए। यहां पर बहुत सारे अन्वेषण और व्याख्या की आवश्यकता थी क्योंकि बौद्धिक और दार्शनिक सामग्री इतनी समृद्ध है कि इसे और स्पष्टीकरण और व्याख्याओं की आवश्यकता है। इसके अलावा, अन्य परंपराओं के और भी बहुत सारे आलोचक हुआ करते थे क्योंकि उस समय भारत में दार्शनिक मतवादों के बीच पारस्परिक विचार-विमर्श की बहुत मजबूत बौद्धिक परंपरा थी जो मुझे लगता है कि मानव इतिहास में दुनिया के किसी भी हिस्से में नहीं देखी गई होगी। तथापि, भारत में इस समृद्ध स्तर के विचार-विमर्श के कारण बौद्ध धर्म ने न केवल दार्शनिक क्षेत्र में बल्कि ज्ञान-मीमांसा, तर्कशास्त्र और कई अन्य क्षेत्रों में भी बाकी दार्शनिक मतवादों के साथ विचार-विमर्श करने में एक प्रमुख भूमिका निभाई है।

जैसा कि मैंने पहले उल्लेख किया है, नालंदा के विद्वानों ने वास्तविकता की प्रकृति और कई अन्य क्षेत्रों और कार्यक्षेत्रों में खोज और विश्लेषण करने वाले सैकड़ों हजारों ग्रंथ तैयार किए। बाकी मतवादों के साथ विचार-विमर्श सहित साधना के द्वारा नालंदा परंपरा ने दार्शनिक और बौद्धिक प्रणाली की भारतीय परम्परा और इसके परिणामस्वरूप आध्यात्मिक तंत्र को आगे बढ़ाने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यह देखा जा सकता है कि भारत की मुख्य भूमि में बौद्ध धर्म के लुप्त होने के बाद, आदान-प्रदान और विचार की पूरी प्रवृत्ति ही खत्म हो गई है। इससे पता चलता है कि बातचीत की प्रवृत्तत में बौद्ध धर्म ने कितनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसलिए, मैंने पहले कहा इन महान मठवासी शिक्षा केंद्रों ने भारतीय बौद्धिक और दार्शनिक मतवादों और कई अन्य क्षेत्रों को आगे बढ़ाने में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। उदाहरण के लिए बौद्ध धर्म में एक बहुत ही कम ज्ञात अवधारणा धातु विज्ञान है। आचार्य नागार्जुन धातु विज्ञान के ज्ञान के लिए जाने जाते थे। यदि आप खुदाई किए गए नालंदा क्षेत्र का दौरा करेंगे तो आप कुछ ऐसे स्थान पा सकते हैं जहाँ कहा जाता है कि धातु विज्ञान के प्रयोग और अभ्यास आज भी हो रहे हैं। न केवल इन विषयों में बल्कि ब्रह्मांड विज्ञान, कविता, व्याकरण, कला, चिकित्सा विज्ञान और इस तरह की चीजों में भी, इसका बहुत बड़ा क्षेत्र है। एक बात जानना जरूरी है कि नालंदा और विक्रमशिला वह महान मठवासी संस्थान थे, जहां एक परिसर के भीतर सभी उपलब्ध विषयों के अध्ययन की प्रवृत्ति शुरू हुई थी। उसके आधार पर यह प्रथा यूरोप और पश्चिमी दुनिया में फैली है। इस तरह से शेष विश्व में विश्वविद्यालय की अवधारणा और नामकरण की शुरुआत हुई।

तिब्बत में बौद्ध धर्म का प्रवेश और परिचय तिब्बत के महान धर्म सम्राटों- सोंगत्सेन गम्पो,

ट्रिसोंग डेट्सन और त्रि राल्पचेन ने कराया था। इन तीन महान राजाओं ने तिब्बत को बौद्ध धर्म और अन्य भारतीय ज्ञान परंपराओं से परिचय कराया था। इनके नेतृत्व में महान निर्णय लिए गए थे। उनमें से दो सबसे महत्वपूर्ण थे, महान गुरु शांतरक्षित (शिवत्सो) की सलाह पर बुद्ध की शिक्षाओं को लेकर रचित सभी साहित्य और भारतीय आचार्यों के भाष्यों का तिब्बती भाषा में अनुवाद किया जाना चाहिए ताकि यह तिब्बती लोगों के लिए आसानी से उपलब्ध हो सके। उस सलाह का पालन करते हुए कई अनुवाद केंद्र स्थापित किए गए थे। दूसरी सलाह यह थी कि एक आध्यात्मिक समुदाय की स्थापना की जाए। इससे तिब्बत में कई मठवासी संस्थाओं को विकसित होने में मदद मिली। तिब्बती युवाओं को बौद्ध धर्म और अन्य संबंधित क्षेत्रों में अनुवाद और शिक्षित करने के इस विचार के परिणामस्वरूप, तिब्बती सम्राटों ने सैकड़ों युवाओं को महान भारतीय मठों के संस्थानों में अध्ययन करने के लिए भारत भेजा था। सैकड़ों भारतीय आचार्यों को तिब्बत में आमंत्रित किया गया था। ऐसा अन्य देशों में नहीं हुआ है, जहां से सैकड़ों विद्वानों को चयनित कर तिब्बत आमंत्रित किया गया हो। इनमें से कई विद्वान जीवन भर तिब्बत में रहे और उन्होंने कई पुस्तकें लिखीं। इनमें से कई का तिब्बती में अनुवाद किया गया है। कुछ विद्वानों ने तिब्बती में भी लिखना शुरू किया था। बाद में फिर अनुवाद हुआ, जैसा कि मैंने कहा, यह बहुत ही एतिहासिक क्षण था। अनुवाद की शुरुआत बहुत ही व्यवस्थित योजना के साथ हुई। ग्रंथों का अनुवाद किया गया और पाठ का प्रत्येक अनुवाद एक तिब्बती अनुवादक द्वारा भारतीय गुरुओं के सहयोग से किया गया था, ताकि मूल ग्रंथ की भाषा और अनुवाद की गई भाषा में किसी भी तरह का अंतर और गलती न हो। साथ ही, इन ग्रंथों को संशोधित और संपादित करने के लिए बहुत सारी प्रक्रियाओं को अपनाया गया था। इस तरह तिब्बती अनुवाद को मानव इतिहास में अब तक के सर्वश्रेष्ठ अनुवादों में से एक माना जा रहा है। इन अनुवादों में, न केवल विषयगत अर्थों को बनाए रखा गया था, बल्कि शाब्दिक अर्थों को भी बनाए रखा गया था। यह अनुवाद पाठ को मूल संस्कृत पाठ के इतना करीब है कि शब्दों के मूल रूप, यहां तक कि शब्दों के प्रत्यय और उपसर्गों को भी ध्यान में रखा जाता है। इसके अलावा, शब्दों का इसी तरह का रूप बनाया गया था कि तिब्बती भाषा में संस्कृत शब्दों और वाक्यों के शाब्दिक और विषयगत अर्थों की पूरी समझ को बरकरार रखा जा सके। इसलिए हम कह सकते हैं कि आज भी तिब्बती अनुवादों में इसकी शुद्धता और प्रामाणिकता को बनाए रखा गया है और यह अत्यधिक सम्मानित और बहुत प्रसिद्ध है। अतः हम कह सकते हैं कि साहित्य के मूल पाठों को वापस लाने की दृष्टि से यह बड़ी मेहनत और उत्कृष्टता के साथ किया गया था।

दूसरा भाग ज्ञान का अगली पीढ़ियों में हस्तांतरण का है। उन अनूदित कार्यों से संबंधित ज्ञान का हस्तांतरण भी भारतीय आचार्यों की ज्ञान परंपराओं में इतने व्यवस्थित और प्रामाणिक रूप से किया गया कि बुद्ध के समय से तिब्बत में हुए इस ज्ञान का पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरण निर्बाध

विरासत और मूल रूप में ही बना रहा। इस तरह दूसरा भाग ज्ञान प्रणाली का अगली पीढ़ियों में संचरण का है। फिर सबसे महत्वपूर्ण बात जो इन सभी बौद्धिक कवायदों के मूल में है, वह है साधना और अनुभूति। साकार और आध्यात्मिक परंपरा और प्रसारण भारत के उन महान और उच्च अनुभवी आध्यात्मिक गुरुओं और विद्वानों के माध्यम से हुआ जिसने बुद्ध के समय से आए पाठों को जस का तस बनाए रखा। उन्हीं से यह आध्यात्मिक संचरण और अनुभूति का संचरण तिब्बत में आया। इसलिए तीन परतों में, साहित्य का पाठ्य भाग, पाठ का मूल रूप, अनुभूति और ज्ञान प्रणाली का प्रसारण तिब्बत में बरकरार रहा और एक हजार से अधिक वर्षों तक संरक्षित रहा है। यह तिब्बती बौद्ध धर्म की एक विशेषता या विशिष्टता है। साथ ही अनुवाद का कार्य है जो साहित्य का विशाल हिस्सा है। यह लगभग 5000 ग्रंथों का हुआ। ऐसी गतिविधि किसी अन्य भाषा से दूसरी भाषा में नहीं देखा जा सका है। इस तरह से अनुवाद कार्यों की संख्या इतनी विशाल है। फिर सटीकता और प्रामाणिकता के मामले में निश्चित रूप से यह मानव इतिहास में एक महान कार्य है। तिब्बती आचार्यों ने 11वीं शताब्दी से ही भाष्य लिखना शुरू कर दिया था। तिब्बती विद्वानों द्वारा लिखित टिप्पणियों की बड़ी संख्या है। इस संदर्भ में मैं दर्शनशास्त्र के कुछ ग्रंथों का यहां उदाहरण देना चाहूंगा। उदाहरण के लिए, उमा त्सवा शेरप या मास्टर नागार्जुन की मूलाध्यायकारिका माध्यमिका दर्शन का मूल पाठ और मुख्य ग्रंथ है। इस पाठ की भारतीय आचार्यों द्वारा लिखी गई टिप्पणियों के जो अनुवाद हमारे पास तिब्बती में है, उनकी संख्या आठ है, जबकि तिब्बती विद्वानों ने पच्चीस भाष्य लिखे हैं। मध्य पथ (उमा जुग्पा) माध्यमिका अवतार में प्रवेश करने के संदर्भ में, भारतीय आचार्यों द्वारा तीन भाष्य और तिब्बती आचार्यों द्वारा साठ भाष्य लिखे गए हैं। इसी तरह, आचार्य चंद्रकीर्ति द्वारा ज्ञान मीमांसा और तर्क का बहुत प्रसिद्ध पाठ प्रमाणवर्तिका पर भारतीय आचार्यों द्वारा बारह भाष्य और तिब्बती विद्वानों द्वारा लगभग पाँच सौ भाष्य लिखे गए हैं। इसी तरह अभिधर्मकोश (नगोनपा ज़ो) के मामले में, जो कि मन की प्रकृति, ब्रह्मांड विज्ञान और इस तरह की चीजों से संबंधित है उसे आचार्य वसुबंधु द्वारा लिखा गया है। इस पर भारतीय विद्वानों द्वारा पांच भाष्य लिखे गए हैं जबकि तिब्बती विद्वानों द्वारा सौ भाष्य लिखे गए हैं।

मठवासी आचार संहिता के ग्रंथ विनय पर भारतीय विद्वानों द्वारा लिखित पांच भाष्य है और तिब्बती विद्वानों द्वारा पचास भाष्य हैं। न केवल आध्यात्मिक और दार्शनिक ग्रंथों में, बल्कि तिब्बती आचार्यों ने तिब्बती भाषा में भी संस्कृत व्याकरणिक कार्यों का अनुवाद किया था। कल्प व्याकरण पर भारतीय आचार्यों द्वारा तीन भाष्य और तिब्बती आचार्यों द्वारा पच्चीस भाष्य लिखे गए हैं। पाणिनि व्याकरण पर भारतीय आचार्यों द्वारा एक और तिब्बती आचार्यों द्वारा चालीस भाष्य लिखे गए हैं। आपकी जानकारी के लिए बता दें कि तिब्बती भाषा में अनूदित कुछ संस्कृत व्याकरणिक ग्रंथ हैं जो इन दिनों भारत में न तो ज्ञात हैं और न ही सुने जाते हैं। उनमें से एक मंजुश्री व्याकरण है। मैं भारतीय विद्वानों और श्रोताओं को कभी-कभी यह बताता था कि तिब्बती आचार्यों ने उन कई

ग्रंथों का अनुवाद किया है जो भारत में पूरी तरह से खो गए हैं और व्याकरणिक ग्रंथों के संदर्भ में, मंजुश्री व्याकरण की भारत में कोई जानकारी नहीं है। चंद्र व्याकरण का न केवल अनुवाद किया गया है बल्कि मठवासी संस्थानों में इसे पढ़ाया भी जाता है। एक समय के बाद यह परंपरा भारत में लगभग खो चुकी है लेकिन हाल ही में इसे पुनर्जीवित किया गया है। तो ऐसी बहुत सी बातें हैं। तिब्बत में पांच या छह व्याकरणिक परंपराएँ पहुंची हैं। काव्य कृतियों के संदर्भ में बात करें तो इसमें भारतीय आचार्यों द्वारा एक भाष्य है जबकि तिब्बती आचार्यों द्वारा एक सौ भाष्य लिखे गए हैं। यह सिर्फ साहित्य भंडार का सिरा है जिसे मैंने अभी यहां बताया है। तो आपको बता दें कि तिब्बती आचार्यों द्वारा लिखी गई बड़ी संख्या में कृतियां हैं। और यह केवल भाष्यात्मक रचनाएँ नहीं हैं, तिब्बती आचार्यों द्वारा लिखी गई बहुत सारी स्वतंत्र रचनाएं भी हैं। अतः हम यह कह सकते हैं कि तिब्बत की जनसंख्या के अनुपात में वहां साहित्य की रचनाएं अन्य देशों और राष्ट्रों की तुलना में बहुत अधिक है। इसलिए, इन परंपराओं को न केवल शिक्षा, अध्ययन, विद्वानों के कार्यों, बौद्धिक अभ्यासों और आध्यात्मिक तरीके से तिब्बत में संरक्षित रखा गया है बल्कि इस नालंदा परंपरा को तिब्बती आचार्यों द्वारा दर्शन, ज्ञान मीमांसा और तर्क के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान देकर आगे बढ़ाया गया है।

मैं विस्तार में नहीं जाऊंगा, लेकिन तांत्रिक विद्यालयों और विज्ञानवेद विद्यालयों के बीच ऐसी सूक्ष्म बारीकियां हैं जिन्हें तिब्बती आचार्यों ने स्पष्ट किया था। विशेष रूप से आचार्य चोंखापा ने स्वतंत्रिका (रंग ग्युपा) और प्रासंगिका (उमा थेंग्युपा) विचार के बीच बहुत ही सूक्ष्म दार्शनिक मतभेदों को स्पष्ट किया था। उदाहरण के लिए, तिब्बती आचार्यों ने नालंदा परंपरा की उन्नति में महत्वपूर्ण योगदान दिया था, जो मुझे अक्सर लगता है कि भले ही नालंदा विश्वविद्यालय भारत में नष्ट या विलुप्त हो गया, लेकिन नालंदा परंपरा जैसी का तैसी तिब्बत में चली गई। अतः हम कह सकते हैं कि नालंदा परम्परा न केवल जीवित है बल्कि तिब्बती आचार्यों द्वारा इस परम्परा को आगे बढ़ाया गया। एक कहावत यह भी है कि तिब्बत की घाटियाँ, मठों से भरी हुई हैं जबकि पहाड़ों की गुफाएँ ध्यानियों और उच्च सिद्ध आध्यात्मिक गुरुओं से भरी पड़ी हैं। इन मठों और गुफाओं में अभ्यास करने वालों और विद्वानों के ज्ञान की लहरें आम लोगों तक पहुंचीं जिससे लोगों के मन में शांति आई और पूरी संस्कृति को इसने बेहद शांतिपूर्ण बना दिया। आध्यात्मिकता और ज्ञान प्रणाली केवल आध्यात्मिक समुदाय के भीतर ही नहीं रही, बल्कि सामाजिक जीवन और आम लोगों के जीवन में भी प्रवेश कर गई। तो यह कहा जा सकता है कि तिब्बत में कई महान मठवासी संस्थान फले-फूले। जैसे नालंदा, ओदंतपुरी, विक्रमशिला और उन सभी मठों को तिब्बत में छात्रवृत्ति मिली और उनका काफी विकास हुआ। इसका प्रतिबिंब संघों, छात्रों तथा उन मठों में मौजूद विद्वानों की संख्या के रूप में सामने आया। उन महान मठों में अध्ययन के लिए चीन, मंगोलिया, रूस, भूटान और नेपाल सहित विभिन्न देशों के लोग और कभी-कभी जापान से भी लोग आते रहे। इसके

परिणामस्वरूप तिब्बत से आया बौद्ध धर्म और तिब्बती परंपरा इन देशों तक पहुंच गई। हम अभी भी इन क्षेत्रों में अनुरक्षित तिब्बती बौद्ध परंपराओं की उपस्थिति देख सकते हैं। चीनी कम्युनिस्ट शासन द्वारा तिब्बत पर कब्जे के कारण परम पावन और तिब्बत के कई आध्यात्मिक गुरुओं ने निर्वासन में शरण लिया। बेशक यह तिब्बत के इतिहास में सबसे काला समय रहा है, लेकिन यह बौद्ध धर्म और तिब्बती संस्कृति के लिए वरदान सिद्ध हुआ है।

तिब्बती संस्कृति जो बर्फीले पहाड़ों की बीच में अलग-थलग रह गई थी, एक बार बाहर आने के बाद यह बाकी दुनिया के लिए उपलब्ध हो गई। और अंततः इसे तिब्बती बौद्ध धर्म के रूप में जाना जाने लगा। इसे पहले रहस्यमय और लामावाद या ऐसा ही कुछ और के तौर पर जाना जाता था। धीरे-धीरे जब विद्वानों और छात्रों ने अध्ययन किया और तिब्बत में बौद्ध परंपरा को गहराई से जाना तो फिर धीरे-धीरे लोगों ने इसे एक बहुत ही गंभीर बौद्धिक विषय और महत्वपूर्ण आध्यात्मिक परंपरा के रूप में स्वीकार करना शुरू कर दिया। तिब्बती परंपरा के बौद्ध धर्म कई विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों, स्कूलों और आम जनता के बीच में आध्यात्मिक गुरुओं के नेतृत्व में कई धार्मिक केंद्रों के माध्यम से पहुंचने लगा। सामान्य तौर पर विश्व में बौद्ध धर्म की तीन परंपराएँ उपलब्ध हैं। एक थेरवाद परंपरा है, जो विशेष रूप से पाली परंपरा पर आधारित है। दूसरा चीनी बौद्ध धर्म है जिसे चीनी बौद्ध धर्म के तौर पर भी जाना जाता है और जो नालंदा से आई संस्कृत परंपरा पर आधारित है। चीन में बौद्ध धर्म केवल कुछ विद्वानों द्वारा लाया गया था और प्रसारण उनकी रुचियों की पसंद पर आधारित था और अनुवादित ग्रंथों की संख्या लगभग एक हजार थी। चीन में इसका अध्ययन करने के लिए अधिक दार्शनिक, ज्ञानमीमांसा और तर्कशास्त्रीय ग्रंथों को नहीं लाया गया। दूसरी ओर, जैसा कि पहले चर्चा की गई, तिब्बती परंपरा के अनुसार, ग्रंथ सूत्र, तंत्र, बौद्धिक प्रणाली, दार्शनिक प्रणाली, ज्ञानमीमांसा प्रणाली, तर्क प्रणाली और अभ्यास की मजबूत आध्यात्मिक परंपराएं व्यापक हैं।

इनके साथ ही तिब्बती बौद्ध धर्म बाकी देशों में फैल गया। पिछले तीस या चालीस वर्षों में कई रचनाओं का मुख्य रूप से अंग्रेजी और फिर अन्य भाषाओं में अनुवाद किया गया है। हजारों कृतियों का अनुवाद, लेखन और शोध भी किया गया है। इन गतिविधियों के साथ, तिब्बत की बौद्ध परंपरा पश्चिम में काफी प्रसिद्ध हो गई और जैसा कि मैंने पहले कहा यह तिब्बती बौद्ध धर्म के रूप में जाना जाने लगा जो मुख्य रूप से नालंदा की एक बहुत व्यापक परंपरा है। यह परंपरा अपने निरीक्षण और विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण के साथ वैज्ञानिक प्रणाली के समान पाया जाता है और इसने वैज्ञानिकों, दार्शनिकों और अन्य बुद्धिजीवियों का ध्यान आकर्षित किया है। इसलिए परम पावन पिछले 30 वर्षों से वैज्ञानिकों के साथ संवाद कर रहे थे। परिणामस्वरूप तिब्बती बौद्ध परंपरा का तंत्रिका विज्ञान, नैदानिक विज्ञान, जीव विज्ञान और मनोविज्ञान में बहुत महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उनके शोध के परिणाम में बौद्ध अनुयायियों और दार्शनिकों के सहयोग से इतने सारे महान

निष्कर्ष निकाले गए हैं। इन प्रथाओं और शोधों के परिणामस्वरूप, वैज्ञानिक क्षेत्रों पर अत्यधिक प्रभाव पाया गया है क्योंकि बौद्ध मनोवैज्ञानिक प्रणाली मन और मानसिक प्रणाली की गहराई और मन की प्रकृति, मन के कारणों और स्थितियों और नकारात्मक भावनाओं को नियंत्रित किया जा सकता है, और सकारात्मक भावनाओं को बढ़ाया जा सकता है। नतीजतन, यह दिखाता है कि हम एक शांतिपूर्ण जीवन का प्रबंधन कैसे कर सकते हैं। इसलिए ये परंपराएं तिब्बत और तिब्बती समुदाय में न केवल सैद्धांतिक रूप में है, बल्कि इसका पालन भी किया जा रहा है।

इसलिए ये वैज्ञानिक इन क्षेत्रों की खोज कर रहे हैं और इसके बहुत प्रभावशाली परिणाम भी आए हैं। ये परिणाम वैज्ञानिक पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं और अब स्कूलों में लागू किए जा रहे हैं और सार्वजनिक क्षेत्रों में लाए जा रहे हैं जो मन में शांति लाने में बहुत मदद करता है। परम पावन दलाई लामा की भारत में उपस्थिति और भारत स्थित विभिन्न मठों में प्रख्यात आचार्यों और विद्वानों की उपस्थिति के साथ, इसने भारत में एक महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है। उदाहरण के लिए, भारतीय सीमावर्ती क्षेत्रों से बहुत कम छात्र तिब्बत जाते थे। लेकिन अब चूंकि भारत में मठवासी संस्थान और गुरु उपलब्ध हैं, इसलिए बड़ी संख्या में छात्र दक्षिण भारत और कई अन्य स्थानों पर मठों में जा रहे हैं। प्रख्यात आचार्यों की यात्रा और निश्चित रूप से परम पावन दलाई लामा की उन स्थानों की यात्रा ने इन स्थानों को बुद्ध की साधना और शिक्षाओं का जीवंत स्थान बना दिया है। इसके साथ ही, भारत में नालंदा परंपरा को वापस लाने या पुनर्स्थापित करने की परम पावन की एक मुख्य प्रतिबद्धता रही है। परम पावन दलाई लामा के उस दृष्टिकोण के हिस्से के रूप में केंद्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान ने 1980 के दशक से ही तिब्बती स्रोतों से खोए हुए संस्कृत ग्रंथों को पुनर्स्थापित करने की एक परियोजना शुरू की है। अब तक, हम आचार्यों के लगभग एक सौ महत्वपूर्ण ग्रंथों को पुनर्स्थापित करने में सक्षम रहे हैं और इसके साथ ही परम पावन ने इस बात पर जोर दिया है कि हमें इन ग्रंथों का हिंदी भाषा में अनुवाद करना चाहिए जो न केवल विद्वानों के समुदाय के लिए उपलब्ध हो बल्कि आम जनता के लिए भी उपलब्ध हो। इसलिए हिंदी में अनुवाद भी हुए हैं और हम पिछले कई वर्षों से विशेष रूप से, हाल के वर्षों में बिहार के मुख्यमंत्री श्री नीतीश कुमार जी के अनुरोध पर कर रहे हैं।

हमने बुद्ध की शिक्षाओं, भारतीय आचार्यों के कार्यों और तिब्बती आचार्यों के कार्यों का हिंदी भाषा में अनुवाद करने का एक संयुक्त कार्यक्रम शुरू किया है। यह एक बहुत ही महत्वाकांक्षी और बड़ी परियोजना है जो कई दशकों तक चल सकती है। हमने इस परियोजना पर काम करना शुरू कर दिया है तथा इसके संदर्भ में 2019 में एक समझौता ज्ञापन (एमओयू) पर हस्ताक्षर भी किए हैं। हमारी उम्मीद है कि एक या दो साल के भीतर, हम प्रमुख ग्रंथों को पूरा करने में सक्षम होंगे। हमने शुरू से ही कुछ ऐसे ग्रंथों का चयन किया है जो आम लोगों के लिए सुलभ, समझने योग्य हैं। जब वे किताबें और अनुवाद खोलते हैं, तो वे समझ सकते हैं कि यह हमारे

जीवन के लिए प्रासंगिक है और यह समझ में आता है।

हमने उन बहुत गहरे और चुनौतीपूर्ण दार्शनिक और ज्ञानमीमांसा ग्रंथों को नहीं लिया है। हमने कुछ बहुत ही सामान्य ग्रंथों को चुना है ताकि यह आम लोगों के लिए भी उपलब्ध हो सके। बड़े नहीं बल्कि कुछ छोटे आकार के ग्रंथों का चुना गया है और हम इन्हे दो वर्षों के भीतर सौ से अधिक ग्रंथों के अनुवाद करने की उम्मीद कर रहे हैं। फिर निश्चित रूप से शुरू में तिब्बती भाषा में संकलित विज्ञान और दर्शन के खंडों की शृंखला और बौद्ध धर्म के विज्ञान और दर्शन पर कई खंड का बाद में अनुवाद किया जाएगा। अब इन ग्रंथों को अन्य भाषाओं में अनुवाद किया जा रहा है, जिन्हें हाल ही में परम पावन दलाई लामा के निर्देश और पहल के साथ संकलित किया गया है ताकि दुनिया के सामने बौद्ध धर्म, बौद्ध धर्म के दर्शन और बौद्ध धर्म को दुनिया के सामने लाया जा सके। उन्हें तीन अलग-अलग प्रकार के कार्यक्षेत्र और फिर बौद्ध धर्म के विज्ञान और बौद्ध धर्म के दर्शन को प्रस्तुत करना है, जो कि दुनिया के सामने लाने के लिए एक अकादमिक सामग्री है।

इससे मुझे लगता है कि यह नालंदा परंपरा के बारे में अधिक रुचि रखने वाले पाठकों और छात्रों के लिए एक महान अवसर साबित होगा। नालंदा परंपरा मन की आंतरिक दुनिया की खोज करती है, जैसे आधुनिक विज्ञान भौतिक दुनिया की खोज करता है। इसी तरह, उन दोनों का एक ही तरह का दृष्टिकोण, विश्लेषणात्मक और खोज बहुत ही निष्पक्ष तरीके से किया गया है। यह मुख्य कारण है कि कैसे बौद्ध धर्म और विज्ञान एक साथ आए और समान खोजी और विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण की प्रकृति के कारण वे संयुक्त रूप से बातचीत करने में इतना बड़ा काम कर रहे हैं। बौद्ध धर्म में, आंतरिक दुनिया को इतने बड़े विस्तार के साथ खोजा जाता है, मन को प्रबंधित करने और विनियमित करने की प्रणाली प्रदान करता है और फिर अपने दिमाग पर काम करके खुद को और अधिक शांतिपूर्ण बनाने के लिए आगे बढ़ने का आध्यात्मिक मार्ग दिखाता है। ऐसा करने के लिए हमें मन की प्रकृति, मन कैसे काम करता है और मानसिक कारक कैसे काम करता है और बौद्ध मन के विवरण द्वारा प्रदान किए गए विषयों पर शिक्षित होने की आवश्यकता है।

अंत में, मैं अपने सभी श्रोताओं विशेष रूप से तिब्बती युवाओं और तिब्बती समुदाय से अपील करना चाहूंगा कि हमें इस संस्कृति का संरक्षण करना चाहिए। इस संस्कृति का संरक्षण करना केवल परिक्रमा और साष्टांग दंडवत नहीं है। बेशक ये बहुत लाभ देने वाले हैं और हमारी परंपरा का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। लेकिन बुद्ध की शिक्षा, परंपरा और सिद्धांत का वास्तविक सार अध्ययन करना, ज्ञान प्राप्त करना और फिर साधना के माध्यम से उन्हें आत्मसात करना और बोध प्राप्त करना और भी जरूरी है। जब तक हम इन दो चीजों को एक साथ नहीं जोड़ लेते, समझ, बौद्धिक समझ और आध्यात्मिक बोध, बुद्ध सिद्धांत पूरा नहीं हो सकता है। एक व्यक्ति के

जीवन में, हम एक बेहतर समझ प्राप्त कर सकते हैं और एक बेहतर आध्यात्मिक बोध प्राप्त कर सकते हैं और अपने आप को खुश कर सकते हैं। ऐसा करने के लिए, हमें ज्ञान की बौद्ध प्रणाली, दर्शन की प्रणाली, मन की प्रणाली को समझने और अध्ययन करने की आवश्यकता है ताकि हम आंतरिककरण और अवतार के माध्यम से उन चीजों की साधना और कार्यान्वयन कर सकें। मैंने सोचा कि मुझे इस बारे में अपील करनी चाहिए। बौद्ध परंपरा सतही नहीं है, यह अत्यंत गहन है और इसलिए इन परंपराओं को बनाए रखने और संरक्षित करने के लिए हर किसी को उनका अध्ययन और अभ्यास करना चाहिए और उन्हें आत्मसात करना चाहिए। अन्यथा यह पूर्ण बौद्ध धर्म नहीं बन पाएगा। इसलिए इन्ही अपीलों के साथ, मैं एक बार फिर परम पावन दलाई लामा को उनके दीर्घायु होने और सभी सत्वों के लिए इच्छाओं की पूर्ति के लिए अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूं।

आपका बहुत-बहुत धन्यवाद।

लोपोन लोबसंग त्सुलट्रीम

सहायक प्रोफेसर, केंद्रीय बौद्ध विद्या संस्थान (समवत विश्वविद्यालय), लद्दाख

टाशी देलेक, नमस्ते। सर्वप्रथम, आप सभी लोगों को नमस्कार। आप सभी लोगों को ज्ञात होगा कि वर्ष 2020 को, हिमाचल प्रदेश स्थित धर्मशाला केंद्रीय तिब्बती प्रशासन द्वारा 2020 को परम पावन चौदहवें दलाई लामा जी को कृतज्ञता अर्पण कर इस अनमोल वर्ष को कृतज्ञ वर्ष घोषित किया है।

इस अनमोल एवं पुण्य वर्ष को हर्षोल्लास के साथ मनाने के लिए अनेक प्रकार के कार्यक्रमों का आयोजन किया जा रहा है। उनमें से एक कार्यक्रम है परम पावन चौदहवें दलाई लामा जी के अनमोल रत्न रूपी चित्त से उत्पन्न उनकी चार प्रतिबद्धताएं व प्रतिज्ञा पर ऑनलाइन बातचीत श्रृंखला का आयोजन किया गया है। इस कार्यक्रम को अनेक भाषाओं में रखा गया है उनमें से मुझे संबंधित अधिकारियों ने हिंदी भाषा में परम पावन चौदहवें दलाई लामा जी के अनमोल चित्त से उत्पन्न प्रथम प्रतिबद्धता, जो कि मानव मूल्य के उत्थान एवं विकास के विषय पर अपने विचार रखने को कहा गया है।

जब यह निमंत्रण मुझे प्राप्त हुआ उस समय मैं अपने आपको बहुत भाग्यशाली और धन्य महसूस हुआ, क्योंकि परम पावन चौदहवें दलाई लामा जी जैसी शख्सियत को आधुनिक विश्व, समाज और काल में सबसे महान माना जाता है। इस महान शख्सियत के अनमोल रत्न रूपी चित्त से उत्पन्न चार प्रमुख प्रतिबद्धताओं में से पहली प्रतिबद्धता के विषय पर अपनी राय साझा करने का अवसर मिला है। इस वजह से मैं स्वयं को धन्य और भाग्यशाली महसूस कर रहा हूँ। इसके लिए मैं अंतराष्ट्रीय संबंध एवं सूचना विभाग (केंद्रीय तिब्बती प्रशासन) संबंधित सभी अधिकारियों और आयोजकों को तहे दिल से धन्यवाद कहना चाहता हूँ।

परम पावन दलाई लामा जी की प्रथम प्रतिबद्धता- मानवीय मूल्यों का उत्थान एवं विकास करना है। यह पहली प्रतिबद्धता या प्रतिज्ञा है। आप सभी को ज्ञात है कि परमपावन दलाई लामा जी की चार प्रतिबद्धताओं को लोगों के सामने रखने के लिए और इसे लोगों में साझा करने की आवश्यक क्यों पड़ी। क्योंकि आधुनिक समाज और विश्व, विकास के नाम पर तीव्र गति के साथ विनाश की ओर जा रहा है। यह सब विचार और अवधारणा लोगों के मन में बसे हुए हैं।

वास्तव में मानव जीवन का लक्ष्य क्या हैं, अगर हमें पूछे तो इसमें कोई संदेह नहीं है, कि हम सभी सुख, शांति एवं हर्षोल्लास के साथ जीवन जीना चाहते हैं। जीवन का प्रथम उद्देश्य सुख को प्राप्त करना है।

उस सुख को प्राप्त करने के लिए लोगों को एक इस तरह की अवधारणा जो सुख को प्राप्त करने के लिए एक साधन का पालन करना होता है अर्थात् एक साधन का अनुकरण करना

होता है। परन्तु सुख को प्राप्त करने के लिए लोगों के मन में भौतिक विचार इस तरह का है कि जब तक धन, दौलत, यश और प्रसिद्धि हमारी जिंदगी में हासिल नहीं होगी तब तक सुख की प्राप्ति असंभव है।

इसलिए लोगों ने इस तरह के विचार बना रखे हैं कि अगर सुख को प्राप्त करना हो तो धन, दौलात, यश और प्रसिद्धि को हासिल करना ही होता है। इसलिए यह जो भौतिक विचार के कारण लोगों के बीच में धन, दौलात, यश और प्रसिद्धि को प्राप्त करने की होड लगी हुई है और उसको प्राप्त करने के लिए लोगों के बीच अत्यथिक की भावना बढ़ रही है।

इसके चलते लोगों में शांति, सुख, चैन तथा अमन नहीं हो पा रहा है। यह क्यों हुआ हैं क्योंकि लोग शांति चाहते है, सुख चाहते है, चैन चाहते है, अमन चाहते हैं परन्तु उसको प्राप्त करने के लिए लोगों के मन में जो गलत विचार एवं अवधारणा बसे हुये हैं कि भौतिक भोग-विलास को प्राप्त करना, जब तक भौतिक भोग-विलास को प्राप्त नहीं करेंगे तब तक सुख पाना असंभव सा है।

यह जो सबसे बड़ी गलत अवधारणा के कारण लोगों का मन अनेक प्रकार की परेशानियों से गुजर रहा है। इसको देखकर, इसके मद्देनजर अर्थात् इसको अवलोकन करके परम पावन दलाई लामा जी ने सबसे पहली प्रतिबद्धता - मानवीय मूल्यों के उत्थान के लिए प्रतिज्ञा ली है। सर्वप्रथम उन्होंने लोगों को इस तरह की परेशानियों से दूर करने के लिए सबसे पहले लोगों के मन में ऐसी अवधारणा एवं विचार उत्पन्न कराने की जरूरत महसूस की है। क्योंकि लोग परेशानियों से गुजर रहे हैं इसका मुख्य कारण उस गलत अवधारणा है। इस गलत अवधारणा को सम्यक् अवधारणा में परिवर्तित् करने के लिए उन्होंने सबसे पहली प्रतिबद्धता, मानवीय मूल्य और उनके उत्थान को जानना अत्यंत महत्वपूर्ण समझ कर उन्होंने इस बात को लोगों के बीच साझा करने के लिए प्रतिज्ञा तथा प्रण लिया है।

लोगों को सुख, चैन और शांतिपूर्ण जिन्दगी प्राप्त करना हो तो सबसे पहले मानवीय मूल्यों को समझना अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। मानवीय मूल्य क्या है? इसके ऊपर उनका कहना है कि मानवीय मूल्य सभी मानव जातियों के मन में अनादिकाल से, सदियों से , हमेशा से, हमारे अंदर सहज रूप से बसे हुए, सहज रूप से विद्यमान, हमारे अंदर जो अच्छाई है जिसको हम मानवता के नाम से जानते हैं। जिसको हम ह्युमैनिटी के नाम से भी जानते हैं। जिसको हम करुणा के नाम से भी जानते हैं।

यह जो हमारे मन में सहज रूप से, स्वाभाविक रूप से, आदिकाल से बसी हुई हमारे मन की सबसे बड़ी शक्ति है, वह है अच्छाई की भावना, मानवता की भावना, करूणा की भावना यही मानवीय मूल्य हैं। उनका कहना है कि धन, दौलत, यश तथा प्रसिद्धि मानव के मूल्य नहीं हैं। यह एक सहायक है, जिन्दगी जीने का एक साधन है।

मानवीय मूल्य हमारे अंदर अनादिकाल से बसे हुए करूणा, अच्छाई, मानवता और सकारात्मक भावना है असल में यही मानवीय मूल्य हैं। इस बात को समझना अत्यंत महत्वपूर्ण है। उदाहरण के तौर पर अच्छाई की बात जब हम करते हैं तो अच्छाई का मतलब यह है कि आप सुख चाहतें हैं, उसी तरह आप जैसे लोग भी सुख चाहतें हैं। आप दुख नहीं चाहतें हैं, उसी प्रकार आप जैसे लोग भी दुख नहीं चाहतें हैं, अर्थात् सुख, दुख, चाह और अनचाह में आप और आप जैसे लोग में भिन्न नहीं है यानि एक समान है।

जब यह समझ हमारे मन में आएगी तो उस समय हमारे मन में जो सदियों से बसे हुए जो सकारात्मक विचार उत्पन्न होगे, उसी को हम कहेंगे अच्छाई की भावना एवं मानवता की भावना। इसी को मैत्री और करुणा की भावना भी कहेंगे। इस भावना को समझना अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि मानवीय मूल्यों का होने या ना होने से मूल्यांकन किया जाता है।

परम पावन दलाई लामा जी का कहना है जब मानवीय मूल्यों को हम समझेंगे, उसी क्षण हमारे अंदर सुख, चैन, शांति और अमन सहज रूप से पैदा होगा। इसके साथ-साथ सभी बाह्य भौतिक भोग-विलास, गौण सहायक महसूस होगा। हमारे अंदर अच्छाई जो कि दूसरों की परेशानियों को देखकर मन विचलित होकर, दूसरों के प्रति मदद करने की भावना, दूसरों के कल्याण करने की भावना, इस तरह की भावना उत्पन्न होना, यही मानवीय मूल्य हैं।

मानवीय मूल्यों का मूल्यांकन करना हो तो इस आधार पर कर सकते है कि जितनी करुणा और मैत्री की शक्ति बड़ी या कम होगी उस इंसान के मानवीय मूल्य का मूल्यांकन भी उसी तरह आंकना होगा। इस तरह की मानवता की भावना को समझना लोगों को अत्यंत जरूरी हैं। करूणा, मैत्री, अच्छाई और मानवता जिस नाम से भी हम पुकारें जब तक हम इसको नहीं समझेंगे तब तक बाह्य भौतिक भोग-विलास, धन, दौलत, यश एवं प्रसिद्धि यह सब कोई फायदा नहीं करेंगे अर्थात बोझ बनेगें, जब हम इसको समझेंगे तब बाह्य पदार्थ हमारे लिए गौण सहायक बनेगें।

इसलिए परम पावन चौदहवें दलाई लामा जी का कहना है कि यह जो हमारे अंदर सदियों से, मन में सहज रूप से, मन में सहज रूप से विद्यमान यह अच्छाई, मानवता, करुणा और मैत्री की भावना को समझना होगा। इस पर ध्यान देना होगा। यही मानवीय मूल्य है।

दूसरी बात यह है कि हमारे अंदर सदियों से बसे हुए वह मानवीय मूल्यों को कैसे विकास करना है। विकास करने की प्रक्रिया पर उन्होंने कहा कि प्राचीन काल में एक विशेष धार्मिक दृष्टि को लेकर उसे साधन बनाकर हमारे अंदर बसे हुए मानवीय मूल्यों का उत्थान एवं विकास करने का प्रयास किया गया है। परन्तु यह जो प्रथम प्रतिबद्धता में परम पावन दलाई लामा जी हमेशा कहा करते हैं कि, धार्मिक श्रद्धा, विश्वास और दृष्टि बहुत सीमित है। इससे मानव का कल्याण असीम तौर पर नहीं हो पाएगा। इसलिए उन्होंने हमारे अंदर बसे हुए मानवीय मूल्य को बढ़ाने के लिए, उत्थान करने के लिए अर्थात् विकास करने के लिए, साधन के तौर पर धर्म की अपेक्षा न

कर, धार्मिक विश्वास और धार्मिक दृष्टिकोण को संयुक्त रूप से न अपनाकर, धार्मिक विश्वास और दृष्टि से परे, इस तरह का साधन जिसको अंग्रेजी भाषा में सेकुलर ऐथिकस्स कहतें हैं। जिसका उपयोग कर अर्थात् सेकुलर ऐथिकस्स साधन के माध्यम से हमारे अंदर सदियों से, सहज रूप से बसे हुए मानवीय मूल्य एवं करूणा और मैत्री को उत्थान कर पाऐंगे यह उनका कहना है।

आपको ज्ञात है कि विश्व के सात अरब लोगों में धार्मिक विश्वास और धार्मिक दृष्टिकोण का अनुसरण करने वाले और धर्म को नहीं मानने वाले लोगों की तुलना करे तो धार्मिक विश्वास को नहीं मानने वाले लोग अधिक मात्रा में है।

अगर हम पर-कल्याण के दृष्टिकोण से देखें तो, धार्मिक विश्वास और दृष्टि को न अपनाकर, धर्म के परे अर्थात् पंथनिरपेक्ष साधन को अपनाने के दो कारण हैं।

1. आधुनिक भौतिक-विज्ञान की खोज विद्या के अनुसार जाकर मानवीय मूल्यों को पहचानना।
2. असीमित रूप से समस्त प्राणियों कल्याण कर पाना ।

इस संदर्भ में परम पावन जी हमेशा कहते आए हैं कि पंथनिरपेक्ष अर्थात् धर्म के परे साधन के माध्यम से हमारे अंदर सदियों से बसे हुए उन मानवीय मूल्यों का उत्थान कर पाएंगे। इसलिए वे हमेशा कहा करते हैं कि आधुनिक विज्ञान की खोज के माध्यम से और आधुनिक विज्ञान के उपाय के माध्यम से हमारे अंदर बसी हुई करुणा, मैत्री और मानवता की उर्जा का उत्थान और विकास कर पाएंगे। इसलिए परमपावन जी ने यदा-कदा मुख्य रूप से विश्व के महान वैज्ञानिकों के साथ बैठकर कॉन्फ्रेंस करके यह सिद्ध किया है कि हमारे अंदर बसे हुए मानवीय मूल्यों की पहचान करुणा और मैत्री को ही साक्षात माना है।

इसकी निरन्तरता में उन्होंने अनेक प्रकार के विश्व के ख्याति प्राप्त वैज्ञानिकों के साथ मंच साझा कर माइंट एंड लाइफ नामक कोंफिरेंस के माध्यम से आधुनिक वैज्ञानिक खोज के आधार पर मानवीय मूल्यों को कैसे समझा जाए, इस बात को उन्होंने जोर देकर वर्तमान में भी माइंट एंड लाइफ नामक कोंफिरेंस चल रहे है। इसका मुख्य उद्देश्य हमारे अंदर बसे हुए मानवीय मूल्यों जैसे करूणा और मैत्री को कैसे लोगों के समक्ष भौतिक वैज्ञानिक खोज विद्या के माध्यम से प्रस्तुत कर पाए, अर्थात् समझा पाए, इस उद्देश्य के परिणाम स्वरूप उन्होंने वर्तमान विश्व और समाज के सामने इन बातों को सिद्ध करके लोगों के सामने रखा है। मुझे लगता है कि यह एक बहुत बड़ा ऐतिहासिक योगदान है।

उसी तरह परम पावन दलाई लामा जी ने मानवीय मूल्यों के उत्थान के लिए दो पुस्तकों की रचना की है। पहली पुस्तक एथिक्स फोर दा न्यू मिलेनियम है। इसका मुख्य उद्देश्य हमारे अंदर बसी हुई अच्छाई, मानवता एवं मानवीय मूल्यों को पंथनिरपेक्ष के माध्यम से, उसको हम कैसे समझ सकें, कैसे उस शक्ति को प्राप्त कर पाए यह पुस्तक उपाय की तौर पर है। उसी प्रकार दूसरी पुस्तक बियॉन्ड रिलिजन का विमोचन हुआ है। इस किताब के शीर्षक से पता चलता है

कि धार्मिक विश्वास से परे होकर यानि पंथनिरपेक्ष के माध्यम से अर्थात धार्मिक विश्वास और दृष्टि के आधार पर नहीं, पंथनिरपेक्ष दृष्टि के आधार पर कैसे हम हमारे अंदर बसे हुए मानवीय मूल्यों का विकास कर पाएं।

इसलिए उन्होंने इन दो पुस्तकों की रचना की है, और साथ ही यदा-कदा परम पावन दलाई लामा जी जहां भी पधारते हैं उस समय अपनी चार प्रतिबद्धताओं के बारे में लोगों से साझा करते हैं। क्योंकि ये प्रतिबद्धताएं एवं प्रतिज्ञाएं एक उपाय के तौर पर हैं। यह समस्या का समाधान के तौर पर है। मुझे लगता है कि आधुनिक विश्व में यह (चार प्रतिबद्धताएं) समय की पुकार अर्थात् समय की मांग है। उस मांग को पूरा करने के लिए उन्होंने इन चार प्रतिबद्धताओं को लोगों के सामने रखकर, लोगों को समझाने का प्रयास किया है। इसका मुख्य उद्देश्य यह है कि कैसे हमारे अंदर सहज रूप से बसे हुए मानवीय मूल्यों अर्थात करूणा, मैत्री, अच्छाई और मानवता को कैसे आगे लायें, कैसे विकास करें, उत्थान कैसे हो। हमारे अंदर सदियों से, सहज रूप से बसे हुए उस करूणा एवं मैत्री इत्यादि मानवीय मूल्यों का उत्थान और विकास होगा तब संसार में सुख, चैन, अमन और शांति कायम होगा।

इसी आशा के साथ परमपावन दलाई लामा जी की पहली प्रतिबद्धता को लोगों के सामने रखा है इसलिए मैं आप सभी लोगों को इस कार्यक्रम के माध्यम से, इस व्याख्यान के माध्यम से अनुरोध करना चाहता हूँ कि अपनी जिंदगी में सब लोग सुख चाहते हैं इसमें कोई दो राय अर्थात् दो मत नहीं हैं, यानि कि, इसमें कोई विवाद नहीं है। सुख चाहते हैं तो जैसे परम पावन दलाई लामा जी के कथन अनुसार सबसे पहले मानवीय मूल्यों को समझना होगा, मानवीय मूल्य क्या है? हमारे अंदर सहज रूप से, हमारे मन में बसे हुए करुणा की ऊर्जा, मैत्री की ऊर्जा, अच्छाई की ऊर्जा, मानवता की ऊर्जा को आगे लाए, उसका उत्थान करें, उसका विकास करें, यह इस प्रश्न का उत्तर है।

इसको समझना होगा, जब तक इसको नहीं समझेंगे, मात्र भौतिक साधन तथा भौतिक सुविधा से हम कभी भी सुख, चैन, शांति एवं अमन प्राप्त नहीं कर सकेगें। इसलिए सभी को, मैं अनुरोध करता हूँ कि हमारे मन में सहज रूप से बसे हुए सुख, चैन, शांति के आधार करुणा और मैत्री की भावना को समझने की प्रयास करना चाहिए।

इसी अपील के साथ अंत में, मैं परम पावन चौदहवें दलाई लामा जी के दीर्घायु एवं स्वस्थ जीवन की कामना करते हुए आप सभी लोगों को धन्यवाद करता हूँ। मैं आशा करता हूँ कि परम पावन चौदहवें दलाई लामा जी के चित्त से उत्पन्न यह प्रथम प्रतिबद्धता के बारे में श्रवण-चिंतन कर अपने-अपने जीवन में उपयोग एवं अभ्यास करने का अनुरोध करता हूँ। इसी के साथ समय बहुत कम और सीमित होने के कारण मैं अपनी वाणी को यही विराम देता हूँ। सभी को कोमल हृदय से धन्यवाद। थुगजेछे।

प्रो. वङछुग दोर्जे नेगी

प्रोफेसर, केंद्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, वाराणसी

परम पावन जी की द्वितीय प्रतिबद्धता सर्वधर्म समभाव पर मेरे विचार।

सर्वप्रथम मैं केंद्रीय तिब्बती प्रशासन के सूचना एवं अंतर्राष्ट्रीय संबन्ध विभाग के अधिकारियों को धन्यवाद देना चाहता हूँ, क्योंकि आप लोगों ने परम पावन दलाई लामा जी की 85वीं वर्षगांठ को उनके द्वारा प्राणी मात्र के लिए किये गये योगदान को स्मरण करने के लिए वर्ष 2020 को संकल्प के रूप में लिया है, जो निश्चित रूप से एक पुण्य का कार्य है। अपने पूजनीय लोगों की पूजा करना और अपने पूजनीय के द्वारा किये गये प्राणी मात्र के कल्याण को स्मरण करते हुये उसका ऋणी भाव को अपने अंदर पैदा करना एक पुण्य का कार्य होता है। निश्चित ही यह अनुमोदनीय और प्रशंसनीय है। इस आयोजन में मुझे भी आप ने पुण्यार्जन का सुअवसर दिया इसके लिए मैं आपको शुक्रिया अदा करना चाहता हूँ।

परमपावन दलाई लामा जी का विश्व मानव के प्रति जो योगदान है उस पर मैं एक महायानी अनुयायी होने के नाते विचार करता हूँ तो पाता हूँ कि बुद्ध और बोधिसत्त्व समय-समय पर इस संसार में भिन्न-भिन्न रूपों में जन्म लेकर प्राणियों का कल्याण करते हैं जिसे हम तथागत बुद्ध के जातकमाला से समझ सकते हैं। तथागत बुद्ध की भांति परम पावन दलाई लामा जी भी अवलोकितेश्वर के साक्षात् प्रतिमूर्ति हैं। इसलिए उनका हर एक श्वास-प्रश्वास, हर एक क्षण प्राणी मात्र के लिए समर्पित है। ऐसे में, परम पावन जी का प्राणी मात्र के लिए जो योगदान है उस पर कहना एक प्रकार से आचार्य चन्द्रकीर्ति ने माध्यमिक अवतार में कहा है, जिस प्रकार पक्षियों का राजा गरुड़ आकाश में उड़ता है तो वह वापस ज़मीन पर इसलिए नहीं उतरता है कि आकाश समाप्त हो गया है या फिर उड़ने के लिए जगह नहीं बची है, अपितु उसका उड़ान भरने की क्षमता जवाब दे जाता है। ठीक उसी प्रकार बुद्ध और बोधिसत्त्वों के योगदान तथा उनके ऋण को कहना सामान्यतः हमारे बस की बात नहीं है। एक प्रकार से उनके योगदान को बोलना महासागर को एक छोटे से घड़े में भरने के सदृश होगा, ऐसा मैं समझता हूँ।

लेकिन फिर भी मैं परम पावन दलाई लामा जी को बौद्ध धर्म के इतिहास के साथ जोड़ते हुये इस प्रकार देखता हूँ। तथागत बुद्ध ने धर्मचक्र प्रवर्तन करने के पश्चात् बौद्धधर्म का विकास और उसके द्वारा प्राणियों के कल्याण में कालांतर में अनेक विभूतियों ने संसार में जन्म लिया है। जहां दर्शन के क्षेत्र में नागार्जुन, आर्यदेव, चन्द्रकीर्ति जैसे धुरंधर तत्त्वज्ञ हुये हैं। और वहीं न्याय और प्रमाण के क्षेत्र में दिग्नाग्, धर्मकीर्ति तथा बोधिचर्या के आचरण में शांतिदेव, दीपंकर श्रीज्ञान और अभिधर्म के क्षेत्र में वसुबंधु, तथा विनय के क्षेत्र में गुणप्रभा और शाक्यप्रभा जैसे अनेक महान सिद्धाचार्य हुये हैं।

जब मैं परमपावन जी के जीवन को देखता हूँ तो शायद यह समय का तकाजा भी हो सकता है, क्योंकि यह ईक्कीसवीं सदी है जब दुनिया एक छोटे से परिवार के रूप में सीमित हो गई है। प्राचीन काल में हम वसुधैव कुटुम्बकम् की बात करते थे, तब वह एक कोरी कल्पना लगती थी, लेकिन आज जब हम ज़मीनी हकीकत को देखते हैं तो दुनिया के एक छोर से दूसरे छोर तक चौबीस घंटे में पहुंच जाते हैं। इस प्रकार दुनिया बहुत छोटी हो गया है। इसलिए आज वसुधैव कुटुम्बकम् की कल्पना एक प्रकार से हमारा प्रत्यक्ष प्रतीति है।

ऐसे में जब मैं परम पावन जी को देखता हूँ तो उन्होंने लगभग 80 से 90 भिन्न-भिन्न राष्ट्राध्यक्षों तथा अनेक वैज्ञानिकों, शिक्षाविदों, न्यूरोलॉजिस्टों और पर्यावरणविद् तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं के विशेषज्ञों के साथ मिलकर प्रतीत्यसमुत्पाद के दर्शन का उनके सम्मुख प्रतिपादन कर प्राणी मात्र के कल्याण के लिए अभूतपूर्व कार्य किया है। बौद्ध धर्म के इतिहास में पीछे मुड़कर देखेंगे तो इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर परमपावन जी के सदृश कोई दूसरा व्यक्ति मिलना कठिन है।

अध्यात्म के क्षेत्र में देखेंगे तो थेरवाद, महायान और वज्रयान तथा जितने भी बौद्ध निकाय हैं, सम्प्रदाय हैं, वे सब एक स्वर में परम पावन जी को अपने प्रतिनिधि के रूप में मानते हैं। बौद्ध धर्म के इतिहास में हमें परमपावन जैसा एक ऐसा व्यक्ति जिन्हें सभी बौद्ध सम्प्रदायों ने सार्वभौमिक रूप से स्वीकारा हो, कोई दूसरा नहीं मिलेगा। इस प्रकार जब मैं परम पावन जी को देखता हूँ तो उनका योगदान प्राणी मात्र के लिए अभूतपूर्व रहा है। जैसा कि मैंने पहले कहा उनका प्रत्येक श्वास-प्रश्वास, प्रत्येक क्षण प्राणी मात्र के कल्याण के लिए समर्पित है। ऐसे में मैं उनके योगदान पर क्या ही कह सकता हूँ, फिर भी आयोजकों ने मुझे धार्मिक सद्भाव पर परम पावन जी का योगदान के बारे में दो शब्द कहने के लिए कहा है। मैं इस पर अपना विचार रखना चाहूँगा।

जब हम धर्म की बात करते हैं, मुझे ऐसा लगता है कि व्यक्ति एक विवेकशील प्राणी होने के नाते विज्ञान और तकनीक के बगैर भी शायद जीवित रह सकता है, लेकिन धर्म या किसी आस्था के बगैर व्यक्ति सुखमय में और शांतमय जीवन नहीं जी सकता है। इसलिए हमारे जीवन में धर्म का एक प्रकार से अपरिहार्य संबंध है। जब मैं धर्म की बात करता हूँ, तो धर्म का अभिप्राय है- ‘अतनो स्वभाव धारयति इति धम्म’ अर्थात् जो अपने स्वभाव को धारण करता है वह धर्म कहलाता है। जैसा कि आग का धर्म है जलना और जलाना, पानी का धर्म है आद्रता। ठीक उसी प्रकार जब हम मनुष्य का वास्तविक स्वभाव को देखते हैं तो ऐसा लगता है कि मनुष्य का स्वभाव करुणामय है, क्योंकि बौद्ध ग्रन्थों में कहा है कि मनुष्य का चित्त ज्ञान स्वरूप, करुणा स्वरूप और परोपकार करने में सक्षम स्वपरूप है। इसे मैं एक प्रकार से चित्त का स्वभाव के रूप में देखता हूँ। क्योंकि, यदि हमें एक सेब का पेड़ उगाना हो तो सेब का बीज चाहिए। सेब

के बीज में यदि सेब का वृक्ष बनने की क्षमता न हो तो सेब का बीज सेब के वृक्ष को पैदा नहीं कर सकता। ठीक उसी प्रकार यदि हमारे चित्त का स्वभाव करुणामय, ज्ञानमय और परोपकारमय न हो तो फिर हम असीमित करुणा, असीमित प्रज्ञा तथा असीमित क्रिया-कलाप के अधिकारी नहीं बन सकते हैं।

आप इतिहास के पन्नों में देखेंगे बुद्ध, महावीर, ईसा मसीह जैसे अनेक महान संत तथा ऋषि-मुनि हुये हैं, जिनके भीतर असीमित करुणा, दया और मैत्री की भावना थी। यदि हमारे चित्त के अन्दर इन गुणों का संस्कार, स्वभाव और सामर्थ्यता नहीं रहेगी तो इनका प्रस्फुटन संभव नहीं होगा। इसलिए मैं चित्त के स्वभाव को करुणामय देखता हूँ। परमपावन जी भी बार-बार यही कहते हैं कि व्यक्ति के चित्त का स्वभाव करुणामय है। इसके लिए उन्होंने अनेक वैज्ञानिक प्रमाणों के द्वारा समझाने का प्रयास किया है।

सामान्य रूप से जब हम परीक्षण करते हैं कि चित्त का स्वभाव करुणामय है या नहीं तो मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचता हूँ कि निश्चित रूप से चित्त का स्वभाव करुणामय होना चाहिए। क्योंकि जब हम अपने चित्त के अन्दर करुणा उत्पन्न करते हैं तो हमे शांति, चैन और अमन का अनुभव होता है। हमारा मन बहुत ही शान्त हो जाता है। इससे यह सिद्ध होता है कि हमारा चित्त का स्वभाव करुणामय है। जब हम क्रोध, ईर्ष्या, राग, द्वेष के वशीभूत हो जाते हैं तो हमें परेशानी होती है, चिड़चिड़ापन होता है। इससे यह सिद्ध होता है कि यह हमारा स्वभाव नहीं है, वे विकृतियां हैं, वे आगन्तुक हैं जिनके चलते हमे परेशान होते हैं। वास्तव में धर्म का आचरण हमारे भीतर निहित करुणामय और मैत्रीपूर्ण स्वभाव को विकसित करना है।

आज समाज में धर्म की पहचान या उसकी अवधारणा को स्पष्ट करते हुये परम पावन जी ने सन् 1960 में घटी एक घटना का जिक्र करते हुये उन्होंने दो महिलाओं का उदाहरण देकर हमारे धर्म के सबंध में हमारी गलत अवधारणा को समझाते हुये कहा है कि 1960 के दशक में एक तिब्बती महिला प्रवासी के रूप में जब भारत में आई और वह अपने बच्चों को पढ़ाई के लिए एक ईसाई स्कूल में दाखिला देते है। अर्थात् ईसाई मिशनरी स्कूल ने उनके बच्चों के लिए शिक्षा-दीक्षा का व्यवस्था किया जिससे वह महिला प्रभावित होकर स्वयं भी ईसाई बन गयी। ईसाई बनने के बाद एक बार वह महिला परमपावन दलाई लामा जी से भेंट कर कहती है कि इस जीवन में तो मैं ईसाई बन गई हूँ लेकिन अगले जन्म मैं ज़रूर बौद्ध बनूँगी। उसी प्रकार परमपावन जी ने एक पोलैंड की महिला का जिक्र किया है, यह भी सन् 1960 के आसपास की बात है। वह महिला थियोसोफिकल सोसायटी मद्रास की सदस्य थी। लेकिन बाद में उनकी बौद्धधर्म में आस्था पैदा हुई और वह बौद्ध बन गयी। लेकिन कुछ समय के बाद पुनः वह अपने ईसाई धर्म मे लौटी। इस पर परमपावन जी का कहना था कि हमारे द्वारा धर्म की वास्तविकता को न समझने के कारण इस प्रकार के विचार हमारे अन्दर पैदा होते हैं और हम धर्म परिवर्तन करने लग जाते हैं।

इस घटना को मैं एक उदाहरण के साथ समझाना चाहूँगा। यह वैसा ही है जैसा कि फूल के बगीचे को देखरेख करने वाला माली फूलों का संरक्षण और देखभाल करने के लिए उसकी जड़ में पानी और खाद न डालकर केवल मखमल के कपड़े से फूल की पंखुड़ी और पत्तों की धूल को साफ करता रहे, तो वह फूल तो मुरझा जाएगा, सूख जाएगा। ठीक उसी प्रकार जब मैं धार्मिक अनुयायियों को देखता हूँ तो यह पाता हूँ कि लोगों ने अपने धर्म को छोटे-छोटे अंगों में, समुदायों में, जमातों में बांट दिया है। और धर्म के नाम पर व्रत करते हैं, उपासना करते हैं, कर्मकाण्ड इत्यादि करते हैं तथा पर्व आदि मनाते हैं। तथा कोई व्यक्ति उन कर्मकाण्डों और उत्सवों के लिए अगर दान-पुण्य करता है तो हम लोग यह मानते हैं कि अमुख व्यक्ति बहुत धार्मिक है। इसे ही हम धर्म मान बैठे हैं। इसके चलते कभी-कभी धर्म सत्य से काफी दूर हो जाता है और वह समस्या का कारण बन जाती है। यदि हम धर्म को वेशभूषा, खानपान, रीति-रिवाज के साथ जोड़ेंगे तो वह धर्म धर्म न रहकर एक सामाजिक कर्मकाण्ड बन जायेगा। इसलिए परम पावन जी का ज़ोर इसी पर है कि धर्म के सार को समझने का प्रयास किया जाए।

यही कारण है कि परम पावन दलाई लामा जी ने 2010 में 'टुवर्ड द ट्रू किनशिप ऑफ़-फेथ हाउ द वर्ल्डस रिलिजनस कैन कम टुगेदर' ग्रन्थ लिखा है, जिसमें उन्होंने सभी धर्मों के सार को संग्रहीत कर प्रस्तुत करने की चेष्टा की है। उसमें यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि सभी धर्मों का मूल करुणा, मैत्री, दया की भावना है, सहिष्णुता की भावना है। उन्होंने सभी धर्मों के उक्त सार को सभी धर्मों ने व्यक्त है किया है तथा उसी को दर्शाने के लिए इस ग्रन्थ की रचना की है। मैं समझता हूँ हम सब लोगों को जो धर्म में आस्था रखते हैं इस ग्रन्थ को एक बार ज़रूर पढ़ना चाहिए। अगर हम ऐसा करते हैं तो सभी धर्मों के प्रति हमारा भाव और आस्था बढ़ेगी। सभी धर्मों का जो एक ही उद्देश्य है मानव कल्याण करना, वह स्पष्ट हो जायेगा।

हम सब जानते हैं कि सभी धर्मों में ऋषि-मुनि तुल्य लोग हैं वे सब अपने-अपने धर्मों का अनुशीलन तथा अनुकरण करके संत महात्मा और ऋषि-मुनि हुये हैं। ऋषि-मुनि किसी एक धर्म की खासियत नहीं है, हर धर्म में मिलेंगे। इसलिए सभी धर्म मानवता की बात करती है। उदाहरण के लिए सनातन धर्म में कहा कि -

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित दुःखभाग्भवेत् ।।

अर्थात सभी प्राणी सुखी हों, सभी प्राणी निर्भय हों और सभी प्राणी आपस में एक दूसरे के साथ परस्पर सौहार्दपूर्वक रहें तथा इस धरती पर किसी भी प्रकार का दुःख का नामोनिशान न रहे। ऐसा सनातन धर्म कामना करती है। वहीं दर्शन के क्षेत्र में देखें तो सनातन धर्म में कहा है-

यत् पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे।।

एक छोटे से कण में, छोटे से पिण्ड में जिस तत्व का अस्तित्व है वही ब्राह्माण्ड में भी है। अर्थात् कण और ब्राह्माण्ड में किसी प्रकार का अंतर नहीं है। इसको यदि हम साधारण भाषा में कहें तो उनके अनुसार खंबा से लेकर ब्रह्मा तक सभी एक तत्व से बने हैं। अतः यहां पर परस्पर भेदभाव का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है। सभी एक समान हैं। आचरण के रूप में देखेंगे तो पुराण में कहा है -

परोपकार: पुण्याय पापाय परपीडनम् ।।

अर्थात परोपकार करना, परहित करना ही पुण्य है और किसी दूसरे को परेशान करना पीड़ित करना पाप है। इससे बढ़कर आचरण के क्षेत्र में और क्या विचार हो सकता है। वहीं अगर गीता में देखेंगे तो व्यक्ति को धर्म की आवश्यकता क्यों है इसको बताते हुए कहते हैं

आत्मनो मोक्षार्थं जगद् हिताय च ।।

अर्थात् धर्म की आवश्यकता व्यक्ति को अपने मोक्ष की प्राप्ति के लिए और जगत के हित के लिए है। और इसी संदर्भ में यदि हम बौद्धधर्म को देखेंगे तो पाली साहित्य में कहा है

यथा अहम तथा ऐते, यथा ऐते तथा अहम ।।

जैसा मैं हूँ वैसा दूसरा है, जैसा दूसरा है वैसा ही मैं हूँ। इसी प्रकार 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' ऐसा कहा है। अर्थात् सभी प्राणी एक समान है। अतः 'आत्मनं उपकृत्य' स्वयं अपने को उदाहरण लेकर जिस कार्य से, जिस वाणी से, जिस क्रिया-कलाप के द्वारा हमें चोट पहुंचती है वही काम किसी दूसरे के साथ भी नहीं करना चाहिए। अगर इस दृष्टि से कहा जाए तो मैं यह नहीं देखता हूँ कि धर्म के आधार पर किसी लिंग, जाति या व्यक्ति के बीच में किसी भी प्रकार का भेदभाव हो। वहीं अगर महायान बौद्धधर्म को देखेंगे तो उसमें पाएंगे कि उनका उद्देश्य ही जगत कल्याण के लिए होता है।

यथा बुद्धो भवेयं जगतो हिताय ।।

बोधिसत्व कामना करते हैं कि मैं बुद्ध बनूं लेकिन वह अपने स्वार्थ के लिए बुद्ध बनना नहीं चाहते हैं अपितु जगत का हित करने की इच्छा से ऐसी कामना करते हैं। क्योंकि जब वे जगत का हित करना चाहते हैं तो स्वयं को असमर्थ पाते हैं, स्वयं को अयोग्य पाते हैं। इसलिए वे सोचते हैं कि मुझे योग्य बनना है, मुझे स्वयं पहले बुद्ध बनना है। जब तक मैं बुद्ध नहीं बनूंगा तब तक संपूर्ण प्राणी मात्र का कल्याण नहीं कर सकता हूँ। इस प्रकार यदि महायान का साध्य देखें तो परोपकार करना साध्य है, बुद्ध बनना तो एक प्रकार से साधन के रूप में है। इसलिए, बोधिचर्यावतार में आचार्य शांति देव जी कहते हैं-

आकाशस्य स्थितिर्यावद् यावच्च जगतः स्थितिः ।
तावन्मम स्थितिर्भूयाज्जगद्दुःखानि निघ्नतः ।।

जब तक आकाश रहेगी प्राणी रहेगा, जब तक प्राणी रहेगी तब तक मैं भी इस संसार में पुनः पुनः जन्म लेते हुए लोगों का दुःख, कष्ट और पीड़ा को नाश करता रहूँ। वे ऐसी कामना एवं प्रार्थना करते हैं।

इस्लाम धर्म के कुरान में भी लिखा है 'कालिक की इबादत, ख़लक़ पर शफ़फ़ाक़त' अर्थात् इस संसार की रचयिता अल्लाह ने इस संसार की रचना की है। इसलिए, उस सृष्टिकर्त्ता की पूजा करनी चाहिए, उसके प्रति समर्पण का भाव रखना चाहिए। और उसी के साथ-साथ उसके द्वारा रचित इस जगत के प्रति दया, करुणा और प्रेम की भावना उत्पन्न करना चाहिए। इसी तरह कुरान में कहा है कि जब तक आप किसी भूखे को देखकर उसे भोजन नहीं देते हैं तथा लोगों के बीच भेदभाव उत्पन्न करते हैं तब तक आप सही मायने में मुस्लिम नहीं कहलायेंगे। इस तरह इस्लाम में किसी भी प्रकार के भेदभाव की गुंजाइश ही नहीं है। इस्लाम धर्म एक प्रकार से प्रेम, मोहब्बत और भाईचारे की बुनियाद पर आधारित है। इस चीज को हम सब को समझना पड़ेगा। इन्हीं बातों को परम पावन दलाई लामा जी ने अपने ग्रन्थों में बारंबार इंगित किया है।

वहीं पर यदि हम ईसाई धर्म में देखें तो बाइबल में कहा है - But seek ye first the kingdom of God and his righteousness, and all these things shall be added unto you. अर्थात् सृष्टिकर्त्ता परमेश्वर को पूर्ण रूप से समर्पित करो, तुम्हारी आवश्यकताएं स्वतः पूर्ण होंगे। फिर तुम्हें स्वार्थ पर केन्द्रित होकर किसी प्रकार का कार्य करने की आवश्यता ही नहीं होगी। उस परम परमेश्वर को समर्पित कर दो तो सब कुछ पूर्ण हो जाएगा। इसी प्रकार जैन धर्म में देखें तो अहिंसा का आचरण अत्यन्त ही सूक्ष्म है। सिख धर्म में देखेंगे तो उनके अन्दर सेवा भाव बहुतायत में देखने को मिलेगा जो बहुत ही आश्चर्यजनक है। इस प्रकार मैं देखता हूँ कि सभी धर्मों के संस्थापक, ऋषि-मुनियों ने तथ्यों को, संसार की वास्तविकता को समझा है। ऐसे में उनके वचनों में भेदभाव कहां से होगा। हमें इस चीज को समझना है।

परम पावन जी कहते हैं की विश्व में जितने भी भिन्न-भिन्न धर्म हैं उन सबकी आवश्यकता है। उदाहरण के लिए, हम सब मनुष्य हैं लेकिन हम सबका रूप अलग-अलग है। हम सब मनुष्य एक होते हुए भी हमारा चेहरा, शरीर, रंग-रूप अलग-अलग है। हम सब लोग बोलते हैं, बात करते हैं लेकिन हमारे बोलने की शैली, वाणी की लय सब अलग-अलग है। उसी प्रकार हम मानव मात्र एक होते हुए भी रंग-रूप भिन्न है, बोलने का तौर-तरीका भिन्न है तो सोचने का तौर-तरीका भी स्वाभाविक रूप से भिन्न ही होगा। ऐसे में कोई ऐसा एक धर्म नहीं हो सकता है जो सबको संतुष्ट करे। इसलिए सभी प्रकार के धर्मों की आवश्यकता है।

परमपावन जी कहते हैं कि धर्म तो एक प्रकार से दवाई की तरह है। जितने प्रकार के रोग होंगे उतने प्रकार की दवाई भी होगी। कोई एक प्रकार की दवाई सभी प्रकार के रोगों को नष्ट नहीं कर सकती है। भिन्न-भिन्न प्रकार के रोग हैं तो भिन्न-भिन्न प्रकार की दवाई होना तो

स्वाभाविक है। इसी प्रकार भिन्न-भिन्न प्रकार के धर्म भी भिन्न-भिन्न लोगों के संस्कार और उनके बुद्धि के स्तर एवं उनकी आवश्यकताओं के अनुसार प्रादुर्भाव हुये हैं। सभी धर्मों ने प्राणियों का कल्याण किया है।

ईसाई धर्म ने यूरोप और अमेरिका में लोगों का बहुत बड़ी मात्रा में सहयोग किया है। इस्लाम धर्म ने भी अरब आदि देशों में बहुत सहयोग किया है। उसी प्रकार बौद्ध हो, सिख धर्म हो, सभी धर्मों ने समय-समय पर प्राणियों का असीमित सुख और शांति के लिए योगदान दिया है। इसलिए सभी धर्मों का अस्तित्व ज़रुरी है। लेकिन जैसा कि मैंने पहले भी कहा कि हम लोग धर्म के सार को न पकड़कर बाह्य रीति-रिवाज, वेशभूषा, खानपान आदि इन्हीं बाह्य आडम्बरों को धर्म सोच कर बैठे हैं। यह गलत है। यह तो वैसा ही है जैसा कि यदि हम एक आम का पौधा उगाना चाहते हैं तो उसकी रक्षा के लिए हमें बाहर से बाड़ लगानी पड़ती है, अन्यथा गाय, भेड़-बकरी उसको खा लेंगे। उसी प्रकार उत्सव, पर्व, त्यौहार और संस्कृति इत्यादि ये सब चीजें एक प्रकार से बाड़ की तरह हैं। असल में वास्तविक धर्म वो नहीं हैं। वास्तविक धर्म तो बाड़ के अंदर फल देने वाला आम का पौधा है अर्थात् वास्तविक धर्म का सार तो करुणा, मैत्री और आपस में भाईचारा की भावना है। लेकिन हम उस वास्तविक धर्म को छोड़ देते हैं और बाहरी आडम्बर पर ज़ोर देकर बैठ जाते हैं। इसलिए कभी-कभी धर्म लोक कल्याण के स्थान पर समस्या की जड़ बन जाता है। मध्यकालीन युग धार्मिक कट्टरता से भरा पड़ा मिलेगा और यही नहीं बींसवीं और ईक्कीसवीं सदी में भी यह देखने को मिलता है। वर्तमान में इस कारण अनेक समस्याएं उत्पन्न हुयी हैं। इसलिए, परमपावन जी इसी पर बल देते हैं कि हमें वास्तविक धर्म के सार को समझने की आवश्यकता है।

इसकी शुरुआत हमको अपने से करनी चाहिए जैसा कि स्कॉटिश समाजशास्त्री पैट्रिक गेडेस ने सन् 1915 में कहा था ‘थिंक ग्लोबली एक्ट लोकली’। अर्थात् हमें विचार करते समय एक बृहत् समाज को लेकर सोचना है, लेकिन जब कार्य करना हो तो अपने से शुरु करना है। यह बहुत महत्त्वपूर्ण है। मुझे लगता है कि हम अध्यात्म के लोग बातें बड़ी-बड़ी करते हैं, लेकिन जब जीवन जीते हैं तो बहुत ही संकुचित जीवन जीते हैं। आज प्रायः धर्म को लोग सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, यश आदि के लिए प्रयोग करते हैं। यह अच्छी बात नहीं है। इसलिए सबसे पहले हमको अपने घर से प्रारंभ करना है, अपने मोहल्ले से शुरु करना है। आपके शहर में, आपके मोहल्ले में जितने भी भिन्न-भिन्न प्रकार के धार्मिक लोग हैं उनके साथ सद्भावना ज़रुरी है। जो व्यक्ति वास्तव में धार्मिक होगा वह कभी भी किसी को परेशान नहीं करेगा। कोई अन्धभक्त, जो बाह्य रूप-रंग को धर्म मानकर बैठा है वह दूसरों को परेशान कर सकता है, ऐसे लोगों से हमें सावधान रहना चाहिए। किसी एक व्यक्ति के गलत करने से उसके संपूर्ण अनुयायियों को हम गलत नहीं ठहरा सकते हैं। कोई एक मुस्लमान गलत करता है तो उसके चलते संपूर्ण मुस्लिम समुदाय

को दोष नहीं दे सकते हैं। मुस्लिम समुदाय में ऐसे मौलाना, ऐसे सूफी-फकीर मिलेंगे जिसकी हम कल्पना नहीं कर सकते हैं। उसी प्रकार हिंदुओं में, बौद्धों में, ईसाईयों में भी इस तरह के अनेक लोग हैं। अच्छा और बुरा सब जगह होता है। यदि कोई अपने मोहल्ले में अनुचित कार्य करता है तो उसके चलते संपूर्ण उसके समुदाय को दोषी ठहराना बहुत गलत बात होगी। अतः हमें इस पर गंभीरतापूर्वक सोचना चाहिए।

परम पावन जी कहते हैं कि हमें अन्य धर्मों का भी अध्ययन करना चाहिए। दूसरों को समझना चाहिए। बौद्धधर्म में हम प्राणी मात्र की करुणा की बात करते हैं, जबकि हम अपने परिवार तक, सगे-संबंधियों तक प्रेम की भावना नहीं रख पाते हैं। तो ऐसे में प्राणी मात्र के प्रति करुणा तो झूठी ही होगी। करुणा पैदा करना हो तो सबसे पहले अपने परिवार के प्रति, अपने पड़ोसियों के प्रति, गांव के लोगों के प्रति और फिर जिला स्तर पर, राज्य स्तर पर, राष्ट्रीय स्तर पर तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उत्पन्न करनी चाहिए, तब जाकर प्राणी मात्र के प्रति करुणा का भाव जागेगा। इसी प्रकार सर्वधर्म समभाव की चेतना भी सबसे पहले अपने परिवार और अपने मोहल्ले से प्रारंभ करनी चाहिए। सभी धर्म एक हैं, सभी धर्म सुख और शांति की स्थापना के लिए प्रादुर्भूत हुये हैं। मैं तो यह मानता हूँ कि धर्म एक प्रकार से निर्मल, स्वच्छ पानी की तरह है। वह गंगा भी हो सकती है, यमुना भी हो सकती है और झरना भी हो सकता है। भिन्न-भिन्न चश्मों से आया हुआ पानी भी हो सकता है, बारिश का पानी हो सकता है। ये सभी पानी भिन्न-भिन्न जगहों से, भिन्न-भिन्न स्त्रोतों से निकले हुये हैं, लेकिन उन सभी पानी का स्वरूप निर्मल है। पानी चाहे बारिश का हो, नदी का हो या फिर चश्मे का हो वो मैल साफ करता है, प्यास बुझाता है। इसी प्रकार सभी धर्म लोगों के कलुषित चित्त राग, द्वेष, मोह और ईर्ष्या इत्यादि दुष्प्रवृतियों को नाश करने का काम करते हैं। इसलिए सभी धर्मों को एक रूप में देखना चाहिए।

परमपावन जी ने सुझाव दिया है कि सभी पंथों के प्रमुखों को एक साथ साझा मंच पर आना चाहिए और अपने-अपने अवबोधन और ज्ञान को एक-दूसरे के साथ बांटना चाहिए। उसी प्रकार सभी धर्मों में बड़े-बड़े संत और महात्मा हुये हैं, उनकी जीवनी को हम लोगों को पढ़ना चाहिए। जैसा कि बौद्धों का, मिलारेपा जी का जीवन-वृत्त है, उसको यदि बौद्ध, हिंदू, मुस्लिम पढ़ेंगे, यहां तक की जो धर्म को नहीं मानते हैं वे भी अगर पढ़ेंगे तो उनकी जीवनी से प्रभावित हुए बिना रह नहीं पायेंगे।

इसी प्रकार सभी धर्मों में संत-ऋषि हुयें हैं उनके बारे में जानकारी होना बहुत ज़रूरी है। जिस प्रकार परमपावन जी ने सभी धर्मों के सार को 'टुवर्ड द ट्रू किनशिप ऑफ़ फेथ- हाउ द वर्ल्डस रिलिजनस कैन कम टुगेदर' नामक ग्रन्थ में संगृहित किया है उसी तरह ऋषि-मुनियों के जीवन वृत्तांत को एकत्रित कर लोगों के लिए उपलब्ध हो तो उससे मैं समझता हूँ धर्म के प्रति लोगों की आस्था में वृद्धि होगी। और जिस प्रकार परमपावन जी ने सुझाव दिया है कि हम लोगों को सभी

धर्मों के भिन्न-भिन्न पर्व में सम्मिलित होकर उन्हें एक साथ मनाना चाहिए। जैसा कि बुद्ध जयंती के अवसर पर हिन्दु-मुस्लिम भाइयों को बुलाकर तथा उसी प्रकार ईसाई के क्रिसमस हो या फिर गुड फ्राइडे हो उसमें अन्य धर्मावलम्बियों को बुलाकर धर्म के बारे में चर्चा करनी चाहिए। उसी प्रकार रामनवमी तथा कृष्ण जन्माष्टमी में हम सब एकत्रित होवें और उसे एक साथ मनाएं। हमारा आपस में मेलजोल जितना बढ़ेगा उतना ही सभी धर्मों के प्रति सद्भाव उत्पन्न होगा।

तथागत बुद्ध ने अपने जीवन में 45 बार वर्षावास किया था। वे भिन्न-भिन्न जहगों पर वर्षाऋतु में तीन महीने के लिए वर्षावास करते थे। इसी प्रकार आज श्रीलंका, बर्मा, थाईलैंड, चीन, जापान और तिब्बत के भिक्षुओं को एकत्रित होकर तथागत बुद्ध ने जिन-जिन स्थलों में वर्षावास किये थे उन्हीं जगहों पर यदि वर्षावास का आयोजन होता है तो तीन महीने तक भिक्षुगण एक साथ बैठेंगे तो उन्हें पता चलेगा कि महायान परम्परा में वर्षावास करने की पद्धति वही है जो थेरवाद परम्परा में है। इस प्रकार भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों के भिक्षुगण लंबे समय तक एक साथ रहेंगे तो परस्पर आपसी समझ को बढ़ावा देने का अवसर भी मिलेगा। इस तरह दूसरे सम्प्रदायों के प्रति आस्था में वृद्धि होगी।

जैसा कि मैंने पहले भी कहा कि सभी धर्मों का सार मानव कल्याण है। कभी-कभी परमपावन जी यह भी कहते हैं ___"मैं मनुष्य के शरीर को मन्दिर कहता हूँ और करुणा मेरा दर्शन है।" यह शरीर एक प्रकार से मन्दिर है और इसमें बैठा हुआ चित्त भगवान है। प्राणी की सेवा करना ही तो भगवान की सेवा करना है। बोधिचर्यावतार में आचार्य शांतिदेव कहते हैं-

येषां सुखे यान्ति मुदं मुनीन्द्रा
येषां व्यथायां प्रविशन्ति मन्युम् ।
तत्तोषणात् सर्वमुनीन्द्रतुष्टि-
स्तत्रापकारेऽपकृतं मुनीनाम् ॥

यदि तुम बुद्ध और बोधिसत्वों द्वारा पसन्द किये जाने के इच्छुक हो तो उनके द्वारा अनुगृहीत प्राणियों की सेवा करो। यदि तुम प्राणी मात्र की सेवा करोगे तो बुद्ध और बोधिसत्व खुश होंगें, तुमसे प्रसन्न होंगे, यह बात आचार्य शांतिदेव कहते हैं।

विवेकानंद जी भी कहते हैं ___नर ही नारायण है। मनुष्य ही भगवान है। भगवान को सेवा की क्या दरकार है, भगवान तो भगवान है। अगर सेवा करना हो तो दुखियारे, पीड़ित और परेशान लोगों का करना चाहिए, जो उस सृष्टिकर्त्ता के संतान हैं। उसके प्रति सेवा भाव होना चाहिए। लेकिन विडंबना यह है कि हम लोग ईश्वर के नाम से तो बहुत कुछ कर जाते हैं लेकिन वहीं पर बेचारे पीड़ित, गरीब, शोषितों को हम घृणा और नफरत की दृष्टि से देखते हैं। ऐसा नहीं होना चाहिए। हर व्यक्ति में भगवान का रूप देखना चाहिए। सनातन धर्म में कहते हैं कि आत्मा परमात्मा का अंश है, तो इस दृष्टि से व्यक्ति ईश्वर है। इसी प्रकार महायान दर्शन में कहते हैं

कि सभी प्राणी माँ सदृश हैं। क्योंकि अनंत कल्पों में हमने इस संसार में जन्म लिया है इसलिए ऐसा कोई भी प्राणी नहीं है जो किसी न किसी युग में, किसी न किसी काल में अपनी माँ न बना हो। प्राणी मात्र का हमारे ऊपर ऋण है उससे हमें उऋण होना है। यदि हम यह सोचेंगे कि सभी प्राणी मात्र हमारी माँ सदृश हैं, तो फिर भेदभाव का कोई प्रश्न नहीं होगा। उसी प्रकार सभी प्राणी ईश्वर के संतान हैं, ईश्वर के द्वारा बनाये गये हैं, ईश्वर के द्वारा रचे गये हैं। ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है, ऐसा कोई भी प्राणी नहीं है जिसे ईश्वर ने न बनाया हो। सब तो ईश्वर का बनाया हुआ है, तो फिर भदेभाव, अन्तर ये सब क्यों है। इस चीज पर हम लोगों को गंभीरतापूर्वक सोचना चाहिए, विचार करना चाहिए। विशेषकर धर्म के जो अधिकारी लोग हैं उन्हें बहुत ईमानदारी के साथ धर्म का पालन करना चाहिए, अनुशीलन करना चाहिए, धर्म के अनुरूप जीवन जीना चाहिए। अगर ऐसा होता है तो मैं समझता हूं सभी धर्मों के बीच सद्भावना उत्पन्न हो सकती है। यह हमें व्यक्तिगत स्तर पर शुरू करना होगा तभी संभव होगा।

इन्हीं शब्दों के साथ में पुनः आयोजकों को हृदय से धन्यवाद देना चाहता हूँ कि परमपावन जी के 85वीं वर्षगांठ के उपलक्ष्य में उनके द्वारा प्राणी मात्र के लिए किये गये उनके योगदान को स्मरण करने का अवसर दिया, उस पर थोड़ा विचार करने का अवसर दिया। मैं स्वयं को अहोभाग्य समझता हूँ, पुण्यवान समझता हूँ। इसके लिए आप सबको धन्यवाद।

प्रोफेसर पेमा तेनजिन

प्रोफेसर, केंद्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, वाराणसी

तिब्बत : लिपि, भाषा एवं साहित्य का उद्भव एवं विकास

(परम पावन चौदहवें दलाई लामा के 85वें जन्मदिवस पर सम्पूर्ण मानव समाज के कल्याणार्थ उनके अथक सत्प्रयासों के प्रति निर्वासित केन्द्रीय तिब्बती प्रशासन, धर्मशाला,हिमाचल प्रदेश, भारत द्वारा आयोजित कृतज्ञता ज्ञापन-वर्ष समारोह)

-प्रोफेसर पेमा तेनजिन

मङ्गलाचरण

नम्रत्वेनोन्नमन्तः परगुणकथनैः स्वान्गुणान् ख्यापयन्तः
स्वार्थान् सम्पादयन्तो विततपृथुतराम्भयत्नाः परार्थे ।
क्षान्त्यैवाक्षेपरूक्षाक्षरमुखरमुखान् दुर्जनान् दूषयन्तः
सन्तः साश्चर्यचर्या जगति बहुमताः कस्य नाभ्यर्चनीयाः ।।

परम पावन दलाई लामा के परिचय की कोई आवश्यकता नहीं है, सारा विश्व उन्हें न केवल शान्ति, मैत्री, करुणा एवं अहिंसा के पुजारी के रूप में जानता है, बल्कि विश्व-बन्धुत्व, विश्वशान्ति, परस्पर मैत्रीपूर्ण वार्तालाप, वैश्विक पर्यावरण तथा इक्कीसवीं शताब्दी को हर प्रकार की छोटी-बड़ी समस्याओं का समाधान युद्ध के बजाय परस्पर बातचीत के माध्यम से ढूढ़ने आदि के लिए उनके द्वारा उठाये जा रहे कदमों को भी विश्व समुदाय ने सराहा है। इतना ही नही, वैयक्तिक, सामाजिक एवं वैश्विक स्तर पर मानवीय मूल्यों के विकास से समाज में मैत्रीपूर्ण एवं सौहार्द्रपूर्ण वातावरण के निर्माण और मानवीय सुख एवं शान्ति के लिए केवल बौद्धिक स्तर के ज्ञान को नाकाफी बताते हुए भावात्मक एवं आध्यात्मिक स्तर पर कार्य करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना, वैज्ञानिकों के साथ मिलकर भावात्मक दृष्टि से चित्त एवं विज्ञान के विभिन्न स्तरों को विकसित किये जाने से वैज्ञानिक अन्वेषणों में मानव कल्याण की भावना को निहित कर उन्हें सकारात्मक दिशा प्रदान करना आदि सराहनीय उपलब्धि रही है।

1959 में भारत में शरण लेने के पश्चात् तिब्बती शरणार्थियों के पुनर्वास, बच्चों की शिक्षा, तिब्बत में विकसित समस्त बौद्ध एवं बौद्धेतर परम्पराओं के संरक्षण एवं संवर्धन सहित अध्ययन-अध्यापन के लिए संसाधन जुटाना, तिब्बत की स्वाधीनता के लिए सतत संघर्ष, समस्या के समाधान के लिए तत्परता और समस्त तिब्बती शरणार्थियों को एकसूत्र में बाँधे रखने के लिए एक लोकतान्त्रिक अस्थायी निर्वासित केन्द्रीय तिब्बती प्रशासन का गठन आपके नेतृत्व में किया गया।

परम पावन की अहिंसा-नीति वास्तव में व्यावहारिकता पर आधारित है। उन्होंने अहिंसा का

रास्ता ही सबसे उत्तम और सबसे व्यावहारिक माना है। इसके लिए वे भारत के राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी को भी अपनी प्रेरणा मानते हैं और इसी अहिंसा नीति के आधार पर उन्होंने चीन की सरकार के साथ अनेक बार शान्तिपूर्ण एवं सौहार्द्रपूर्ण वार्तालाप के माध्यम से समझौता करने का प्रयास भी किया। चीन की ओर से सकारात्मक प्रतिक्रिया न मिलने के बावजूद अहिंसा के प्रति अपनी वचनबद्धता के कारण उन्होंने कभी भी तथाकथित शत्रुदेश चीन एवं उसकी जनता का कभी भी अहित नहीं चाहा। इतना ही नहीं, उसे मनाने की सारी कोशिशें विफल हो जाने के बाद भी उन्होंने हार नहीं मानी और सम्पूर्ण स्वतन्त्रता की माँग को छोड़ दिया और तिब्बत की पहचान, संस्कृति, धर्म, भाषा, एवं परम्परा के संवर्धन एवं संरक्षण के लिए एक सार्थक स्वायत्तता की मांग के लिए मध्यममार्ग की नीति को अपनाया, जो पूर्णतया चीन के संवैधानिक ढाँचे के तहत है और उसकी चीन की एकता, अखण्डता, सम्प्रभुता एवं संविधान से कोई विरोध भी नहीं है। 4 दिसम्बर, 2008 को युरोपीय संसद को सम्बोधित करते हुए परम पावन ने तीन प्रतिबद्धताओं के बारे में विश्व समुदाय को अवगत कराया।

2011 में पूर्ण रूप से राजनीतिक दायित्वों का त्याग करने के पश्चात् आध्यात्मिक गुरु के रूप में विशुद्ध बौद्ध भिक्षु का जीवन जी रहे हैं और मानव मात्र के कल्याणार्थ जीवन को समर्पित कर वैश्विक स्तर पर जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण, युद्ध जैसे जटिल समस्याओं पर न केवल विश्व का ध्यान आकर्षित कर रहे हैं, अपितु निरपेक्ष भाव से सम्पूर्ण मानव जाति के लिए मानवीय मूल्यों के विकास में समान रूप से कल्याणकारी करुणा, मैत्री, क्षमा तथा नैतिकता के प्रोत्साहन में सतत प्रयासरत है। इतना ही नहीं, इस दिशा में कई राष्ट्रों ने अपने बच्चों के पाठ्यक्रमों में इन विषयों को सम्मिलित कर सम्पूर्ण मानव जगत को एक नया सकारात्मक संदेश दिया है।

1. मैत्रीपूर्ण मावन मूल्यों को प्रोत्साहन देनाः

इसके तहत वे सम्पूर्ण विश्व में घूम-घूमकर मैत्री एवं करुणा का प्रचार-प्रसार करते हुए कहते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति में ये गुण निहित हैं, जरूरत है तो केवल उसे विकसित करने की। सद्गुण हो, चाहे दुर्गुण, व्यक्ति जिसका विकास करना चाहेगा, वही गुण उसके स्वभाव में आयेंगे और यदि स्वयं तथा दूसरों के सुखी जीवन की कल्पना करते हैं, तो अवश्य ही सद्गुणों का विकास करेंगे। संक्षेप में वे इसे व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक एवं वैश्विक स्तर पर सुखी एवं शान्त जीवन का मूलमन्त्र मानते हैं।

2. सर्वधर्म समभावः

सभी धर्मों के प्रति समता का भाव रखते हुए उसका सम्मान करना, क्योंकि सभी धर्म बुनियादी तौर पर मैत्री, दया, सहनशीलता, सन्तोष, आत्म-संयम एवं परोपकार का संदेश देते हैं, भले ही उनके दर्शन, मान्यताएं एवं धार्मिक धारणाएं भिन्न-भिन्न हैं। परम पावन जी कहते हैं कि लोग राजनीति एवं प्रजातन्त्र में विविधता को स्वीकार करते हैं, किन्तु श्रद्धा एवं धर्मों की विविधता को स्वीकार करने में थोड़ी झिझक महसूस करते हैं।

3. तिब्बत की समस्याः

एक तिब्बती होने के कारण तिब्बतियों के कल्याण से उनका सीधा सम्बन्ध है, जिसकी वज़ह है तिब्बत के बाहर एवं भीतर रहने वाले तिब्बतियों का उन पर पूर्ण विश्वास। चूँकि तिब्बत में रह रही तिब्बती जनता साम्यवादी दमनकारी नीति के तहत दबाये जाने के कारण अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता से वञ्चित हैं, इसलिए परम पावन जी स्वयं को उनका स्वतन्त्र एवं मुक्त प्रवक्ता मानते हैं और उनकी ओर से उनकी समस्याओं एवं उन पर हो रहे अत्याचारों से पूरे विश्व समुदाय को अवगत कराकर उन्हें न्याय दिलाने एवं तिब्बत की समस्या का समाधान ढूँढने का हरसम्भव प्रयास कर रहे हैं, जिसका एक ज्वलन्त एवं सशक्त उदाहरण "मध्यम मार्ग की नीति" है।

परम पावन जी अपने जीवन के तीन महत्त्वपूर्ण लक्ष्यों को सदैव सामने रखकर लोगों के बीच उनकी वकालत करते हैं। हाल ही में उन्होंने एक और प्रतिबद्धता व्यक्त की, जिसके कारण कुल मिलाकर चार प्रतिबद्धताएं हो गयीं।

4. प्राचीन भारतीय विद्या में निहित धर्मनिरपेक्ष दृष्टि वाले मूल्यों को पुनर्जीवित करनाः

भारतीय युवाओं के साथ संवाद द्वारा उनमें प्राचीन भारतीय विद्याओं में व्याप्त मानवीय मूल्यों की धर्मनिरपेक्ष शैक्षिक दृष्टि को विकसित करने तथा वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में समायोजन किये जाने हेतु प्रोत्साहन देना। प्राचीन भारतीय परम्पराओं में विकसित चित्त और भावनाओं की क्रियाओं की विधि तथा ध्यान जैसे मानसिक अभ्यास के उपाय को बताने वाले प्राचीन समृद्ध आध्यात्मिक ज्ञान की प्रासंगिकता आज के युग में भी है। इससे जानने के लिए भारत के पास तर्क एवं हेतु विद्या का दीर्घकालिक इतिहास एवं परम्परा है, जो एक अमूल्य धरोहर है। वे भारत को एक ऐसी विशिष्ट भूमि के रूप में देखते हैं, जहाँ प्राचीन एवं आधुनिक ज्ञान को समायोजित करना फलीभूत हो सकता है और जिससे आज के समाज में एक समन्वित तथा नैतिकता पर आधारित जीवन शैली को प्रचारित किया जा सकता है। चूँकि प्राचीन भारतीय विज्ञान परम्परा उत्कृष्ट मानवीय मूल्यों से युक्त है, जो सर्वजनहिताय, सर्वजनसुखाय है और भारतीय सभ्यता का मूलमन्त्र भी है। शायद इसी मन्त्र में भारत के जगत् गुरु होने का रहस्य छुपा हुआ है।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरायमाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत् ।।
अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम् ।
उदारचरितानां तु बसुधैव कुटुम्बकम् ।।

अन्य वक्ता और अधिक विस्तार से इनके विषय में अपने विचार आपके समक्ष रखेंगे। मुझे इस अवसर पर उनकी तीसरी प्रतिबद्धता से सम्बन्धित होकर "तिब्बत की लिपि, भाषा एवं साहित्य का उद्भव एवं विकास" नामक विषय पर बोलने के लिए कहा गया है। अतः मैं विषय की स्थापना करना चाहता हूँ।

1. तिब्बत में लिपि, भाषा एवं साहित्य का उद्भव एवं विकास (मुख्य विषय)

भोट लिपि का निर्माण- चीनी राजकुमारी वेनच्रेंग एवं नेपाली राजकुमारी भृकुटीदेवी, राजकीय दस्तावेज़ों को लिपिबद्ध करने हेतु चीनी विद्वानों को भेजने का निवेदन, तांग राजा से कागज, कलम एवं स्याही बनाने हेतु कारीगरों को भेजने का निवेदन।

थोनमी को 16 अन्य नवयुवकों के साथ भारत भेजना, 632-645 ई. तक 13 वर्ष ब्राह्मण लिपिकार (विद्यादेवसिंह) अथवा लिजिनकर से लिपि तथा बौद्धधर्म दर्शन का अध्ययन। लञ्छा के आधार पर उचेन तथा वर्तु के आधार पर उमेद का निर्माण। आठ व्याकरण ग्रन्थों की रचना, दो प्राप्त, राजा को लिपि सिखाया, 21 अवलोकितेश्वर सूत्र-तन्त्र ग्रन्थों का अनुवाद।

भोट लिपि का आधार- तिब्बतियों की आम धारणा कि मूल आधार ब्राह्मी लिपि, अधिकांश लञ्छा एवं वर्तु। ब्राह्मी लिपि प्राचीनतम (ललितविस्तर), अशोक (शिलालेख, स्तम्भ एवं लाटों पर) सारनाथ, कौशाम्बी, कुशीनगर, लुम्बिनी, बोधगया में, भाषा के क्रमिक विकास एवं परिवर्तन के साथ नामकरण भी बदलता, सातवीं सदी में गुप्तकालीन लिपि विकसित, कुटिल लिपि, पूर्व लिच्छवि एवं उत्तर लिच्छवि उत्तर लिच्छवि में अधिकांश भोट अक्षरों का प्राप्त होना तथा संयुक्त अक्षरों में समानता, विशेषकर व् संयुक्त अक्षर वर्तमान में भोट भाषा में वैसे ही प्रयोग हो रहा है।

भोटदेशीय विद्वानों की मान्यताएं- कुछ देव, नाग, कश्मीर, नागरी आदि से प्रादुर्भूत मानते हैं। पावो चुगलग ट्रेङ्वा, ञङ ञिमा होसेर, देउ छोजुङ, बुस्तोन रिनछेन डुब आदि प्रमुख इतिहासकार सहित अधिकांश इतिहासकार लञ्छा एवं वर्तु को आधार मानते हैं और दोनों को ही उचेन एवं उमेद का आधार भी मानते हैं।

17वीं सदी में भोट वैयाकरण विद्वान् सितु पनछेन ने थोनमी के उक्त दोनों ग्रन्थों पर टीका (खेपइ गुलग्यन मुतिक ट्रेङ्वा) लिखी और भोट लिपि को देवनागरी का पूर्व स्वरूप माना।

20वीं सदी में गेदुन छोफेल भारत में संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी में अध्ययनार्थ आये। उन्होंने रञ्जना लिपि को सुलेख के लिए प्रयुक्त किया जाना बताया। तिब्बत के विहारों, मठों, स्तूपों, द्वारों के ऊपर, प्रवेश द्वारों पर मन्त्रों के सुन्दरीकरण के लिए इसका प्रयोग किया जाना स्वीकारा। वे पहेले भोट विद्वान् रहे जिन्होंने भोट लिपि को गुप्तकालीन लिपि से प्रादुर्भूत बताया। कथा-लखनऊ में राजा सूर्यदेव वर्मन् का स्तम्भ लेख,जो गुप्त लिपि में था, उन्होंने कुछ-कुछ अंशों को पढ़ लिया और प्रमाणित किया कि भोट लिपि का आधार गुप्तकालीन लिपि ही है। अनेक पाश्चात्य विद्वानों एवं शोधकर्ताओं ने रोम के पीटर ए. जार्ज, पी. एस. पल्लस, होर्नले, ए. एच. फ्रेंक, डॉ. पी. कार्डियर, डॉ. एल. ए. बेडेल आदि एकमत नहीं हैं।

भाषा का स्वरूप- 7वीं सदी में भाषा का स्वरूप स्पष्ट नहीं था। बोन के अनुसार शङ्शुङ क्षेत्र में अपनी भाषा एवं लिपि विद्यमान थी। कुछ विद्वान् जो इस बात से पूरी तरह सहमत न होकर कहते हैं कि पूर्व की लिपि सुव्यवस्थित नहीं रही होगी, और न ही अभिव्यक्ति को व्यक्त करने में पूर्णतया समर्थ रही होगी। सम्भवतः इसी कारण भोटनरेश लिपि निर्माण हेतु बाध्य हुए।

सातवीं शताब्दी से महान् शक्तिशाली तिब्बती सम्राट् सोङ्चन गम्पो के काल में ही तिब्बत में भोट-लिपि के निर्माण, बौद्ध ग्रन्थों के आंशिक प्रवेश तथा उनके अनुवाद के साथ ही तिब्बत में बौद्ध युग का शुभारम्भ हुआ। स्वयं लिपिकार थोनमी सम्भोट एवं महाराज ने मिलकर अवलोकितेश्वर के 21 सूत्र एवं तन्त्र ग्रन्थों का संस्कृत भाषा से भोट भाषा में अनुवाद कर बौद्धधर्म की स्थापना के लिए प्रयास किया।

लिपि निर्माण के साथ व्याकरण के नियमों एवं ग्रन्थों के अनुवाद की वज़ह से भाषा के स्वरूप में भिन्नता आना स्वाभाविक है और वह भाषा साधारण बोलचाल की भाषा से भिन्न एक स्तरीय भाषा का रूप लेने लगती है। इस प्रकार राजाज्ञा एवं कालान्तर में बौद्धधर्म की स्थापना, सम्पूर्ण महायान संस्कृत वाङमय एवं वज्रयान वाङमय का तिब्बती भाषा में अनुवाद, बौद्ध मठों एवं विहारों का निर्माण, भिक्षु-भिक्षुणी संघ की स्थापना के साथ ही अनूदित ग्रन्थों का तिब्बती भाषा में अध्ययन-अध्यापन एवं अभिषेक-साधना आदि की वज़ह से धीरे-धीरे पूरे तिब्बत में भाषाओं में विविधताओं के बावजूद एक ही लिपि का प्रयोग अक्षुण्ण रूप से न केवल अद्यतन यावत् चला आ रहा है, बल्कि उत्तरोत्तर विकास एवं समृद्ध होता जा रहा है। इतना ही नहीं, तिब्बत की सीमा से लगे सम्पूर्ण हिमालयीय बौद्ध जगत में भी जिन-जिन समुदायों एवं क्षेत्रों में अपने साहित्य की रचना पर कार्य सम्भव हुआ, वहाँ यह भोटी लिपि के नाम से प्रयुक्त हुई और जानी गयी। किन्तु जहाँ अल्पसंख्यकों के रूप में साहित्य की रचना नहीं कर पाये, वहाँ न केवल यह लिपि विलुप्त हुई, अपितु भाषा भी टूटती-बिखरती और अन्य स्थानीय एवं अध्ययन-अध्यापन की भाषा के प्रभाव में अन्तिम साँसें गिनती दिखलायी पड़ रही है।

साहित्य का विकासः

आठवीं शताब्दी के मध्य में पुनः तिब्बत के महान सम्राट् ठ्रिसोङ् देउचन (742-797 ई.) ने अपने पूर्वजों के इन प्रयासों को महत्त्व देते हुए इन्हें भोटदेश की जनता के हित-सुख एवं भावी पीढ़ी के इहलोक एवं परलोक के लिए कल्याणकारी समझकर भारत से तत्कालीन सुप्रसिद्ध नालन्दा विश्वविद्यालय के उपाध्याय शान्तरक्षित एवं महान तान्त्रिक आचार्य पद्मसम्भव को आमन्त्रित किया।

प्रथम समयेस्-महाविहार का निर्माण, ओदन्तपुरी महाविहार के वास्तुकला के आधार पर तैयार किया गया तथा तिब्बत में बौद्धधर्म की स्थापना हुई। परीक्षण के तौर पर सात नवयुवकों को भिक्षु बनाया गया, उन्हें बौद्धधर्म एवं दर्शन का प्रशिक्षण दिया गया, जिसकी सफलता के फलस्वरूप भिक्षुसंघ की स्थापना हुई। तीक्ष्ण बुद्धि वाले प्रतिभाशाली नवयुवकों को अनुवाद कार्य के लिए प्रशिक्षत किया।

भारत से कुछ और विद्वान आचार्य बुलाये गये, जिनमें विमलमित्र, सुरेन्द्रबोधि, शीलेन्द्रबोधि, जिनमित्र, कमलशील आदि अनेक भारतीय आचार्य थे। लोच़ावा ब-सलनङ्, प-गोर वैरोचन रक्षित, खोन लुइ वाङ्पो, म-रिनछेन छोग, ञेनलम ग्यलवा छोगयङ्, रिनछेन लेगडुब, ञाक् ज्ञानकुमार,

क-व पलच़ेग, चोगरो लुइ ग्यलछन, येशे-दे आदि, जिनकी संख्या महाराज ठ्रि रलपा-चन के काल में लगभग साठ तक पहुँच गयी।

1. महाराज सोङ्च़न गम्पो (617-698 ई.) भोट लिपि एवं व्याकरण का निर्माण, 21 अवलोकितेश्वर सूत्र एवं तन्त्र ग्रन्थों का प्रथम अनुवाद

2. धर्मराज ठ्रिसोङ् देउच़न (742-797 ई.) तिब्बत में बौद्धधर्म के विकास के प्रथम चरण में लगभग 21 भारतीय आचार्य एवं 55 तिब्बती अनुवादक ने अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। नवीन शब्दों का निर्माण, पारिभाषिक शब्दों का निर्माण, पर्यायवाची शब्दों का निर्माण तथा अनुवाद में समानता लाने हेतु एक निघण्टु शब्दकोश का निर्माण किया गया। सम्पादक मण्डल एवं राजा की आज्ञा से ग्रन्थ का प्रकाशन किया गया।

इस प्रकार इस स्वर्णिम ऐतिहासिक काल में एक नई भाषा का उद्भव हुआ, जिसे भोट शास्त्रीय भाषा का नाम दिया गया और जो सामान्य बोलचाल की भाषा से भिन्न हो गयी। विहारों के निर्माण, भिक्षुसंघ के विस्तार एवं सर्वत्र इसके अध्ययन-अध्यापन के माध्यम से यह शास्त्रीय भाषा बहुत शीघ्र ही सम्पूर्ण तिब्बत में फैलती चली गयी और पूरा तिब्बत बौद्धमय हो गया।

सबसे प्राचीन देनकर-मा सूची के अनुसार 725 ग्रन्थों का अनुवाद हुआ, जिन्हें 27 वर्गों में रखा गया है।

3. महाराज ठ्रि रलपा-चन (806-841 ई.) पूर्वोक्त आचार्यों सहित दानशील, बोधिमित्र लोच़ावा ग्यलवा हो, जमपल गोछा, यिशे-दे रिनजुङ् छुलठ्रिम इत्यादि। नवीं शताब्दी में लोच़ावा क-व पलच़ेग एवं छोस् क्यि ञिङ्पो आदि द्वारा छिमफु महल में विद्यमान सम्पूर्ण अनूदित बुद्धवचनों एवं शास्त्रों की सूची बनायी गयी, जिसे छिमफु सूची कहा गया, किन्तु यह वर्तमान में उपलब्ध नहीं है।

भाषा में काफी परिवर्तन हो चुका था और शास्त्रीय भाषा पूर्णरूप से अपना एक अलग स्थान बना चुका था, जो व्याकरण एवं पारिभाषिक शब्दों, पर्यायवाची एवं आध्यात्मिक शब्दों से सुसज्जित हो चुका था और उनकी एकरूपता के लिए पुनः महाव्युत्पत्ति नामक एक बृहत् कोश का निर्माण किया जा चुका था। इसलिए भाषा के संशोधन का कार्य किया गया और पूर्व में अनूदित ग्रन्थों की भाषाओं को भी संशोधित किया गया।

पुनः इसी क्रम में पश्चात् फङ्थांग-मा महल में विद्यमान सम्पूर्ण अनूदित बुद्धवचनों एवं शास्त्रों की भी सूची बनायी गयी, जो प्राप्त है। इन दोनों सूचियों में ग्रन्थों के नाम के साथ उनके परिमाण (बमपो) का उल्लेख किया गया है और विषय की समानता के आधार पर ग्रन्थों को वर्गीकृत किया गया प्रतीत होता है।

अनुवाद की प्रक्रिया शाब्दिक, व्युत्पत्तिपरक, मिश्रित एवं यदा-कदा जटिल स्थलों पर भावानुवाद रही, जिससे प्रत्येक शब्दों का अनुवाद सटीक तरीके से हुआ। पाण्डुलिपि भारत से लगातार आते

रहे, जिससे समये महाविहार में उनका एक अच्छा संग्रह हो गया।

4. आचार्य दीपंकर श्रीज्ञान (1042-) तिब्बत में बौद्धधर्म के विकास के द्वितीय चरण के दौरान् लगभग 60 भारतीय आचार्य, 130 अनुवादक (रिनछेन सांगपो, नागछो लोच़ावा छुलठ्रिम ग्यलवा, ग्या चोन्डुस् सेंगे, खुतोन चोन्डुस् युङ्डुंग, ङोग लेगपइ शेरब, प-छब ञिमा डाग, रोङ्तोन दोर्जे ग्यलछन इत्यादि ने अपना योगदान दिया। लगभग एक सौ पचास वर्षों तक मध्य तिब्बत राजवंश से विहीन रहा बौद्धधर्म दर्शन से भी अछूता रह गया। यह अन्तराल भाषा की दृष्टि से बहुत अधिक होता है। इसलिए इस काल में भी पूर्व अनूदित अनेक महत्त्वपूर्ण शास्त्रों का सम्पादन एवं संशोधन सहित पुनः अनुवाद कार्य भी किया गया।

इस काल में प्रज्ञापारमिता एवं माध्यमिक ग्रन्थों के साथ-साथ प्रमाण, अवदान एवं जातकों पर भी अनुवाद कार्य हुआ और उनका अध्ययन-अध्यापन का दौर बड़ी तेजी से फैला, जिससे पुनः एक बार फिर सम्पूर्ण तिब्बत के मठों एवं विहारों में बौद्धधर्म एवं दर्शन के प्रति उनकी रूचि एवं प्रचार-प्रसार देखने को मिलता है।

5. साक्य पण्डित (1181-1251 ई.) के पूर्व केवल बुद्धवचनों तथा शास्त्रों के अनुवाद तक ही सीमित रही, किन्तु साक्य पण्डित से साहित्य, काव्य, अमरकोश एवं अवदानों का भी अनुवाद प्रारम्भ हो गया। पूर्व से अवशिष्ट ग्रन्थों का भी संशोधन, सम्पादन एवं अनुवाद किया गया।

काव्य- खेस्पा ला जुगपइ गो (विद्वदवतारद्वार) नामक काव्य ग्रन्थ की रचना भारतीय आचार्य भोजराज कृत सरस्वतीकण्ठाभरण तथा आचार्य दण्डीकृत काव्यादर्श के बहुत अधिक उद्धरणों सहित व्याख्या, तर्क एवं रचना के नये नियमों का शुभारम्भ किया। बाद में तेरहवीं सदी में भारतीय पण्डित लक्ष्मीकर के सहयोग से लोच़ावा शोङ्तोन दोर्जे ग्यलछन ने सम्पूर्ण काव्यादर्श का पाद-टिप्पणियों सहित अनुवाद किया। पङ् लोच़ावा लोडो तेनपा ने भी आचार्य रत्नश्री कृत काव्यादर्श की टीका का भोटभाषा में अनुवाद किया और एक स्वतन्त्र टीका की रचना कर भोटदेश में काव्य अध्ययन हेतु तैयार भूमिका को एक नई दिशा दी। शोङ्तोन दोर्जे ग्यलछन नेपाल भी गये और वहाँ पाँच लघु विद्याओं (काव्य, छन्द, नामाभिधान, नाट्यशास्त्र एवं ज्योतिष) का अध्ययन कर विशेष रूप से शब्दविद्या में पारंगत हुए। उन्होंने अवदानकल्पलता, काव्यादर्श, नागानन्दनाटक, शतस्तुति आदि का अनुवाद किया और भोटदेश में काव्य एवं नामाभिधान (अमरकोश) की परम्परा को और अधिक मजबूती प्रदान की।

छन्द- तेरहवीं सदी में सर्वप्रथम साक्य पम्डित ने छन्द पर देवजोर मेतोग छुनपो नामक एक स्वतन्त्र ग्रन्थ की रचना की, जिसमें छन्दोविचित्ति, रत्नाकरशान्ति कृत छन्दोरत्नाकर, जयदेव की टीका सहितपैंगल के संस्कृत छन्दों पर आधारित अभिव्यक्ति की कला के नियमों के महत्त्वपूर्ण लक्षणों को दर्शाया गया है। इसके अतिरिक्त जातककथा, जातकावदान, अवदानकल्पलता आदि ग्रन्थों के अनुवाद एवं अध्ययन ने भोट साहित्य के विकासक्रम में प्रमुख भूमिका निभायी।

ऐसा नहीं है कि पूर्व में काव्यग्रन्थों का अनुवाद न हुआ हो, आचार्य शंकरस्वामी विरचित देवातिशयस्तुतिः का अनुवाद आचार्य सर्वज्ञदेव एवं लोच़ावा म-रिनछेन छोग ने आठवीं सदी में किया था। चौदहवीं शताब्दी में भी लोच़ावा जङछुब च़ेमो तथा नमखा सांगपो ने पांग लोच़ावा लोडो तेनपा द्वारा प्राप्त संस्कृत पाण्डुलिपि को आधार बनाकर छन्दोरत्नाकर की स्ववृत्ति सहित भोटभाषा में पुनःअनुवाद कर इस कड़ी को आगे बढ़ाने का कार्य किया।

प्रमाण- साक्य पण्डित ने प्रमाणसमुच्चय के साथ प्रमाणवार्तिक के भी गहन अध्ययन की शुरूवात की, जबकि इसके पूर्व केवल बौद्ध न्यायविद्या के क्षेत्र में प्रमुख रूप से न्यायबिन्दु सटीका एवं प्रमाणविनिश्चय के अध्ययन की परम्परा रही है। वैसे तो ग्यरहवीं सदी में ही लोच़ावा लोदन शेरब (1054) आदि द्वारा इन ग्रन्थों के अनुवाद के साथ ही उनके अध्ययन-अद्यापन की परम्परा प्रारम्भ हो चुकी थी। उस दोरान् भोटदेश में छ-पा छोस् क्यि सेङ्गे आदि आठ मूर्धन्य विद्वान् हुए, जिन्होंने प्रमाणसास्त्र पर अपनी स्वतन्त्र रचनाओं के द्वारा इस विद्या को शीर्ष तक पहुँचाया। साथ ही, शास्त्रार्थ की एक अनूठी परम्परा भी प्रारम्भ की, जो आज तक अविच्छिन्न रूप से तिब्बती बौद्धविहारों में अध्ययन-अध्यापन की परम्परा में पूर्णतया जीवित है। साक्य पण्डित ने काश्मीरी पण्डित आचार्य शाक्यश्रीभद्र से प्रमाणवार्तिक की मौखिक परम्परा सहित अन्य प्रमाण शास्त्रों की परम्परा भी प्राप्त की और उनकी प्रशंसा में साक्य पण्डित ने संस्कृत भाषा में प्रमाणयुक्तिनिधि नामक एक प्रमाणग्रन्थ और उसकी स्ववृत्ति की रचना कर भोटदेश में प्रमाणशास्त्र के अध्ययन-अध्यापन की प्रामाणिकता को सिद्ध कर दिया। यह भोटदेश में किसी तिब्बती विद्वान् के द्वारा रचित प्रथम संस्कृत ग्रन्थ के रूप में विख्यात है।

इस प्रकार इस कालखण्ड में आचार्य दिङनाग विरचित संक्षिप्त बौद्ध प्रमाणशास्त्र प्रमाणसमुच्चय, आचार्य धर्मकीर्ति विरचित सप्त प्रमाणग्रन्थ (प्रमाणवार्तिक, प्रमाणविनिश्चय, न्यायबिन्दु, हेतुबिन्दु, सम्बन्धपरीक्षा, सन्तानन्तरसिद्धि, वादन्याय), प्रज्ञाकरगुप्त विरचित प्रमाणवार्तिक भाष्यालंकार सहित अन्य प्रमाण ग्रन्थों का अनुवाद किया गया, जिससे भोटदेश के महाविहारों में इनके शास्त्रार्थ सहित अध्ययन-अध्यापन को बढ़ावा मिला।

अमरकोश- इसी कालखण्ड में अमरसिंह कृत अमरकोश एवं विभूतिचन्द्र कृत कामधेनु टीका का भोटभाषा में सर्वप्रथम अनुवाद आचार्य कीर्तिचन्द्र एवं लोच़ावा यरलुङवा डागपा ग्यलछन ने किया, जिसका प्रभाव भोट साहित्य में स्पष्टतया देखा जा सकता है। इतना ही नहीं, तिब्बती विद्वानों ने कालान्तर में इस ग्रन्थ पर अनेक टीकाएं लिखीं और इसके अध्ययन-अध्यापन को महत्त्पूर्ण माना। मिफम रिनपोछे तथा छेतेन श्यब-ड्रुङ जैसे विद्वानों ने द्विभाषी शब्दकोश की भी रचनाएं कीं।

व्याकरण- भारतीय बौद्ध साहित्य के साथ-साथ अन्य विद्याओं का साक्षात् प्रभाव सत्रहवीं शताब्दी पर्यन्त देखने को मिलता है, जब पाँचवें दलाई लामा नवंग लोसङ ग्याछो (1617-1682) ने दरपा लोच़ावा नवंग फुनछोग ल्हुन्जुब को संस्कृत व्याकरण के अध्ययनार्थ भारत भेजा। तदनुसार

उन्होंने कुरुक्षेत्र में काशी के पण्डित गोकुलनाथ मिश्र एवं महापण्डित बलभद्र से संस्कृत व्याकरण का अध्ययन किया और उन्हीं के सान्निध्य में रामचन्द्र कृत प्रक्रियाकौमुदी का भोटभाषा में अनुवाद किया । बाद में पण्डित सर्ववर्मन् के कलाप व्याकरण का टीका सहित अनुवाद किया और चान्द्र व्याकरण एवं सारस्वत व्याकरण के ग्रन्थों का भी भोट भाषा में अनुवाद कर उनके अध्ययन-अध्यापन की परम्परा को भी हस्तान्तरित किया।

नीतिशास्त्र- भारतीय आचार्यों द्वारा विरचित नीतिशास्त्र तथा सुभाषित ग्रन्थों के संग्रह को तनग्युर संग्रह में सम्मिलित किया गया है, जिनका अलग-अलग समय पर अनुवाद हुआ है। इनमें आचार्य नागार्जुन कृत प्रज्ञाशतकनाम-प्रकरण, प्रज्ञादण्ड, जन्तुपोषणबिन्दु तथा रविगुप्त कृत गाथाकोश आदि पन्द्रह लघु ग्रन्थों का भी क्रमशः अनुवाद किया गया है। इसके अतिरिक्त ज्योतिष, सोवा रिगपा, पूजाविधि आदि पर भी प्रचुर कार्य हुआ है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि तिब्बत मात्र एक ऐसा देश है, जहाँ बौद्ध दर्शन एवं धर्म के सम्पूर्ण सूत्र-तन्त्र सहित अन्य विषयों का भी भोटभाषा में न केवल सदियों तक अनुवाद होता रहा, अपितु उसके अध्ययन-अध्यापन एवं साधना की परम्परा का भी पूर्ण रूप से उत्तरोत्तर विकास हुआ और सम्पूर्ण देश धर्म, दर्शन, चर्या एवं अनुष्ठान-विधि इत्यादि हर प्रकार से बौद्ध हो गया।

सन् 1959 के बाद भारत में तिब्बती भाषा, संस्कृति एवं परम्परा का संरक्षण एवं संवर्धनः

क. 1959 में भारत में शरण लेने के बाद शरणार्थी तिब्बतियों के पुनर्वास, बच्चों की शिक्षा, मठों एवं विहारों के निर्माण में प्रोत्साहन के साथ पारम्परिक बौद्ध अध्ययन-अध्यापन की शुरूवात, प्रवासी तिब्बतियों को एकसूत्र में बाँधे रखने के लिए लोकतानात्रिक तरीके से निर्वासित केन्द्रीय तिब्बती प्रशासन का गठन, अन्तर्राष्ट्रीय मंचों के माध्यम से तिब्बत की आजादी के लिए आवाज बुलन्द करना तथा समस्या का समाधान खोजना, चीन सरकार के साथ शान्ति समझौते के लिए शिष्टमण्डलों को भेजना तथा अन्ततो मध्यममार्ग की नीति का निर्धारण आदि कार्य सम्पादित किये गये।

ख. तिब्बती भाषा, संस्कृति, परम्परागत अध्ययन पद्धति के संरक्षण एवं संवर्धन तथा हिमालयीय सुदूर क्षेत्रों से बौद्ध नवयुवक, जो पूर्व अध्ययनार्थ तिब्बत जाया करते थे और अब वहाँ जा नहीं सकते, उन्हें उच्च शिक्षा हेतु अवसर प्रदान करने के लिए तथा साथ ही विलुप्त प्राय भारत की प्राचीन नालन्दा परम्परा वाली संस्कृति एवं साहित्य को पुनर्जीवित करने के लिए केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान की स्थापना की गयी और इस संस्थान के पुनरुद्धार एवं अनुवाद विभाग ने अब तक 50 से अधिक संस्कृत ग्रन्थों का पुनरुद्धार एवं 150 से अधिक ग्रन्थों का हिन्दी एवं अन्य भाषा में अनुवाद कार्य सम्पादित किया है।

ग. विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिकों के साथ एक युक्तिपूर्ण एवं तार्किकपूर्ण परिसंवाद को आवश्यक एवं

सार्थक बनाने के लिए तिब्बती बौद्धधर्म को तीन भागों में विभाजित किया- बौद्धधर्म, बौद्धदर्शन एवं बौद्धविज्ञान। एतदर्थ विद्वानों के एक समूह के द्वारा बौद्ध सूत्रों एवं शास्त्रों में यत्र-तत्र प्राप्त उक्त विज्ञान से सम्बन्धित अंशों का संकलन किया गया और दो खण्डों में प्रकाशित भी हो चुका है। दोनों खण्डों का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित हो चुका है और हिन्दी अनुवाद पर कार्य चल रहा है। परम पावन को विश्वास है कि वैज्ञानिक इनमें रुचि लेंगे और उन्हें वैज्ञानिकता में एक सकारात्मक मानवीय मूल्यों को समायोजित करने में सहायता मिलेगी। (आई क्यू, इ क्यू एवं एस क्यू)

घ. करुणा, मैत्री, क्षमा, जैसे सार्वभौमिक, सार्वजनीन एवं सार्वकालिक प्रासंगिक कल्याणकारी मानवीय भावात्मक एवं आध्यात्मिक मूल्यों से सम्पूर्ण विश्व के मानव को अवगत कराने हेतु विद्यालयीय एवं विश्वविद्यालयीय स्तरों पर पाठ्यक्रम तैयार कर आधुनिक शिक्षा के साथ समन्वय एवं समायोजित करना।

ङ. सी-लर्निंग पाठ्यक्रम (एस. इ. इ. = सामाजिक, भावात्मक, नैतिकता)

एमोरी यूनिवर्सिटी के "सन्टर फॉर कान्टेम्प्लेटिव साइंस एण्ड कॉम्पेशन बेस्ड इथिक्स" द्वारा तैयार किया गया कार्यक्रम है, जो नीतिशास्त्र पर केन्द्रित है। यह कार्यक्रम किसी धर्म या संस्कृति विशेष पर आधारित नहीं है, अपितु यह करुणा, सहनशीलता, मैत्री, क्षमा आदि सार्वभौमिक एवं बुनियादी मानवीय मूल्यों पर आधारित है। इनके प्रति जागरूकता, करुणा एवं अभ्यास से व्यक्तिगत कल्याण तो सम्भव है ही, बल्कि दूसरों की प्रति स्वयं के उत्तरदायित्व का बोध भी अधिक कुशलता से हो सकेगा। इतना ही नहीं, मानसिक एवं शारीरिक दोनों प्रकार के स्वास्थ्य के लिए यह योग्यता बहुत महत्त्वपूर्ण है।

यह कार्यक्रम सार्वभौमिक मूल्यों पर आधारित है। इसलिए विश्व के सभी देशों और संस्कृतियों में निहित मानवीय मूल्यों को उपयोग में लाया जा सकता है। सामान्य अनुभव और विज्ञान पर आधारित इस कार्यक्रम को अलग-अलग स्तरों का उपयोग कर या फिर लोगों की विभिन्न धार्मिक एवं सांस्कृतिक मान्यताओं के अमनुसार उनके अनुकूल प्रयोग में लाया जा सकता है।

भारत में दिल्ली के मुख्यमंत्री श्री केजरीवाल ने भी सी-लर्निंग कार्यक्रम को विद्यालयों के पाठ्यक्रम में लागू कर एक नये परिवर्तन का श्रीगणेश किया।

भवतु सर्वमङ्गलम्

छोक्योंग वांगचुक

स्वास्थ्य मंत्री, केंद्रीय तिब्बती प्रशासन, धर्मशाला

तिब्बती टीवी के सभी दर्शकों को सबसे पहले मेरा नमस्कार। आज मुझे के एक चुनौतीपूर्ण भरी जिम्मेदारी दी गई है। मैं नहीं जानता कि मैं इस पर न्याय कर पाऊँगा कि नहीं फिर भी जो जिम्मेदारी दी गई है मैं उसे निभाने का प्रयास करूंगा। आज परम पावन दलाई लामा जी के जीवन की चार मुख्य प्रतिबद्धताओं हैं उन पर चर्चा करनी है। विशेष रूप से चौथा बिंदु या स्तंभ हैं- प्राचीन भारतीय मूल्यों को पुनर्जीवित करने का विषय है उस पर मुझे और ज्यादा बातें रखनी हैं। इसलिए मैं नहीं जानता हूँ कि मैं इस पर न्याय कर पाऊँगा या नही फिर भी जैसे मैंने पहले कहा प्रयास करूंगा।

वैसे आप सभी जनते है कि यह वर्ष 2020-2021 परम पावन दलाई लामा जी का 85वें जन्मदिन का वर्ष है। यह वर्ष पूरे तिब्बती समुदाय और केंद्रीय तिब्बती प्रशासन की ओर से परम पावन दलाई लामा जी को धन्यवाद अर्पण करने के रूप में भी मना रहें हैं। इसी के अंतर्गत केंद्रीय तिब्बती प्रशासन के सूचना एवं अंतर्राष्ट्रीय संबंध विभाग की ओर से एक व्याख्यान या संभाषण श्रृंखला का ऑनलाइन के माध्यम से आयोजन किया जा रहा है। इस अवसर पर हमें परमपावन दलाई लामा जी की चार प्रमुख प्रतिबद्धताओं पर चर्चा करनी है।

मेरे अतिरिक्त अन्य वक्तागण और गणमान्य हैं वह इन विषयों पर चर्चा करेंगे। जैसे कि परम पावन दलाई लामा जी की पहली प्रतिबद्धता, स्तंभ या बिंदु- मानवीय मूल्यों को बढ़ावा देना है। परम पावन दलाई लामा जी की दूसरी प्रतिबद्धता है- धार्मिक सद्भाव को प्रोत्साहित करना, धार्मिक सौहार्दपूर्ण के लिए प्रयास करना और प्रतिबद्ध रहना यह उनका दूसरा उद्देश्य है। परम पावन दलाई लामा जी का तीसरी प्रतिबद्धता है- तिब्बती भाषा, संस्कृति एवं पर्यावरण का संरक्षण करना यह उनका तीसरा उद्देश्य है। परम पावन दलाई लामा जी का चौथी प्रतिबद्धता है- प्राचीन भारतीय मूल्यों को पुनर्जीवित या पुनर्वास तथा हमारे बीच इन मूल्यों को रखकर इस पर अमल होकर एक बेहतर समाज की निर्माण के प्रति उनका प्रयास है।

वैसे तो भारतीय मूल्यों का मुद्दा काफी बड़ा विषय है। उत्तर से लेकर दक्षिण, पूर्व से लेकर पश्चिम तक बहुत बड़ा एक राष्ट्र है जिसमें विभिन्न तरह के विचार, मत्त और परम्पराएं पनप रही हैं। इसमें विशेष रूप से मुख्य तौर पर देखें तो, एक वैदिक परम्परा रही है। वैदिक के बाद श्रमाणिक है, फिर उस तरह श्रमण में सनातनी है। इस तरह की परम्पराएं बहुत सारी हैं। उसी के अनुसार मूल्य, एक तरह से जीवन यापन करने के दर्शन इस तरह से कई मूल्य हमें समझने और महसूस करने को मिलते हैं। लेकिन विशेष रूप से परमपावन दलाई लामा जी नालंदा परंपरा, नालंदा विश्वविद्यालय जो कि बहुत ही विख्यात शिक्षा संस्थान हुआ करता था जो कि 11वीं शताब्दी

के अंत तक था, 1261 उनका एक तरह से वहां पर आक्रमण हुआ, तब तक विभिन्न राष्ट्रों से, विभिन्न देशों से वहां पर शिक्षा दीक्षा ग्रहण करने के लिए छात्र, विद्वान आते थे।

उसी से भारत की एक तरह से पहचान, भारत के मूल्यों को भारत सहित अन्य देशों में प्रचार-प्रसार होने में मददगार सिद्ध हुए हैं। उसी मूल्य, उसी दर्शन और उसी सिद्धांत से समाज में एक तरह से भाईचारा, शांति, दूसरे के प्रति सद्भावना, एक दूसरे के प्रति उत्तदायित्व का निर्माण हुआ है। यही एक विश्वविद्यालय है, एक परम्परा है, एक सोच है, एक मत है जिसके अगुआई बहुत बड़े बड़े महान विद्वान सिद्ध हुए है। कई तिब्बत के अंदर आए और इन विषयों, इन मतों, इन दर्शनों को फैलाया है तथा वहां पर तिब्बतियों ने उनके माध्यम का अनुसरण किया है।

इसलिए परम पावन दलाई लामा जी नालंदा परम्परा और प्रथा के अनुयायी और शिष्य होने के नाते वह मानते हैं कि इस मूल्य को, इस दर्शन को जो कि भारत के प्राचीन मूल्य हैं, दर्शन हैं जिसका लोगों में आज की तिथि में प्रचार-प्रसार होना अत्यंत जरूरी लगता है। यही नहीं कि यह दर्शन, यह सोच, यह मत केवलमात्र संगोष्ठी, व्याख्यान व चर्चा पर सीमित न रहकर बल्कि पाठशाला, विद्यालयों तथा अन्य विद्या के केंद्र हैं, उन केंद्रों में भी पाठ्यक्रम में शामिल हों ताकि एक सौहार्दपूर्ण समाज, सुखद समाज का पूरे जगत में निर्माण हो ऐसा उनका मानना है, ऐसी उनकी प्रतिबद्धता है।

इसलिए एक तरह से सोचें कि यह प्रतिबद्धता हैं क्योंकि आज का समय इतने तेज़ी से दौड़ रहा है, इतने बदलाव आ रहे हैं कि क्षण क्षण में बदलाव आते हमें महसूस हो रहे हैं कभी कभी हमें पता भी नहीं चलता कि क्या चीज़ में नए बदलाव आएं हैं। ऐसा एक समय और युग के अंदर गुजर रहे हैं। इस युग में यह देखा गया है कि परम पावन दलाई लामा जी का ही एक तरह से वचन है कि हमने भौतिकवादी सामग्री में हम लोगों ने विकास ऊंचे दर्जों का पा लिया है। उसके प्रति हम और भी अग्रसर हो रहे हैं। और भी नई नई चीजों का अविश्कार कर रहे हैं। नई नई चीजों के पीछे हम दौड़ रहे हैं, जिससे हमें लगता है उससे हमें सुविधा हो, उससे हमें एक तरह से सूकुन मिलता है, उससे हमें एक तरह से खुशी मिलती है लेकिन जैसे जैसे हम उसके पीछे दौड़ते हैं, जैसे जैसे हम उसके पीछे लगे रहते हैं और जैसे जैसे पूरा समाज उसके पीछे लगा रहता है जैसे कि आज के समाज में हम देखें तो सबसे पहले यह सोच रहती है कि मेरा क्या होगा, मैं और मैं ही केवल मैं की तरफ ज्यादा ध्यान केंद्रित रहते हुए और उसी स्वयं के, उसी मैं के पीछे दौड़ते दौड़ते फिर अंत हमें लगता है कि अब हम कहां पहुंचे हैं, कौन है हमारे साथ, हम किस दिशा में गए हैं तो ऐसे परिपेक्ष में क्या होता है कि भौतिकवादी विकास में हमने काफी उपलब्धियाँ प्राप्त की है लेकिन दूसरी तरफ मान की अंदरूनी स्थिति नियंत्रण से बाहर चले जाते हैं जिसके कारणवस आज के युग में छोटे छोटे उम्र के बच्चों का मानसिक संतुलन बिगड़ जाता है।

मात्र छोटी छोटी बातों से बहुत उल्टे सीधे कदम उठा लेना, यहां तक कि अपने स्वयं का जीवन समाप्त कर देना, खुदकुशी कर लेना और औरों का जीवन और औरों के दुख के प्रति संवेदनशील न होना, जगह जगह पर युवा आते हैं और गोली बारी करके कई सारे लोगों को मार देते हैं ऐसी घटनाई घटना। यह सारे विषय हमारे मानव समाज को एक तरह से बहुत ही थक्का, समाज को उल्टी दिशा में ले जाते हैं। समाज में एक दूसरे के प्रति स्नेह, एक दूसरे के प्रति एकात्मता है वह घटते जाते हैं। ऐसे समाज ना हो, ऐसे समाज के विपरीत एक ऐसा समाज हो जहां सब सौहार्दपूर्ण के साथ रहें, एक दूसरे के साथ भाईचारे से रहें, एक दूसरे में प्यार हो, ऐसी स्थिति बने और मन की शांति की स्थिति काफी ऊँचे स्तर की हो। इन चीजों के लिए अब हमें क्या चाहिए कि यह हमारे विचार हैं, सोच हैं, परम्परागत मत है विशेषकर नालंदा परम्परा के दर्शन में सिखाया जाता है वह मत है उसको पुनः एक तरह से समाज के अंदर विशेष रूप से युवा वर्ग के बीच पनपाने और प्रसार करने की सुविधा या हमें कार्यरत रहना चाहिए। यह इस वजह से उनका प्रतिबद्ध क्यों उन्होंने इसे अपना उद्देश्य को अपनाया। इस कारण वर्ष उन्होंने यह उद्देश्य अपनाया है।

उसी तरह इस उद्देश्य की प्रतिबद्धता के प्रति परम पावन दलाई लामा जी ने भले ही 85 वर्ष की उम्र में आज परम पावन दलाई लामा जी हैं, लेकिन उनका स्वास्थ्य बहुत ही अच्छा है और वह बहुत ही स्वस्थ रहते हैं। यहाँ तक कि कोरोना महामारी के बावजूद भी वह अपने आवास से ऑनलाइन के माध्यम से व्याख्यानमाला, वेबिनार, संवाद, प्रवचन आए दिन इन विषयों, विशेष रूप से सौहार्दपूर्ण समाज तथा नालंदा परम्परा के प्रति उनका विचार और उपदेश बार बार आते रहते हैं। उनका हमें समय समय पर दर्शन प्राप्त होता है।

उसी तरह जब कोविड की स्थिति नहीं थी, पूर्व में जगह जगह परम पावन दलाई लामा जी का प्रवास के दौरान विशेष रूप से युवा वर्गों से मिलना और उनके बीच में सुखद समाज के निर्माण के प्रति उनका प्रयास, मार्गदर्शन वह निरंतर दे रहें है। उसी के संदर्भ में सी-लर्निंग अर्थात सामाजिक, भावनात्मक और नैतिक शिक्षण की स्थापना यह किसी धर्म विशेष से प्रभावित ना होते हुए मात्र मानव होने के कारण से मानव क्या चाहता है? आपके केवल सुख सुविधा नहीं चाहते हैं बल्कि मन की शांति चाहते हैं, सुख जो एक तरह से संपूर्ण सुख हो केवल आपके शरीर की जो उंगली ठीक है कोई और भाग ठीक नहीं है तो यह आपके शरीर का स्वास्थ्य पूरी तरह से ठीक मानेंगे नहीं।

इन चीजों के प्रति लोगों में जागरूकता लाने के लिए परम पावन दलाई लामा जी का एक तरह से सी-लर्निंग (SEE Learning) के माध्यम से प्रयास किया जा रहा है। केवल भारत में ही नही बल्कि विदेशों में भी प्रयास किया जा रहा है। इसी तरह से मन और शरीर जो कि अपने आप में बहुत बड़ा विषय है, मुझ जैसे तुच्छ प्राणी इन चीजों पर टिप्पणी करते हुए थोड़ी सी

हिचकिचाहट होती है लेकिन आज जैसा मैने कहा कि दायित्व दिया है तो थोड़ा बोलना पड़ रहा है।

मन और शरीर है उसमें किस तरह से समागम रहते हैं। मन को किस तरह से अंकित करते हैं यह सारी चीजें भी विभिन्न वैज्ञानिक हैं, न्यूरोसाइंटिस्ट के साथ विचार विमर्श, उनके साथ वार्तालाप और युवा वर्गा के साथ वार्तालाप तो एक तरफ से परमपावन दलाई लामा जी आधुनिक एवं प्राचीन परम्परा उसका एक बहुत बड़ा और सशक्त कड़ी के रूप में समाज के लिए योगदान दे रहे हैं। यह हमारे लिए एक तरह से सौभाग्य है कि हम उस युग में हैं, उस समय में हैं जहाँ परम पावन दलाई लामा जी हमें मार्गदर्शन देते हैं और हमें उनका स्नेह प्राप्त होता है।

यह जो हम नालंदा परम्परा कह रहे हैं, वह केवल किसी विशेष धर्म या मत से हम इसको देख नही रहे हैं। उस श्रेणी में हम नही रख रहे हैं बल्कि उस परम्परा में जहां से बड़े बडे विद्वान आए थे जैसे आर्य भट्ट भी उस विश्वविद्यालय से जाने जाते हैं और उसी तरह से नागर्जुन हैं, आतिश हैं, आर्यदेव है और तिब्बतीयों में कहते हैं 17 महापंडित, एवं विद्वान उसके अतिरिक्त और भी सारे विद्वान इस विश्वविद्यालय से हुए हैं। मैं उन सबकी व्याख्या नहीं कर सकता क्योंकि मेरी उतनी जानकारी नहीं है।

उनके तर्क वितर्क, उनकी सोच है वह तर्क के आधार पर ना कि धर्म के प्रति आस्था या विश्वास पर न रहते हुए बल्कि तर्क पर विश्लेषण करके जो दर्शन उन्होंने समाज के लिए प्रदान किये हैं वह दर्शन परम पावन दलाई लामा जी कहते है यहां तक की एक चींटी भी वह सुख चाहते हैं और दुख नहीं चाहते है। इसलिए मानवता तो सुख चाहेंगे ही। इसलिए इन दर्शनों को अगर हम अपने जीवन या दिनचर्या में अनुसरण करें तो शत प्रतिशत ना सही बल्कि कुछ हद तक हमारे जीवन में लाभदायक सिद्ध होगा। उससे हमारे स्वभाव में शांति, मन को शांति विकसित करना और हमारे चाह और लोभ को अंकुश लगाने में भी बहुत बड़ा योगदान मिलेगा।

अगर आज की तिथि में देखें तो जितनी भी परेशानियाँ एवं कठिनाईयाँ हैं, जो भी दुख के कारण बने हैं वह मन में लोभ, ईर्ष्या, दोष इन्ही चीजों से बन रहे है। यह दर्शन इन नाकारात्मक सोच को दबाने में बहुत बड़ा सहयोग मिलता है।

इसलिए परम पावन दलाई लामा जी की चौथी प्रतिबद्धता है वह मैं मानता हूँ कि आज के समय की अनुकूल और समय की मांग की अनुकूल बहुत ही प्रासंगिक है। इसलिए विशेष रूप से इस तरह के केंद्र है वह और भी पनपने चाहिए और अगर ऐसा केंद्र है तो उसको प्रोत्साहित करना चाहिए। 2010 में भारत सरकार की ओर से नालंदा विश्वविद्यालय का विधेयक पारित किया गया है उससे एक अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय का दर्जा या नाम भी दिया गया है। उसका दर्जा प्राप्त करने हेतु हर क्षेत्र से उसपर प्रयास करना चाहिए।

अगर हम परम पावन दलाई लामा जी के अनुयायी होने के नाते से और परम पावन दलाई लामा जी को शांति के दूत मानने वाले के नाते से, हम उनके कहे हुए इन शब्दों तथा दिखाए गए मार्गदर्शनों का शत प्रतिशत अनुसरण कर सके उसकी तो कोई बात ही नहीं है लेकिन अगर हम 50 प्रतिशत उनका मार्गदर्शन या उपेदश पर अमल कर सके तो मैं समझता हूँ कि एक सौहार्दपूर्ण एवं भाईचारे का समाज निर्माण करने में बहुत बड़ा योगदान सिद्ध होगा।

इसलिए सभी से निवेदन करना चाहूँगा विशेष रूप से युवा वर्ग से चाहे वे तिब्बती युवा वर्ग हो या हमारे भारत के भाई बंधु युवा वर्ग क्यों ना हो चाहे अन्य देशों के युवा वर्ग जो हिंदी समझने वाले सभी को मैं निवेदन करना चाहूंगा कि यह केवल किसी पंथ या धर्म विशेष दर्शन का अनुसरण नहीं बल्कि एक सौहार्दपूर्ण समाज का निर्माण, एक अच्छे राष्ट्र का निर्माण, एक शांतिपूर्ण विश्व का निर्माण उनके प्रति एक तरह से प्रभाव रहेगा। इसलिए परमपावन दलाई लामा जी के इन उपदेशों का जितना भी अनुसरण हो सके करने का निवेदन करना चाहूँगा।

इसी के साथ अंत में मैं, परम पावन दलाई लामा जी की दीर्घायु की कामना करता हूँ, उनका आशीर्वाद सदैव हमारे सर पर रहे। उनका कार्य, उद्देश्य, प्रयास इत्यादि जितनी जल्दी हो सके पूर्ण हों, पूरे विश्व में शांति का वातावरण है, वह कायम हो सके, एक दूसरे के साथ प्यार और स्नेह के साथ रह सके ऐसी मेरी प्रार्थना है। इसी के साथ मैं अपनी बात को समाप्त करता हूँ। अगर गलती से कोई भूल चूक हो तो इसके लिए क्षमा प्रार्थी हूँ। धन्यवाद।

प्रो. जमयङ ग्यलछन
पूर्व प्रोफेसर, केंद्रीय बौद्ध विद्या संस्थान, लद्दाख

परम पावन दलाई लामा जी की चार प्रतिज्ञाएँ

सर्व प्रथम मैं जगत गुरु परम पावन दलाई लामा जी के चरण कमलों में मस्तक झुका कर नमन करता हूँ। इसके पश्चात् परम पावन जी की चार प्रतिज्ञाओं के विषय में कुछ प्रकाश डालने का प्रयास करूँगा।

1. समानता की भावना को बढ़ाने का प्रयास करना

दलाई लामा जी की प्रथम महत्वपूर्ण प्रतिज्ञा संसार में जितने भी मनुष्य हैं, सबके सब एक समान हैं। इसीलिए समानता की भावना को बढ़ाने का प्रयास करना उनकी प्रथम प्रतिज्ञा है।

2. संसार के सभी धर्मों की रक्षा करना

दलाई लामा जी की द्वितीय महत्वपूर्ण प्रतिज्ञा सभी धर्मों की रक्षा करना है। क्योंकि वे एक बौद्ध भिक्षु हैं, बौद्ध भिक्षु होने के कारण सभी धर्मों के शास्ताओं के प्रति उनके मन में आदर एवं सत्कार करने की भावना बनी रहती है।

3. तिब्बत तथा तिब्बतियों की मनोकामनाओं की पूर्ति हेतु निरन्तर प्रयास करना

दलाई लामा जी वास्तव में एक तिब्बती हैं। उनकी तृतीय प्रतिज्ञा तिब्बती होने के कारण तिब्बतियों की प्रबल मनोकामनाओं की पूर्ति करना तथा तिब्बत को लेकर जो कष्ट उठाना है, तो उसे उठाने का संकल्प करना है।

4. नालन्दा की शिक्षण परम्परा का पुनरुद्धार करना

भारत संसार में एक विशाल देश है। यहाँ प्राचीन काल में अनेक महत्वपूर्ण शिक्षा के केन्द्र थे, तक्षशिला, नालन्दा, विक्रमशिला, ओदन्तपुरी एवं शारदापीठ आदि। इनमें से नालन्दा महाविहार सर्वश्रेष्ठ था। यहाँ के विद्वानों के द्वारा रचित अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रन्थों के अध्ययन एवं अध्यापन की परम्परा आज भारत में प्रायः लुप्त हो चुकी है। उसमें पुनः प्राण डालना परम पावन जी की चौथी प्रतिज्ञा है।

अब मैं इनके विषय में ज़रा विस्तार से प्रकाश डालने का प्रयास करूँगा।

1. समानता की भावना को बढ़ाने के लिए उनका प्रयास

संसार में अनेक देश हैं। इन देशों में अनेक लोग निवास करते हैं। भारत उन देशों में से एक है। इस देश में अनेक राज्य, अनेक जाति, अनेक प्रकार के धर्म के अवलम्बी निवास करते हैं। इनमें से हिन्दू धर्म को मानने वाले सबसे अधिक हैं। हिन्दुओं में अधिक जात-पात हैं, जैसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शुद्र। प्राचीन काल में इन जात-पात के कारण वैश्यों तथा शुद्रों को अनेक कष्ट उठाना पड़ता था। भारत में अभी भी जात-पात के कारण उन्हें समाज में कष्ट उठाना पड़ रहा

है। इसी तरह पश्चिमी देशों में गौरों तथा कालों के बीच संघर्ष चलता रहता है। साउदी अरब, ईरान और ईराक में भी शिया तथा सुन्नी के बीच खींच-तान होती रहती है। इसी तरह संसार के अन्य देशों में भी लोग समाज में समानता की भावना की कमी के कारण आपस में झगड़ते रहते हैं। अतः परम पावन जी का मानना है कि संसार में जो भी मनुष्य हैं, सभी ने अपनी माता की कोख से जन्म लिया है। उसी तरह मैं भी एक मानव हूँ, मैं भी अपनी माँ की कोख से पैदा हुआ हूँ तथा सभी मानवों की तरह मैं भी माता जी का स्तन-पान करके उनके स्नेह तथा करुणा से बड़ा हुआ हूँ। इसी तरह संसार में जितने भी मनुष्य हैं, सब के सब एक समान हैं। कोई जाति के कारण, रंग के कारण, देश के कारण तथा संस्कृति आदि के कारण श्रेष्ठ हो तथा कुछ नीच हो, ऐसी बात नहीं है। इस तरह के ज्ञान यदि सभी मनुष्य को मिल जाय, तो आपस में झगड़ा कहाँ? अतः परम पावन जी अनथक प्रयास कर रहे हैं कि सभी मनुष्य एक समान हैं। सभी में इस तरह की भावना को जागृत करना उनकी प्रथम महत्वपूर्ण प्रतिज्ञा है। इसी प्रतिज्ञा के अनुसार संसार में स्वयं से बड़े जो भी हैं, उनको अपना बड़ा भाई तथा छोटों को अपना छोटा भाई समझना चाहिए। इसी तरह बड़ी औरतों को अपनी बड़ी बहन तथा छोटी औरतों को अपनी छोटी बहन समझनी चाहिए। एक दूसरे के प्रति दया, प्रेम तथा करुणा की भावना रखनी चाहिए। तभी सभी मानव सुख तथा शान्ति से रह सकते हैं।

2. संसार के सभी धर्मों की रक्षा करना

परम पावन दलाई लामा जी एक बौद्ध भिक्षु हैं। बौद्ध भिक्षु होने के कारण संसार में जितने धर्म हैं, उन सबकी रक्षा करना उनकी दूसरी महत्वपूर्ण प्रतिज्ञा है। संसार में जितने धर्म हैं, उनके मानने वालों और न मानने वालों की संख्या निम्न प्रकार है-

1. ईसाई धर्म को मानने वाले- 255 करोड़ तथा 90 लाख
2. मुस्लिम धर्म को मानने वाले- 195 करोड़
3. कोई भी धर्म न मानने वाले-128 करोड़
4. हिन्दू धर्म को मानने वाले- 122 करोड़
5. बहाई धर्म को मानने वाले- 83 करोड़ तथा 27 लाख
6. बौद्ध धर्म को मानने वाले- 55 करोड़ तथा 57 लाख
7. सिख धर्म को मानने वाले- 3 करोड़ तथा 28 लाख
8. यहूदी धर्म को मानने वाले- 1 करोड़ तथा 57 लाख
9. चीन के पारम्परिक धर्म को मानने वाले- 42 करोड़

ये सभी धर्म संसार के लोगों को दुःखों से मुक्त करने तथा सुखी जीवन व्यतीत् करने के मार्ग को दर्शाते आये हैं। इन धर्मों ने करोड़ों लोगों के जीवन सार्थक बनाये हैं। इन सभी धर्मों के दो पक्ष हैं, धार्मिक पक्ष और सैद्धान्तिक पक्ष। प्रायः सभी धर्मों के धार्मिक पक्ष समान हैं, यथा

प्यार, दया, करुणा, साहिष्णुता, दान देना, शील का पालन करना, इमानदार बनना तथा परोपकार करने की शिक्षा देना इत्यादि।

हम हिन्दू धर्म को लें, तो यह आज से पाँच हज़ार वर्ष पूर्व से अहिंसा, परोपकार, दान, शील आदि की शिक्षा देते आ रहा है। अहिंसा तभी संभव है, जिसके मन में दया, करुणा जैसी अनमोल भावना हो, इनके बिना अहिंसा का प्रश्न नहीं है। अतः हिन्दू धर्म दया, करुणा तथा मैत्रेय आदि मनोगुणों पर विशेष बल देते आ रहा है। इसी तरह ईसाई धर्म भी दया, करुणा तथा साहिष्णुता पर विशेष बल देता है। देखिए, ईसाइयों के शास्ता भगवान ईसा मसीह सूली पर चढ़ते समय उन बुद्धिहीन वालों पर क्रोध छोड़कर कहा कि तुम सब ने अभी तक जो भी पाप किये हो, वे सारे पाप मैं स्वयं उठाकर जा रहा हूँ। यदि उनके मन में दया, करुणा जैसी अनमोल भावना नहीं होती, तो वैसा कौन कहेगा, सोचने की बात है। इसी तरह इस्लाम धर्म को ले लिजिए। पवित्र कुरान की सूरे फातिहा में लिखा है कि अल्लाह के नाम से जो अत्यन्त दयावान, कृपालु हैं, प्रत्येक प्रकार की प्रशंसा अल्लाह ही को है, जो सारे संसार का पालनहार है। इसी तरह इसकी प्रथम पंक्ति में भी लिखा है-

अल्लाह के नाम से जो अत्यन्त दयावान तथा कृपालु हैं, अलिफ, लाम और मीन। इससे स्पष्ट होता है कि अल्लाह अत्यन्त दयावान हैं। वे सभी मानव पर दया करते हैं। वे किसी को भी किसी भी प्रकार के दुःख देना नहीं चाहते। अतः सभी प्रशंसाएँ उनके प्रति हैं। अतः मुस्लिम हो या न हो, जितनी दया अल्लाह के मन में है, उसी के अनुरूप हम सभी के मन में भी दया तथा कृपा होनी चाहिए। ऐसा करने पर संसार में सभी मनुष्य अपने भाई तथा बहन की भाँति प्रतीत होंगे तथा विश्व में शान्ति स्वयं आ जायेगी। इसी तरह अन्य धर्मों ने भी करोड़ों लोगों के जीवन को सार्थक तथा सुखी बनाया है। अतः इन धर्मों का ह्रास न हो जाये, इसके प्रति निरन्तर प्रयास करना परम पावन जी की द्वितीय प्रतिज्ञा है, जो अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा प्रशंसनीय है।

3. तिब्बत तथा तिब्बतियों की मनोकामनाओं की पूर्ति हेतु अनथक प्रयास करना

परम पावन दलाई लामा जी एक तिब्बती हैं। तिब्बती होने के कारण तिब्बत के विषय में विचार करने, तिब्बतियों की प्रबल कामनाओं की पूर्ति करने के लिए अनथक प्रयास करना उनका कर्त्तव्य है। साथ ही वर्तमान में तिब्बत के पर्यावरण पर जो बुरा प्रभाव पड़ रहा है, उससे न केवल तिब्बत अपितु संसार, सबसे विशाल देश भारत तथा चीन पर भी बुरा प्रभाव पड़ेगा। क्योंकि संसार की महान नदियों में चार के स्रोत तिब्बत में हैं, यथा- गंगा (सतलुज), सिन्धु (करनल), सीता (इण्डस) तथा पक्षु (ब्रह्मपुत्र)। ये सभी नदियाँ तिब्बत के सुप्रसिद्ध पर्वत कैलाश तथा मनसरोवर के आस-पास से निकालती हैं। यदि तिब्बत के पर्यावरण पर ध्यान न देकर बर्बाद होने देंगे, तो भारत तथा चीन दोनों को स्वच्छ जल प्राप्त नहीं होंगे। इससे लोग जल के लिए तरसते रहेंगे। खेती-बाड़ी अच्छी तरह हो नहीं पायेगी, जिससे लोगों के खाने के लिए चावल, दाल, आटा आदि का मिलना कठिन हो जायेगा। अतः भोट देश के पर्यावरण पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

इतिहास की दृष्टि से देखें तो तिब्बत का प्रथम राजा ञ-ठि-च़न-पो (ई.पू. 200) भारतीय था। श्रावस्ती के राजा प्रसेनजीत के वंश में एक राजकुमार पैदा हुआ था। उनकी आँखें ऊपर की ओर ढकती थी। अतः यह राजा तथा मन्त्रियों को अशुभ लगा, जिसके कारण बाद में उसको देश से निष्कसित कर दिया गया। वह घूमते-घूमते जंगलों से होते हुए तिब्बत में पहुँच गया। वहाँ पर पशुपालक भेड़-बकरियाँ चराने के लिए उस घाटी में आ गये थे।

उन्होंने देखा कि एक तेजस्वी, हट्टे-कट्टे गौरे जवान ऊपर पर्वत की चोटी से नीचे की ओर आ रहा है। उनके सामने पहुँचने पर पशुपालकों ने पूछा कि आप कहाँ से आये। यह बात राजकुमार की समझ में नहीं आयी, परन्तु उन्होंने अनुमान लगा कर ऊपर की ओर अँगुली से इशारा किया। उन लोगों ने सोचा कि यह आदमी आसमान से उतर कर आया है। अतः यह मनुष्य नहीं होगा, कोई देवता होगा। शाम को वे लोग मवेशी लेकर गाँव की ओर चले गये तथा उस राजकुमार के विषय में वार्तालाप करते रहे। गाँव वालों को भी आश्चर्य हुआ तथा उन्होंने यह निर्णय लिया कि उसे गाँव में लाकर गाँव वालों के सुख-दुःख तथा समस्याओं को मिटाने के लिए अधिकारी के रूप में नियुक्त किया जाय। अतः दूसरे दिन पशुपालक अपनी भेड़-बकरियाँ चराते हुए उसी घाटी में गये तथा वे बाँस के डण्डों को जोड़कर, चारपाई जैसा बनाकर, उस पर उसे बिठाकर, अपनी गर्दन पर उठाकर गाँव ले गये। इसलिए उनका नाम ञ-ठि-च़न-पो (ई.पू. 200) पड़ा अर्थात् गर्दनों पर बिठाकर लाये नृप रखा गया। यही भोट देश का प्रथम राजा था। परन्तु चीन का आधिपत्य तिब्बत पर कभी भी नहीं रहा। तब भी बन्धुत्व अवश्य रहा। भोट देश के 33वाँ राजा स्त्रोङ-च़न स्गम-पो की एक रानी चीन के राजा थङ-थै-ज़ुङ की राजकुमारी ह्रु-लेन कोङ्जो थी। इसी तरह भोट देश के राजा ठि-स्त्रोङ ल्दे-च़न की माँ भी एक चीनी राजा की बेटी थी। अतः तिब्बत तथा चीन आपस में रिश्तेदार अवश्य रहे।

परन्तु 1959 ई. में चीन ने तिब्बत को हड़प लिया है। यह उचित बात नहीं है। अतः परम पावन जी को तिब्बत के विषय में सोचना तथा वहाँ के निवासियों की कामनाओं की पूर्ति करना उनकी तीसरी प्रतिज्ञा है, जो अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा अनुमोदनीय है।

4. नालन्दा की शिक्षण परम्परा का पुनरुद्धार करना

भारत संसार के विशाल देशों में से एक है। प्राचीन काल में भारत में अनेक शिक्षा के केन्द्र थे, यथा तक्षशिला महाविहार, नालन्दा महाविहार, विक्रमशिला महाविहार, ओदन्तपुरी महाविहार तथा शारदापीठ आदि। इनमें से नालन्दा महाविहार का महत्व सबसे अधिक था। चौथी-पाँचवीं शताब्दी में नालन्दा में दस हज़ार छात्र तथा एक हज़ार प्रोफेसर थे। वैसे इस महाविहार की स्थापना ई.पू. तीसरी-चौथी शताब्दी में हुई थी। इसमें आचार्य नार्गाजुन, आचार्य आर्यदवे, आचार्य असंग, आचार्य दिङ्नाग तथा आचार्य धर्मकीर्ति आदि अद्वितीय आचार्य हुए हैं। इस प्रकार विशेष महत्व रखने वाले नालन्दा के सत्रह विद्वान आचार्य हुए हैं। इन्होंने भगवान बुद्ध के वचनों की वृत्ति के रूप में

अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथों की रचना की। प्राचीन काल में नालन्दा में उन शास्त्रों का अध्ययन तथा अध्यापन होता था। इन ग्रन्थों के विषय दस महत्वपूर्ण विद्यास्थानों में आवंटित थे। इन्हें पाँच महान विद्यास्थानों तथा पाँच लघु विद्यास्थानों के नाम से जाना जाता था। पाँच महाविद्यास्थानों में शब्द विद्या, प्रमाण विद्या, शिल्प विद्या, चिकित्सा विद्या तथा आध्यात्मिक विद्या आते हैं। पाँच लघु विद्यास्थान हैं- अभिधान, छन्द, काव्य, नाटक तथा ज्योतिष। इन सभी विषयों की पढ़ाई नालन्दा महाविहार में होती थी। इनके अतिरिक्त षट् दर्शनों के सिद्धान्त तथा साहित्य की पढ़ाई भी होती थी।

आचार्य नागार्जुन द्वारा विरचित प्रज्ञामूलमध्यमककारिका, विग्रहव्यावर्तनी, शून्यता सप्तति, युक्तिषष्टिका, वैपुल्यसूत्र तथा मध्यमक रत्नमाला आदि मध्यमक दर्शन के अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रन्थ हैं। इसी तरह प्रमाण से सम्बन्धित आचार्य दिङनाग द्वारा रचित प्रमाण समुच्चय, आचार्य धर्मकीर्ति द्वारा रचित प्रमाणवार्तिक आदि आश्चर्यजनक तर्क शास्त्र के ग्रन्थ हैं। इसी तरह आचार्य वसुबन्धु द्वारा रचित अभिधर्मकोश, पाँच स्कन्ध प्रकरण आदि महत्वपूर्ण ग्रन्थ हैं।

षट् दर्शन निम्न हैं-सांख्य दर्शन, वैशेषिक, मीमांसक, जैन, नैयायिक तथा चार्वक।

इन दर्शनों की पढ़ाई भी नालन्दा में होती थी। आज भी भोट देश के महाविहारों में इन दर्शनों की पढ़ाई आवश्यक रूप से की जाती है। इनके ग्रन्थ भोटी में अनूदित हैं। नवीं शताब्दी तक नालन्दा विश्वविद्यालय के रूप में फल-फूल रहा था। परन्तु नवीं शताब्दी के अन्त तथा दसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में बख्तियार खिलजी नामक एक खूँखार अफगानी ने भारत पर आक्रमण करने के साथ-साथ नालन्दा जैसे महान शिक्षा के केंन्द्रों को भी नष्ट कर दिया एवं हज़ारों भिक्षुओं को मौत के घाट उतार दिया। उसने अमूल्य दार्शनिक ग्रन्थों से परिपूर्ण ग्रन्थालयों को अग्नि में स्वाहा कर दिया। परन्तु सौभाग्य की बात यह थी कि बख्तियार खिलजी द्वारा विनाश करने से पूर्व ही सातवीं शताब्दी में भोट देश के राजा स्त्रोङ च़्न स्गम-पो ने अपने मन्त्री के सुपुत्र थोन-मी संभोट को भारत में लिपि तथा व्याकरण आदि सीखने के लिए पर्याप्त स्वर्णचूर्ण के साथ भेजा था। वे भारत में आकर ब्राह्मण लिपिकर को सोना अर्पित कर ब्रह्मी तथा खरोष्ठी आदि लिपियाँ सीखे तथा उन्होंने पाणिनी व्याकरण आदि व्याकरण के ग्रन्थों का अध्ययन किया। उन्होंने नालन्दा महाविहार में प्रवेश लेकर आचार्य देवविद्या सिंह जैसे विद्वान आचार्यों से बौद्ध धर्म तथा दर्शन के शास्त्रों का अध्ययन किया। इस प्रकार सात वर्षों तक भारत में समय बिताकर वे पुनः अपने देश (भोट) वापस चले गये। अपने देश में पहुँचने पर राजा स्त्रोङच़्न स्गम-पो ने उनका स्वागत किया तथा उनसे तिब्बती भाषा के लिए लिपियों की रचना करने को कहा। थोनमी ने भी राजा की आज्ञा के अनुसार ब्रह्मी लिपि अथवा शारदा लिपि के आधार पर भोट भाषा के लिए लिपियों की रचना की। संस्कृत में 16 स्वर तथा 34 व्यंजन होते हैं। भोटी में उन सब की आवश्यकता नहीं थी। अतः भोट भाषा के अनुरूप चार स्वर तथा 30 व्यंजनों को निर्धारित किया गया। उन्हीं स्वर

तथा व्यंजनों के आधार पर थोनमी ने इष्ट देव आर्य अवलोकितेश्वर से सम्बन्धित 21 ग्रन्थों को संस्कृत से भोटी में अनुवाद किया।

आठवीं शताब्दी में भोट देश के राजा ठि-स्रोङ ल्दे-च़न ने नालन्दा विश्वविद्यालय से वहाँ के धुरन्धर विद्वान आचार्य शान्तरक्षित को भोट देश में आमन्त्रित किया। उस समय भोट देश में न तो बौद्ध विहार था न ही भिक्षु। आचार्य वहाँ पहुँच कर राजा तथा मन्त्रियों सहित लोगों को भी त्रिशरण गमन, प्रतीत्यसमुत्पाद जैसी धर्म देशना प्रदान किये, जिससे वहाँ के अमनुष्य लोग रुष्ट हो गये तथा जनता में विभिन्न प्रकार के रोग फैलाये। उन्होंने वर्षा कर राजा का एक महल बहा डाला। उस समय भोट देश में बोन धर्म को मानने वाले कई मन्त्री भी थे। अतः उन्होंने राजा से कहा कि बौद्ध भिक्षु के भोट देश में आकर धर्म देशना करने से ये सारी मुसीबतें आ रही हैं। अतः उन्हें वापस भारत भेज दो। नहीं तो बाद में क्या-क्या होगा, कहा नहीं जा सकता है। ऐसा कहने पर राजा ने भी विवश होकर आचार्य से वापस पधारने के लिए प्रार्थना की। तब आचार्य ने कहा था कि बात सही है। यहाँ धर्म न चाहने वाले अनेक अमनुष्य हैं। उन्हें दमन करने के लिए भारत से महान सिद्ध पुरुष आचार्य पद्मसंभव को यहाँ बुलाकर लाना होगा, तब जाकर सद्धर्म का प्रसार तथा प्रचार हो सकेगा। उनके कथन अनुसार राजा ने पद्मसंभव को भोट देश में आमंत्रित करने के लिए मंत्री ब-सल-स्नङ सहित कई राजदरबारियों को भेजा। वे लोग भोट देश से नेपाल होते हुए भारत में प्रवेश किये, तो मार्ग में आचार्य पद्मसंभव से उनकी भेंट हुई तथा उनसे भोट देश में पधारने के लिए निवेदन करने पर उन्होंने सहर्ष निवेदन स्वीकार किया। उनके साथ आचार्य पद्मसंभव 810 ई. में भोट देश पहुँच गये तथा वहाँ के सभी खूँखार अमनुष्यों का दमन किया। राजा तथा आचार्य शान्तरक्षित के साथ आचार्य पद्मसंभव समयस महाविहार के निर्माण करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिये। उन्होंने वैरोचन आदि को संस्कृत पढ़ाया तथा बाद में वे महान अनुवादक बने। तब राजा ने सुव्यवस्था करके नालन्दा में विद्यमान भगवान बुद्ध के जितने वचन के ग्रन्थ संस्कृत में थे, उन्हें तथा आचार्य नागार्जुन आदि द्वारा रचित सैंकड़ों दर्शन, साहित्य, चिकित्सा आदि के ग्रन्थों को भी भोट देश में लाकर संस्कृत तथा पालि आदि भाषाओं से भोटी में अनुवाद करवाया था। ठि-स्रोङ ल्दे-च़न के पश्चात् भोट देश के राजा ठि-रल-प-चन ने भी बौद्ध वाङ्मय को भोटी में अनुवाद करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया।

भोटी में अनूदित भगवान बुद्ध के जितने भी वचन थे, बाद में उन्हें अलग से संगृहीत कर 'काग्युर' तथा आचार्य नार्गाजुन आदि सत्रह विद्वान आचार्यों के द्वारा विरचित ग्रन्थों का स्तन-ग्युर नाम देकर प्रकाश में लाये गये। इस समय का-ग्युर में 108 ग्रन्थ तथा स्तन-ग्युर में 225 ग्रन्थ भोटी में सुरक्षित हैं। ये विद्या की निधियाँ भारत की ही हैं। इन ग्रन्थों का भोटी में होना मात्र आश्चर्य की बात नहीं है, क्योंकि आठवीं शताब्दी से लेकर अभी तक बौद्ध लोग इन ग्रन्थों के अध्ययन, अध्यापन, साधना, भावना पूर्ववत् करते आ रहे हैं।

भारत में इन ग्रंथों के अध्यापन की परम्परा समाप्त हो चुकी है, जो अत्यन्त दुःख की बात है। क्योंकि ये ग्रन्थ केवल बौद्धों के धर्म शास्त्र मात्र नहीं हैं, इनमें सम्पूर्ण मानव के लिए सुख तथा शान्ति के मार्गदर्शन हैं। अतः परम पावन दलाई लामा जी की चौथी प्रतिज्ञा प्राचीन काल की तरह भारत में पुनः इनकी पढ़ाई की व्यवस्था करनी है, जिसके लिए वे अनथक प्रयास कर रहे हैं और करते रहेंगे।

‘‘सर्व मंगलम भवतु‘‘

कैलाश चन्द्र बौद्ध

हिंदी अनुवादक, परमपावन दलाई लामा के कार्यालय

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मा सम्बुद्धस्स।
नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मा सम्बुद्धस्स।
नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मा सम्बुद्धस्स।

सर्वप्रथम मैं, निर्वासन में तिब्बत सरकार और सूचना एवं अंतर्राष्ट्रीय संबंध विभाग को धन्यवाद देना चाहता हूँ। इस विभाग द्वारा परम पावन दलाई लामा जी के जीवन की चार प्रमुख प्रतिबद्धताओं के संबंध में ऑनलाइन संवाद श्रृंखला का आयोजन किया जा रहा है। यह बहुत ही महत्वपूर्ण विषय है और एक बहुत ही आवश्यक कदम है। उसके लिए मैं, तिब्बती सरकार और सूचना एवं अंतर्राष्ट्रीय संबंध विभाग को बहुत-बहुत साधुवाद देना चाहता हूँ। इस प्रकार की व्याख्यानमाला निश्चित रूप से लाखों लोगों को लाभ मिलेगा।

परम पावन दलाई लामा जी की चार प्रमुख प्रतिबद्धताएं वास्तव में विश्व के लिए अनमोल धरोहर के रूप में हैं। आज के वैश्विक परिवेश में इनकी महत्वता बहुत ज्यादा बढ़ जाती है। खासकर तब जब आधुनिक समय में चारों तरफ मारामारी है, लोग परेशान हैं तथा मौजूदा समय में कोरोना महामारी से हम सभी लोग कठिनाईयों से गुजर रहें हैं और इससे जूझ रहें हैं।

ऐसे समय में परम पावन दलाई लामा जी की प्रमुख चार प्रतिबद्धताओं पर ऑनलाइन बातचीत श्रृंखला, मैं मानता हूँ कि यह कदम सच में काबिले तारीफ है। उनको हमें जानने की जरूरत हैं। वास्तव में परम पावन जी वही कह रहे हैं जो उनकी प्रतिबद्धताएं हैं। प्रतिबद्धताएं कितनी कारगर हो सकती है? वास्तव में हम लोगों के लिए लाभदायक है या नहीं? इनकी उपयोग्यता है कि नही? परम पावन जी के विचारों को रख पाना हमारे जैसे अल्पज्ञ के मुख से एक बड़ी बात कहने के समान होगा। क्योंकि परम पावन जी के नाम से ही स्पष्ट होता है कि वह ज्ञान के सागर है। उस सागर में एक प्रकार से गोता लगा पाना बड़ा ही दुष्कार काम है।

लेकिन फिर भी मैं जितना भी समझ पाया हूँ उसको आप लोगों के समझ रखने की कोशिश करूँगा। उनका हिंदी अनुवादक होने के नाते पिछले कई वर्षों के अनुभव तथा इसके अलावा अध्ययन करने से समझ पाया हूँ कि असल में परम पावन दलाई लामा जी के विचार विश्व के लिए एक अमूल्य उपहार के रूप में हैं। उनकी प्रतिबद्धताएं किसी धर्म विशेष के लोगों के लिए ही हों ऐसी बात कदापि नहीं है। ये विश्व के हर एक प्राणी के लिए हैं। खासकर मनुष्यों के लिए हैं चाहे वह कहीं से भी हो, एशिया का हो, यूरोप का हो, अमेरिका का हो, विश्व के किसी भी कोने का हो, हर व्यक्ति विशेष के लिए उनकी चार प्रतिबद्धताएं बहुत ही लाभदायक हैं।

परम पावन जी की चारों प्रतिबद्धताएं कोई एक दिन में आ गई हो ऐसा नहीं है। ये प्रतिबद्धताएं उनके जीवन से जुड़ीं हैं। जिन पर उन्होंने अपने सम्पूर्ण जीवन को जिया है, वह चले हैं। जैसा कि अक्सर परम पावन जी कहा करते हैं कि साठ-सत्तर वर्ष का उनका अनिभव है।

वास्तव में उनकी प्रतिबद्धताएं सब के लिए हैं। आपने अक्सर सुना भी होगा कि चाहे धार्मिक हो या अधार्मिक हो, चाहे आस्तिक हो या नास्तिक हो लेकिन सबसे पहले तो हम मनुष्य हैं। मनुष्य होने के नाते हम सभी लोग यही चाहते हैं कि सुख मिले और दुख न मिले। यह केवल मनुष्य मात्र की बात नहीं है बल्कि सभी जीवों के हित के लिए परम पावन जी बात करते हैं।

परम पावन दलाई लामा जी की पहली प्रतिबद्धता मानव मूल्यों का प्रोत्साहन करना है। मानव मूल्य क्या हैं? हमें मानव मूल्यों को क्यों प्रोत्साहित एवं बढ़ाना चाहिए? वह अक्सर कहते हैं कि जब से मैं तिब्बत से आया हूँ तब से विश्व के कई लोगों से मिला। हर तरह के लोगों से मिला, धार्मिक लोगों से मिला, वैज्ञानिकों से मिला, अमीरों से मिला, गरीबों से मिला, विश्व के कोने-कोने के लोगों से मिला। उनसे मिलने के बाद यह स्पष्ट होता है कि उन सभी की यही चाहत है वे सुखी रहें। लोग सुबह से लेकर शाम तक भाग-दौड़ कर रहें हैं। इसका एकमात्र उद्देश्य यही है कि उन्हें सुख की प्राप्ति हो और किसी भी प्रकार से दुख ना मिले।

मनुष्यों के जो मानव मूल्य हैं उनको बढ़ाना चाहिए। मानव मूल्यों में जैसे करूणा, अहिंसा, सद्भाव, मैत्री, क्षमा, धैर्य आदि हैं जिन्हें हम भूलते जा रहें हैं। उनका हमें प्रोत्साहन करने की आवश्यकता है। हम मनुष्य रहते हुए भी अपने मूल्यों को ना समझ पायें, उनको दूसरों को ना बाँट पाएं तो हमारा जीवन सार्थक सिद्ध नहीं होगा।

बौद्ध ग्रंथों में भी कहा जाता है कि मानव जीवन कितना दुष्कर है। हमें जो मानव का शरीर मिला हुआ है वह बहुत ही दुष्कर, बहुत कठिन एवं दुर्लभ है। इसको प्राप्त करने के बाद भी हमारे अंदर क्षमा की भावना, करुणा, मैत्री, अहिंसा की भावना ना हो, दूसरों के दुखों को ना समझ पाएं तो फिर इन मानव मूल्यों का ज्यादा अर्थ नहीं रहेंगा। आप जानते हैं कि जानवर भी अपना जीवन यापन कर ही लेते हैं।अगर हम भी इनकी तरह अपना जीवन जिए तो यह मात्र जीवन यापन करना ही रह जाएगा, अर्थपूर्ण जीवन नहीं बनेगा। अर्थपूर्ण जीवन तब सिद्ध हो सकता हैं जब आप इनके मूल्यों को समझें। स्वयं पर करूणा रखें, दूसरों पर भी रखें।

आचार्य शान्तिदेव बोधिचर्यावतार ग्रन्थ में कहते हैं कि अगर आप सुख चाहते हो तो आपको करूणा का अभ्यास करना चाहिए, दूसरों के लिए भी सुख की कामना करते हो तब भी करुणा का अभ्यास करना चाहिए। करुणा से बेहतर अन्य कोई श्रेष्ट अभ्यास नहीं है। यह सभी सुखों का मूल है।आप जितना ज्यादा करुणामयी होंगे उतने ही आप सुखी होंगे,अन्य भी सुखी होंगे।

परम पावन जी बार-बार करूणा पर जोर देते हैं। वह इसलिए कि मानवता के लिए हमें मानव मूल्यों को बढ़ाना है। विश्व के जितने भी मनुष्य हैं उनको मानव मूल्यों को बढ़ाना चाहिए।

क्योंकि, आज जो भी समस्याएं हैं वे ज्यादातर मानव निर्मित हैं। हमारे द्वारा बनाई हुई समस्याएं हैं। वे इसी वजह से आयी हैं क्योंकि कहीं न कहीं कुछ कमी रह गई है। हमारी करूणा में कमी आ रही है, मैत्री में कमी आ रही है एवं धैर्य में कमी आ रही है।

छोटी-छोटी बातों को बड़ी बातें बना देते हैं। हमारे अंदर धैर्य में कमी आ गई है। धैर्य कहीं बाहर से नहीं मिलता है। इसे पाने के लिए अलग से आपको पढ़ने जाना पड़े, कहीं अलग से इसके विद्यालय खुले हों ऐसा बिलकुल भी नहीं है। करुणा,मैत्री, धैर्य आदि हमारे अंदर निहित मूल्य हैं तथा इनका हमें रख-रखाव करना चाहिए।

अक्सर परम पावन जी कहते हैं कि ये मानव मूल्य हमें बचपन से मिले हैं, हमें अपने माँ-बाप से प्राप्त हुए हैं। हम उनके सानिध्य में पलते हैं, बड़े होते हैं, तरक्की करते हैं अतः इन मूल्यों का हमें प्रोत्साहन करना चाहिए। बच्चों से शुरुआत करें क्योंकि जैसे-जैस वे बड़े होंगे, समाज में जाएगें एवं विश्व में कही भी जाएंगे तो वे मानव मूल्यों को लेकर चलेंगे तो उस व्यक्ति का जीवन सार्थक होगा। हालाँकि कहने को तो बुहत है अगर संक्षेप्त में कहना चाहूँगा कि परम पावन जी इस पर गंभीर व्याख्यान करते हैं कि आज के समय में हम सब को साथ-साथ रहना है। हम देश, जाति, धर्म में बटवारे को देखते हुए पले-बड़े हैं तो इसमें पड़ने की आवश्यकता नहीं है। हमें अपने आपको पहचान करके अपने जीवन को सिद्ध करने और उस पर चलने की आवश्यकता है। इस पर परम पावन जी ज्यादा जोर देते है।

परम पावन दलाई लामा जी की दूसरी प्रतिबद्धता विश्व की धार्मिक परम्पराओं के बीच पारस्परिक सामंजस्य बनाना है। पारस्परिक सामंजस्य बनाना बहुत बड़ी बात है। इसकी वजह है, खासकर हम लोग अगर एशिया की बात करे तो एशिया के ज्यातार लोग किसी ना किसी धर्म परम्परा से जुड़े हैं तथा यूरोप एवं अमेरिका आदि देशों के लोग भी किसी न किसी धर्म परम्परा से से जुडे हैं। लेकिन एशिया के लोगों में धार्मिक श्रध्दा भी ज्यादा होती है। धर्म के प्रति उनके क्रियाकलाप भी अन्य लोगों की तुलना में कहीं ज्यादा होतें हैं तथा ये परम्परागत भी हैं।

भारत में विभिन्न धार्मिक परम्पराओं के लोग रह रहें हैं। जहाँ हम रह रहें है,वहीं हमारी बगल में दूसरी परम्परा वाले, दूसरे पंथ को मानने वाले भी रहते होंगे। अगर हम लोग साथ-साथ नहीं रहेंगे, सद्भाव से नहीं रहेंगे तो फिर एक साथ रहने से क्या फायदा है।

परम पावन जी प्रवचन देते समय वह केवल बौद्ध अनुयायियों के लिए ही विशेष रूप से प्रवचन दे रहे हों ऐसा कभी नहीं होता है। वह मानवता की भलाई और सभी परम्पराओं के प्रति एक समान भाव रखते हैं। उनके प्रवचन में तो विश्व के तमाम देशों के लोग आते हैं, विभिन्न परम्पराओं के लोग सुनने आते हैं। यहाँ मैं एक उदाहरण देना चाहूँगा कि सर्वधर्म के विषय में परम पावन जी जो कहते हैं वह कितनी महत्वपूर्ण बन जाती है। जैसे कि मैं संकिसा, उत्तर प्रदेश से हूँ, संकिसा एक बौद्ध तीर्थ स्थान है। तिब्बत एवं अन्य बौद्ध देशों के लोग उसे भगवान बुद्ध का

पवित्र तीर्थ स्थल मानते हैं। यह एक ऐतिहासिक स्थान है।

सन 2015 में परम पावन दलाई लामा जी संकिसा में पधारे थे। हम लोगों ने वहाँ तीन दिवसीय कार्यक्रम का आयोजन किया था। प्रारंभ में हम लोगों का यही विचार था कि कार्यक्रम में सिर्फ बौद्ध लोगों को बुलाते हैं चाहे वे नव बौद्ध हों या परम्परागत बौद्ध। उनको बुला करके परम पावन जी के प्रवचनों को सुने जाएं। हम लोगों ने खूब मेहनत की और वैसा ही किया। कार्यक्रम में ७०-८० हजार लोग परम पावन जी के तीन दिवसीय प्रवचन सुनने आए थे। वहाँ पर एक ऐतिहासिक कार्यक्रम हुआ। इतने विशाल रूप में धर्म प्रवचन का पहला कार्यक्रम था। उस समय हम लोगों ने केवल और केवल बौद्धों पर ही ज्यादा जोर दिया। भारत में कहीं के भी बौद्ध हों उन पर ध्यान दिया बाकी धर्मों के लोगों पर ध्यान नहीं दिया।

कार्यक्रम हो जाने के बाद कई लोगों की ओर से हम लोगों के पास शिकायतें आई। हिंदु, मुस्लिम, सिख और कुछ ईसाई धर्मों के लोगों ने कहा कि आप लोगों ने हम लोगों को क्यों नही बुलाया? परम पापवन दलाई लामा जी यहाँ पर आये, वह विश्व के धरोवर हैं तो आप लोगों ने हमको नहीं बुलाया। यह केवल बौद्ध धर्म की बात हैं थी, हम सभी लोग उनका प्रवचन सुनना चाहते थे। वास्तव में हम आयोजकों को इस बात पर बहुत शर्मिंदा होना पड़ा। हम लोगों से यह बहुत बड़ी गलती हो गयी थी। हम लोग बौद्ध के नाते यह समझ पाये थे कि परम पावन जी तो बौद्ध भिक्षु हैं, केवल बौद्धों तक सीमित रहें लेकिन जब लोगों ने शिकायतें की तब जा करके हम लोग इनकी महत्वता को समझ पाये कि नहीं उन्हें तो विश्व की विभिन्न परम्परों के लोग चाह रहें हैं।

फिर दूसरी बार कार्यक्रम का आयोजन सन 2018 में किया। उस समय हमने सबको जिम्मेदारियाँ दीं, जिसमें हर पंथ के लोग आये। सब ने उसमें सहभागिता की तथा गत कार्यक्रम की भांति हजारों की संख्या में लोग सुनने आये। इस दौरान मैंने परम पावन जी से कहा कि इस कार्यक्रम में विभिन्न धर्म परम्परा के लोग भी आये हैं। परम पावन जी ने प्रसन्नता से कहा कि ऐसा अच्छा कार्य करने की हमें आवश्यकता है। विभिन्न धार्मिक परम्पराओं के बीच सौहार्द होना चाहिए। सबके साथ सद्भाव पूर्वक रहने की आवश्यकता है। मुझे परम पावन के इन शब्दों से बहुत बल मिला कि गुरू जी ने कहा है तो और अधिक हमें इस तरह के कार्य करने की जरूरत है।

विश्व के लोगों के साथ परम पावन जी की मित्रता, उनकी महिमा के बारे में शब्दों से वयां करना संभव नही है। वह हर पंथ के लोगों के पास जाते हैं, चाहे मंदिर हो, मस्ज़िद हो, गुरूद्वारा हो जैसा उनका भेष वैसे ही परम पावन भी धारण कर लेते हैं। उनके बारे में व्याख्या कर पाना आसान नहीं है,वाकई महान हैं।

परम पावन जी बार-बार कहते हैं कि आप जिस पंथ को मानते हो, अच्छी तरह से उसको मानो, जिसमें श्रद्धा है उसमें श्रद्धा रखो लेकिन जो दूसरे पंथ एवं धर्म हैं उनका सम्मान जरूर

करना चाहिए। उनकी यह बात विश्व के सभी लोगों के लिए एक प्रकार की अपील है,परम पावन जी जो कह रहें है वह बहुत बड़ी बात है। हमें सम्मान करने और मानने में फर्क करना आना चाहिए। किसी का सम्मान कर दिया तो वो सोचते है हम उस धर्म में चले गये हैं। मस्ज़िद में चले गये या गुरूद्वारा में चले गए और उसकी टोपी पहन ली तो लगता है कि आपका धर्म बदल दिया या उनके धर्म को मान लिया ऐसा बिलकुल नहीं है। यह दूसरों धर्म के प्रति सम्मान है। उनके अगर घर जातें हैं तो यह एक सम्मान के रूप में है। यह वास्तव में किसी अन्य परम्परा को सम्मान करने की प्रथा है।

परम पावन जी का विचार है कि जब हम एक दूसरे का सम्मान करेंगे तब हम उसके मित्र बनेंगे। उदाहरण के तौर जब हम किसी दोस्त के घर जाते हैं तथा वहाँ उसके पिता जी, माता जी के पैर हम भारतीय परम्परा के अनुसार छू लेते हैं तो ऐसा करना हमारी प्राचीन परम्परा के अनुसार उन परिजनों के प्रति सम्मान करना है। यह भारत की हजारों वर्ष पुरानी परंपरा है कि सभी का सम्मान करना। ऐसा करने से आपसी प्रेम, सौहार्द और संबंध बड़ेगा। इसलिए सर्वधर्म सम्मान होना चाहिए।

आपको ज्ञात होगा कि परम पावन दलाई लामा जी के मार्ग दर्शन में पहली बार नई दिल्ली में भारत में विद्यमान विविध अध्यात्मिक परम्पराओं का एक बड़ा सम्मेलन आयोजित हुआ था। इस सम्मलने में विभिन्न धर्म के आध्यत्मिक गुरूओं ने भाग लिया था। उसमें एक जैन आचार्य महाराज ने कहा था कि परम पावन दलाई लामा जी ने एक एतिहासिक कार्य किया है। यहाँ उन्होंने भारत की सभी परम्पराओं के अध्यात्मिक गुरूओं को एक साथ एक ही मंच पर बुलाया है। आम तौर पर हमारे धर्मों के गुरूओं को एक साथ लाना बहुत मुश्किल है। यह उसी तरह से है जैसे कि मैंडकों को तराजू में तौलना। क्योंकि मेढक एक साथ बैठ ही नहीं सकते हैं हमेशा उछल-कूद करते हैं उसी तरह से हम लोगों को भी परम पावन दलाई लामा जी ने एक साथ एक ही मंच पर जोड़ा है। इस तरह की परम पावन दलाई लामा जी की यह कला है और सर्वधर्म सद्भाव बनाने की तो यह बहुत ही महत्वपूर्ण पहल है। हमें अच्छी तरह से समझने का प्रयास करना चाहिए।

परम पावन जी कहते है कि किसी धर्म में खराबी नहीं होती है, किसी पंथ में खराबी नहीं होती है, जो अनुयायी होते है, धर्म को मानने वाले मनुष्य होते है उनमें कुछ लोग नकारात्मक सोच वाले होते हैं। इस तरह के लोग अगर होते हैं तो सारे कौम को जिम्मेदारी ठहराना बिलकुल गलत है। ऐसा व्यक्ति विशेष हो सकता है इससे पूरा संप्रदाय को खराब नहीं माना सकता है। सभी धर्मों का मुख्य सन्देश प्रेम, करुणा, मैत्री, सहनशीलता इत्यादि है। सभी धर्म सामान्य रूप से एक ही संदेश देते हैं। इसलिए धार्मिक सद्भाव का होना संभव है क्योंकि सभी धर्म प्यार का संदेश देते हैं। परम पावन दलाई लामा जी के प्रयासों से इसका मानवता के प्रति बहुत लाभ हुआ है। इसलिए लोग परम पावन दलाई लामा जी का प्रवचन, व्याख्यान तथा बातचीत सुनना चाहते

हैं। लोग परम पावन दलाई लामा जी का सौहार्द और प्रेम का संदेश सुनना चाहते हैं। अक्सर देखा होगा कि परम पावन जी कुंभ, गुरूद्वारा, मस्जिद में जाते हैं जिससे सभी धर्म के बीच सौहार्द बढ़े।

परम पावन जी चाहे धर्मशाला हों या बोधगया हों या अन्य किसी शहर में हों लोग उनके करूणा, मैत्री और सर्वधर्म सौहार्द पर प्रवचन सुनने के लिए आते रहते हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि परम पावन जी विभिन्न धर्म के बीच सद्भाव बढ़ाने के लिए कितने प्रयास कर रहे हैं। विशेषकर भारतियों के लिए एक धरोहर के रूप में रहे हैं जहाँ विभिन्न धर्म के लोग रहते हुए एक सौहार्द फैलाने का कार्य कर रहे हैं। परम पावन जी हमेशा यह कहते हैं कि भारत में वह क्षमता है जिससे सभी धर्म के लोग साथ-साथ रह सकते हैं और रह रहें हैं। हजारों वर्षों से यह परम्परा चली आ रहे है। भारत में किसी धर्म के बीच झगड़े नही हुए हैं, ज्यादा मारकाट नहीं हुई है, छोटे मोटे झगड़े होते रहते हैं यह तो अमूमन बात है एक परिवार में छोटी मोटी बातें हो जाती हैं। ऐसे छोटे छोटे झगड़े समुदाय में भी होते हैं। जो बाद में सुलझ जातें है। यह भारत में क्षमता हैं कि सारे परम्परा के लोग, पंथो के लोग, धर्म के लोग साथ रह करके, अभ्यास करके साथ रह सकते हैं। आज आप देख सकते हैं कि परम पावन जी से मिलने तमाम लोग आते हैं। ऐसा तो नहीं है कि वे बौद्ध लोग ही हों, तिब्बती हो या फिर भारतीय लोग ही हों। दुनिया भर के लोग बौद्धों से ज्याद अबौद्ध लोग उनसे मिलते हैं। उनसे राय लेते हैं।

कुछ वर्ष पहले परम पावन जी के आवास पर विश्व में हम शांति कैसे ला सकते हैं पर एक लघु संगोष्टी हुई थी। विश्व के कई देशों के युवक युवतियों ने इसमें भाग लिया था। उस समय अजमेर स्थित हज़रत ख्वाज़ा ग़रीब नवाज़ दरगाह, अजमेर शरीफ़, के प्रमुख धर्म गुरु भी परम पावन जी से राय लेने आए थे कि किस प्रकार से शिया और सुन्नी के मस्लें हैं उनका किस तरह से समाधान किया जा सकता है। अक्सर लोग इस्लाम धर्म को बदनाम करते हैं उसको किस प्रकार से बदला जा सकता है अर्थात अंतर्धार्मिक सौहार्द कैसे बन सकता आदि विषयों पर गंभीर चर्चा कर रहे थे। लोग कितनी ज्यादा उम्मीद लेकर आते हैं।

मैंने खुद अपने छोटे से समय में परम पावन जी के समक्ष देखा है कि लोग किस प्रकार से उनसे अनुरोध करते हैं कि हमें कुछ उचित रास्ता बताएं।

परम पावन दलाई लामा जी कहते हैं कि वह एक साधारण बौद्ध भिक्षु हैं। मैं खुद एक धार्मिक व्यक्ति हूँ, मेरे बहुत सारे अनुयायी हैं एक बौद्ध भिक्षु होने के नाते मेरी जिम्मेदारी है कि लोगों के बीच धार्मिक सौहार्द बने।

परम पावन दलाई लामा जी के तीसरी प्रतिबद्धता तिब्बती संस्कृति, कला, भाषा और पर्यावरण का संरक्षण करना है। यह समझने की बात है कि जो भी हमारी नालंदा परम्परा हैं उसका रखरखाव अच्छी तरह से रखा है। आधुनिक समय में नालंदा परम्परा के बारे में देखें तो आज

जिसको हम पढ़ सकते हैं, समझ सकते हैं, दर्शन की बाते सीख सकते हैं, यह सब वास्तव में तिब्बती भाषा और सहित्य से ही संभव हो सका है। तिब्बती बौद्ध परंपरा में बौद्ध ग्रंथ, सूत्र और शात्रों की बात करें तो आज 300 से अधिक पोथियाँ, उसकी बहुत सारी टीकाएँ आदि केंद्रीय तिब्बती ग्रंथालय में हजारों और लाखों संख्या में रखे हुए हैं। ज्यादातर तिब्बती भाषा में हैं। 8वीं शताब्दी के दौरान प्रकांड विद्वान आचार्य शांतरक्षित ने जिस तरह से अनुवाद का कार्य वहाँ के राजा के अनुरोध एवं सहयोग से किया। कितने तिब्बती लोग यहाँ पढ़ने और सीखने के उद्देश से आये होंगे। कितनों ने अपने जीवन का बलिदान दिया है। उनके बलिदान को आप देखें, आज भी रखरखाब का क्रम बना हुआ है। परम पावन जी यही कह रहे हैं कि हमारी भाषा, संस्कृति जो हजारों वर्ष पुरानी है उसका संरक्षण करना चाहिए। जो विश्व के लोगों के लिए लाभदायक हो सके।

आज हम देख सकते हैं कि इससे कितना लाभ हो रहा है। मैक्लोडगंज में अगर आप देखें तो पाएंगे कि तिब्बती दवा लेने वालों में 99 प्रतिशत भारतीय होते हैं जो दूर दराज के राज्यों से यहाँ दवा लेने आते हैं। यह भी एक विद्या है, हमारी प्राचीन विद्या है जिसको संरक्षित करने की जरूरत है। चाहे कहीं पर भी हो, चाहे अंदर हो या बाहर। इस प्रकार की हमारी विद्या, भाषा एवं संस्कृति का हमें संरक्षण करना है क्योंकि इससे हजारों वर्षों तक मानव हित होता रहेगा। मैं खुद आश्चर्यचकित हो जाता हूँ कि भारत में इतनी बड़ी व्यवस्था, चिकित्सा, आर्युवेद, यूनानी है फिर भी यहाँ पर लोगों की भीड़ रहती है। इतनी कारगर और लाभदायक है। ऐसा नहीं है कि मैं इसका प्रचार कर रहा हूँ। इससे जुड़ी हुई बातें हैं जिसका हमें रखरखाब करना बहुत जरूरी है।

परम पावन जी का विचार है कि एक तिब्बती होने के नाते हमारी नैतिक जिम्मेदारी बनती है कि इनका संरक्षण करूँ। पर्यावरण के संबंध में परम पावन जी जी हमेशा कहते हैं कि यह विश्व के लिए एक चुनौती है। हम भारतीय जो पानी पीते हैं वह कहाँ से पी रहे हैं? हमारी नदी गंगा, ब्रह्मपुत्र, सतलुज, सिंधु आदि सैकड़ो नदियाँ जिन पर हम निर्भर हैं,तिब्बत देश से निकलती हैं। एशिया के करोड़ो लोगों का जीवन इन नदियों पर आश्रित है। हमें पर्यावरण के बार में विचार करने की जरूरत हैं। यह परम पावन जी अकेला का प्रयास है, उनका यह प्रयास कितने लोगों को लाभ दे रहा है। हम सबको लाभ होता है तो इसके लिए हमें सोचना चाहिए।

परम पावन दलाई लामा जी का चौथी प्रतिबद्धता भारत प्राचीन विद्या को पुनर्जीवित करना है। यह ज्यादातर भारतीय लोगों के लिए महत्वपूर्ण बन जाती है। प्राचीन भारतीय विद्या को लोग अलग-अलग तरीके से समझ लेते हैं। कभी-कभी कोई जिस पंथ का है उसे उस हिसाब से समझ लेता है तथा उस पंथ को फ़ैलाने की बात कहेगा। कोई हिंदू पंथ का होगा तो अपने हिसाब से प्रचारित करने को कहेगा। मगर ऐसी बात नही है। हमें परम पावन जी द्वारा कही गई

प्राचीन विद्या के बारे में अच्छी तरह से समझने की कोशिश करनी चाहिए कि उनके कहने का क्या अर्थ है। अगर बौद्ध धर्म की बात होगी, हिंदू धर्म की बात होगी, ईसाई धर्म की बात होगी, इस्लाम धर्म की बात होगी तो सभी लोग एक साथ तो नहीं आ सकते हैं। प्राचीन विद्या का अर्थ अहिंसा, शमथ, विपस्सना, मनोविज्ञान, खास कर बौद्ध मनोविज्ञान से है जिस पर वह जोर देते हैं जिसमें बहुत सारी चीजें सम्मिलित हो जाती हैं।

भारत में अहिंसा का सिद्धांत विद्यामन है। समृद्ध विपस्सना है तथा यह तो भगवान बुद्ध से पहले भी थी। परम पावन जी कहते हैं कि यह तो भारत की एक प्रकार से सभ्यता रही है। यह आप लोगों की सभ्यता है। यह कहीं बाहर से नहीं आई है। तिब्बती लोगों द्वारा भारत भूमि को आर्य भूमि कहा गया। जो आर्य, अर्हत, बुद्ध, संत एवं योगी हुए उन्होंने इस विश्व को क्या दिया? इस पर हमें सोचने और समझने की आवश्यकता है।

उन्होंने समृद्ध विपस्सना का अभ्यास किया, परीक्षण किया, सिद्ध किया तभी तो लोग सिद्ध पुरुष कहे जाते हैं। अगर हम बौद्ध धर्म की थोड़ी सी बात करें तो मनोविज्ञान बहुत ही प्रमुख तौर पर मानी जाती है जो केवल और केवल बौद्ध धर्म की बात हो ऐसा नहीं है। हमारे अंदर जो भी विकार आते हैं वे हमारे मन से आते हैं। जब भी हम परेशान होते हैं, दुखी होते हैं, मन से होते हैं। मन से जब परेशान हो रहे हों, मन को परेशान करने वाली कई वजह होती हैं।

एक प्रकार से विपस्सना के माध्यम से समस्या को देखें। इनके माध्यम से ही अपने मन को संतुलित किया जा सकता है। यह कोई धर्म की बात नहीं है या मैं धर्म की चर्चा कर रहा हूँ ऐसी भी बात नहीं है। परम्परा के बारे में जो उनकी चौथी प्रतिबद्धता है विशेषकर नालंदा की प्राचीन विद्या से जुड़ी हुई है जहाँ सूत्रों और शास्त्रों का अध्ययन होता था। अध्ययन तर्क और शास्त्रर्थ के माध्यम से हुआ करता था। ऐसा नही कि विद्वान लोग एक दूसरे की बात आसानी से मान लिया करते थे। कई आचार्य वहाँ से हुये हैं जैसे नागार्जुन, शांतिदेव, शांतिरक्षित, आर्यदेव, चन्द्रकीर्ति,धर्मकीर्ति इत्यादि। प्रमुख रूप से 17 विद्वानों का जिक्र किया जाता है। उनकी परम्परा को देखें, उन्होंने इस परम्परा को आगे बढ़ाया है। नालंदा परम्परा को आगे ले करके बढ़े है। उन्होंने इसको समझा और जाना है। हम देख सकते हैं कि धर्म के जो विषय, चित्त के विषय हैं उनको गंभीरता से एक-एक करके परीक्षण करके, जो परेशानी हमें आ रही है, हमारे मन में जो विकार आ रहे हैं, वह किस प्रकार से और कैसे हैं? नालंदा के विद्वानों ने अच्छी तरह से उसका परीक्षण किया, उसको अच्छी तरह से समझे। शून्यता के दर्शन का परम पावन दलाई लामा जी का पिछले चालीस वर्षों का अनुभव रहा है। चार दशकों से वह वैज्ञानिकों के साथ वार्ता करते आ रहे हैं। इसमें खासकर वार्ता किसके बारे में होती है? माइंड एंड लाइफ, चित्त, मन और जीवन क्या है? उक्त विषयों पर परिचर्चा होती है। ये सब के लिए है। कोई बौद्ध है उनके लिए

हो या किसी धर्म विशेष के लिए हो ऐसा नहीं है। अक्सर परम पावन जी कहते हैं कि बौद्ध विद्वान वैज्ञानिकों के साथ ज्यादा विचार विमर्श नहीं करते थे। लेकिन जब से वह उनके साथ जुड़े तब से देख सकते हैं कि आज कितने वैज्ञानिक एक साथ इस पर चिंतन, मनन एवं चर्चा कर रहे हैं।

उक्त बातों से नालंदा परम्परा की महत्ता समझ आती है। नालंदा परम्परा की महत्वता कितनी ज्यादा है। प्राचीन विद्या वहीं से आयी है। इसको पढ़ाया जाना चाहिए तथा इसको विकसित करना चाहिए। परम पावन दलाई लामा जी बार-बार जिक्र करते हैं कि यह हमारी धरोहर है, आपकी धरोहर है, आप भारतीयों की धरोहर है। जब उनसे कोई भेंट करने आता है तो मैंने देखा है कि एक-एक व्यक्ति को कभी-कभी 10 से 15 मिनट तक देते हैं। किसलिए? यह समझाने के लिये कि प्राचीन नालंदा की विद्या, अहिंसा की विद्या, करूणा की विद्या, मैत्री, सहनशीलता, विपस्सना एवं मनोविज्ञान की आपकी जो परम्परा है उसको और विकसित करना चाहिए।

आपकी शिक्षा प्रणाली में भी इस परम्परा के बारे में परिचय कराना चाहिए। जब शिक्षा प्रणाली में ये आ जायेंगे तो निश्चित रूप से लोगों का हित होगा तथा बच्चे छोटी उम्र से ही सीखेंगे। जब बच्चे बड़े हो जाएगें तो उनमें अहिंसा का विचार स्वतः समाहित हो जायेगा।

अंत में,आर्य अवलोकितेश्वर परम पावन जी के श्री चरणों में अपना शीश रखते हुए उनके अच्छे स्वास्थ्य एवं दीर्घायु की कामना करता हूँ। वह निरंतर सभी जीवधारियों का कल्याण एवं मार्गदर्शन करते रहें, ऐसी मेरी अभिलाषा है।

भवतु सब्ब मंगलं।।

आध्यात्मिक परम्पराओं का सम्मेलन
मानवीय मूल्यों और अन्तर्धार्मिक सद्भाव संवर्द्धन हेतु
ING OF DIVERSE S UAL TRADITIONS IN INDI
Promoting Hum r-religio
A MEETING OF DIVERSE SPIRITUAL TRADITIONS IN INDIA

कर्मा मोनलम

पूर्व वरिष्ठ अधिकारी, केंद्रीय तिब्बती प्रशासन एवं तिब्बती और हिंदी के अनुवादक

नमस्कार। आज मुझे केंद्रीय तिब्बती प्रशासन के सूचना एवं अंतर्राष्ट्रीय संबंध विभाग द्वारा परम पावन दलाई लामा जी के जीवन की चार प्रमुख प्रतिबद्धताओं पर आयोजित व्याख्यान श्रृंखला में कुछ बात रखने के लिए कहा गया है। मुझे परम पावन दलाई लामा जी की प्रथम प्रतिबद्धता मानवीय मूल्यों के बारे में बोलने के लिए कहा है, जिसमें सभी महत्वपूर्ण विषय आ जाते हैं। यह विषय बहुत व्यापक है और इसके बारे में बताने के लिए बहुत कुछ है, लेकिन समय सीमित है। इसलिए मैं संक्षिप्त में बताना चाहूँगा।

परम पावन दलाई लामा जी के जीवन की चार प्रतिबद्धताएं हैं। उसके पृष्ठभूमि पर थोड़ा बताना चाहूँगा। परम पावन जी को बौद्ध जगत में बौधिसत्व के अवतार के रूप में मानते हैं। उनका जगत में आने का प्रयोजन ही दूसरों की भलाई तथा कल्याण करने के उद्देश्य से है। इसलिए स्वाभाविक है कि परम पावन जी की चार प्रतिबद्धताएं मानवता की सेवा के लिए समर्पित हैं।

सन 1959 में तिब्बत पर चीनी कब्जे के बाद परम पावन दलाई लामा जी ने भारत में शरण लिया। भारत में आने के बाद परम पावन जी ने बाहरी दुनिया में आगमन शुरू किया तब से उन्होंने मनुष्यों द्वारा की गई ऐसी अनेक खामियों को देखा और महसूस किया है। जैसे कि हिटलर के समय यहूदियों को जलाने के लिए गैस चैम्बर और स्टालिन के विषय में आप लोग सब जानते हैं।

माओ के जीवन काल में सांस्कृतिक क्रांति और पोल पॉट जैसे तानाशाह इस दुनिया के किसी हिस्से में हुए थे, उनके अवशेष को देखा था और यहाँ तक कि द्वितीय विश्व युद्ध के समय बंदूक तक सीमित ना होकर, जापान के हिरोशिमा और नागासाकी में दो परमाणु बम्ब गिराए गये थे। हालांकि 40 से 50 साल बीतने के बाद भी इस परमाणु बम्ब का असर हिरोशिमा और नागासाकी में उन्होंने अभी भी देखा है। उस समय के ऐटम बम्ब हालांकि परमाणु बम्ब थे लेकिन आज के तुलना में उसका शाक्ति बहुत सीमित हैं।

आज परमाणु भंडार का जमावड़ा हर कोई देश करना चाहते है। रूस, अमरिका, फ्रांस, चीन यहाँ तक की विकासशील देश जैसे उत्तर कोरिया और भारत भी चाहते हैं। इसके आगे जा करके जैविक हाथियार बनने लगे है और कुछ बने हुए हैं। जिससे कोविड-19 जैसे बीमारी फैली है। इसलिए परम पावन ने यह महसूस किया है कि मुझे कुछ ठोस सुझाव देना चाहिए। दुनिया के बहुत से नेता चाहे वे सरकारी, गैर सरकारी, वैज्ञानिक उन सबसे मुलाकात होती रही हैं।

इसलिए परम पावन जी की यह सोच है कि अब व्यक्ति के स्तर पर जाना चाहिए, विशेष रूप से युवा वर्ग और बच्चों के स्तर पर जाना चाहिए। क्योंकि व्यक्ति में अगर बदलाव आता है तो वह कहीं पर भी हो, कोई भी काम करें, वह हमेशा उनके साथ रहेंगे। इसलिए परम पावन जी मानव मूल्यों जैसे प्रेम, करुणा, सार्वभौमिक जिम्मेदारी, अहिंसा, दया, धैर्य, सहिष्णुता, क्षमाशीलता आदि के विषयों पर जोर देने के लिए कहतें है।

अपने विचार में उन्होंने विशेषकर बच्चों और युवा वर्ग से इसका कुछ लाभ होने के लिए उसमें वह संस्कार डालने हेतु प्रयास कर रहें है। इसलिए मैं मानता हूँ कि आध्यात्मिक क्रांति ऐसा उन्होंने सुझाव दिया है कि मुनष्य को देश के हित, समाज के हित विशेष कोई समाज के वर्ग के हित को छोड़ करके सर्वभौमिक जिम्मेदारी के नाते उनकी सोच संकीर्ण नहीं होनी चाहिए, व्यापक होनी चाहिए। मुझे लगता है कि आध्यात्मिक क्रांति की ओर ले जाने की बात कर रहे हैं परम पावन जी, जिसमें सभी मूल्यों होंगे जैसे कि प्रेम, क्षमाशीलता, सदाचार, दया, करूणा अगर यह सब एक इंसान में समाहित हो जाए तो हमेशा उनके साथ जीवीत रहेंगे।

इसलिए हमारी सोच में बदलाव के लिए एक ऐसी आध्यात्मिक क्रांति की आवश्यकता है। अगर हम केवल मनुष्य के स्तर में ना देख करके धर्म के विषय में सोचे तो सबको शामिल करना असंभव होगा क्योंकि इस दुनिया में कुछ प्रतिशत किसी धर्म को मानते है, धर्म को मानने वाले भी अलग अलग गुटों में बंटे हुए हैं इसलिए एक सिद्धांत के तौर पर विभिन्न धर्मों के बीच भी विचारधाराओं में भिन्नता हैं। लेकिन जो मौलिक बातें जैसे प्रेम, करूणा, सदाचार, सहनशीलता इन सब के लिए लगभग वही बात बता रहें है कि एक अच्छा इंसान बनने के लिए हर धर्म का लक्ष्य एक इंसान को इंसानियत सिखाना है। लेकिन वह भी बंटा हुआ है कोई ईसाई है, कोई मुस्लिम है, कोई हिंदू है, कोई यहूदी है, सिख है, जैन है, बौद्ध है, तो इसलिए यह छोटे छोटे गुट में बंटा हुआ है तो एक मत नहीं हो सकता है। दार्शनिक रूप से अलग अलग मान्यताएं हों लेकिन बुनियादी व्यवहार में समानताएं हैं।

परम पावन जी आध्यात्मिक गुरु हैं। उन्होंने एक मार्ग दिखाया है जिसे पंथनिरपेक्ष नैतिकता कहते हैं। इसके लिए एक तो आप जिस धर्म में भी विश्वास रखते हैं, जिससे भी श्रद्धा रखते हैं उसकी मौलिक बातें को अपना करके धर्म के नाम पर ना होकर पंथनिरपेक्ष होते हुए भी हो सकता है क्योंकि सामाजिक, भावनात्मक, नैतिक शिक्षण की दिशा में कुछ ठोस कदम उठाया है।

इसलिए मैं समझता हूं कि आप लोग SEE Learning, नई सदी की नैतिकशस्त्र (Ethics for New Millenium) जैसी अनेक किताबों को परम पावन दलाई लामा जी ने लिखी हैं।

मैं यही कहूंगा कि कोई एक धर्म हर एक इंसान के लिए सर्वश्रेष्ठ है ऐसा नहीं कह सकता। जैसा कि तिब्बती में एक कहावत है, सौ रोग के लिए एक ही इलाज़, एक ही दवा है तो ऐसा सम्भव नहीं है। हिंदी में "त्रिफलाह", इसका कई रोगों में फायदा हो सकता है लेकिन यह हर

रोग का इलाज़ नही हैं। इसलिए धर्म के विषय में, मैं यह कह सकता हूँ कि परम पावन दलाई लामा जी ने धर्म पर जोर नहीं दिया है क्योंकि धर्म को मानने वाले, धर्म को न मानने वाले, धर्म की आलोचना करने वाले ऐसे कई मनुष्य हैं। इसलिए यह संभव नहीं है।

लेकिन मूल्य इनमें निहित है, हर धर्म में उसके सारांश को निकालते हुए अपनी यह योजना बनाई है, या अपना सुझाव दिया है कि मानवता के लिए मेरा ऐसा ऐसा विचार है अगर भविष्य में मानव समाज को लम्बे समय तक सृष्ठी चलाना है, इसलिए पृथ्वी बची रहें क्योंकि आज परमाणु हथियारों का इतना जमावड़ा है कि पृथ्वी को सौ बार नष्ट करने की भी क्षमता शायद हो सकती है।

इसलिए मैं परम पावन जी के इन मानव मूल्यों का क्या अर्थ है बस यहीं कहना चाहता हूँ कि हर इंसान एक दूसरे के कल्याण के लिए, एक दसरे की मदद करने के लिए, एक दूसरे की अच्छाई के लिए सोचे, ऐसे कोई समाज की कल्पना है कि यह दुनिया के हर एक इंसान स्वार्थी ना बने और यह हथियारों के विस्तार को रोग दें और इसमें एक यह बात है कि परम पावन ने एक किताब में उदाहरण दिया है कि तिब्बत पर जब चीन का आक्रमण हुआ तो उसमें बहुत से लोगों को जेल में ठूस दिया, उनमे से दलाई लामा जी के नामग्याल मठ का लोपोन यानी आचार्य थे, उन्हें भी पकड़ा गया और जेल में डाला गया।

15 व 20 साल बाद वह जेल से छूटे और प्रयास करके यहाँ धर्मशाला तक पहुँच गये। परम पावन दलाई लामा जी ने उनसे पूछा “जेल में रहते हुए सबसे बड़ा डर किस बात का रहा है”? उन्होंने उत्तर दिया कि मुझे इस बात का डर था कि कभी मुझे गुस्सा आ जाए और मैं जेल रक्षक के प्रति मेरी करुणा और कल्याण का विचार है वह नष्ट ना हो जाए, मेरा यही डर था कि कहीं उनके व्यवहार की वजह से मेरे अंदर यह विचार नष्ट हो जाए। मतलब यह है कि कई साल जेल में रहने के बाद भी उनके मन में कोई मनमुटाव नहीं था, कोई ऐसी घृणा नहीं थी कि जेलरों ने मारपीट की है या जेल में सुविधा नहीं है, ऐसी कोई भी शिकायत नहीं है।

लेकिन उन्होंने यह ठान लिया था कि एक भिक्षु होते हुए बौद्ध धर्म के सिद्धांत का अध्ययन किया है। आपको कष्ट पहुंचाने वाले व्यक्ति भी एक तरह से अनजान हैं और एक तरह से समय की कसौटी पर हो सकता है कि वह विवश हो किसी कारण से ऊपर वाले के आदेश से या प्रशासन के तरीके से, इसलिए किसी के प्रति भेदभाव या घृणा वाले विचार आना अच्छा नहीं है यह उन्होंने निष्कर्ष निकाला।

यह विचार कई समय तक अपने मन को नाकारात्मक सोच से सुरक्षित रखता है। परम पावन जी यह भी कहते है कि मैं सबसे पहले एक इंसान हूँ, इस धरती पर एक मनुष्य हूँ इसके बाद एक तिब्बती हूँ और उसके बाद आखिर में दलाई लामा। इसका मतलब यह है कि सभी मनुष्य एक समान हैं। सब सुख-शांति चाहते हैं। सबका हित होना चाहिए।

इसलिए परम पावन जी ने इस पृष्ठभूमि में यह विचार प्रकट किया है। मुझे आशा है कि आप लोग इन विचारों के बारे में अगर जानते हैं तो इस पर और विचार करें ओर अगर नहीं जानते हैं तो इनके बारे में जानकारी बहुत सी किताबों या आज कल ऑनलाइन पर भी उपलब्ध है। इसलिए मेरी यह आपसे अपील है कि इसके ऊपर कम से कम एक सोच रखे। हमारे भविष्य, हमारे बाल-बच्चे कैसे सुरक्षित रह सकते हैं, आधुनिक दुनिया में बहुत आवश्यक हैं। अगर इस धरती पर हर एक मनुष्य वह एक दूसरे के प्रति कल्याण हेतु विचार करते हैं तो यह स्थिति बदल सकती है।

भविष्य में हमारे अच्छा समय व्यतीत होगा ऐसी आशा कर सकते हैं, नहीं तो फिर तबाह होने के लिए तैयार होना होगा। आप लोग परम पावन जी के विचारों को जानिए, एक बौद्ध होने के नाते नहीं एक इंसान होने के नाते जानें। फिर अपने बुद्धि के तौर पर उस कसौटी के तराजू पर तोलने कि हमारा भविष्य कैसे सुरक्षित रह सकता है। धन्यवाद।

लोछेन रिन्पोछे

तिब्बत के महान अनुवादक रिन्छेन ज़ागपो के अवतार एवं बौद्ध दर्शन और तन्त्रायन बौद्ध धर्म के विद्वान

सर्वप्रथम मैं यह विडियो सुनने और देखने वाले सभी व्यक्तियों को हृदय से नमन करता हूँ। मुझे तिब्बती प्रशासन धर्मशाला की ओर से आदेश मिला है कि मैं परम पावन दलाई लामा जी की चार प्रतिबद्धताओं में से पहली प्रतिज्ञा के विषय पर हिंदी भाषा में बोलूं।

इस विषय पर बोलना बहुत ही कठिन होगा क्योंकि परम पावन दलाई लामा जी की जो भी व्याख्या है उनकी गहराई और सीमा का अनुमान लगाना किसी भी व्यक्ति के लिए कठिन ही नहीं बल्कि असंभव है। किन्तु मैं खुद को बहुत सौभाग्यशाली मानता हूँ क्योंकि परम पावन दलाई लामा जी की वाणी के प्रति चिंतन करना तथा कुछ कहने का अवसर प्राप्त होना साधारण बात नहीं है। इसके अतिरिक्त मुझे यह सौभाग्य भी मिला है कि छोटी आयु में जब मैं धर्मशाला में अध्ययन कर रहा था तब से परम पावन दलाई लामा जी को सुनने का अधिक अवसर मुझे प्राप्त हुआ है। मैं तब से लेकर आज तक उनसे यही सुनते आया हूँ कि हम सबको अच्छी इंसान बनना चाहिए और हमें अच्छे भावनाओं के साथ जीना चाहिए ताकि हम सुखी रह पाएं।

मैं समझता हूँ कि परम पावन दलाई लामा जी की चारों प्रतिबद्धताएं अहिंसा और एक अच्छा इंसान बनने से संबंधित हैं, जो कि सारे सुखों का आधार है।

इस 21वीं शताब्दी में परम पावन दलाई लामा जी की पहली प्रतिज्ञा यह है कि मानवता के महत्व को बढ़ावा देना। यह अधिक आवश्यक हो गई है। 20वीं शताब्दी में विश्व में बहुत जंग हुई और लाखों लोग मारे गए, खतरनाक बमों का उपयोग भी हुआ पर नतीजा क्या मिला, निकला?। वह हम सब जानते हैं। युद्ध में किसी को भी जीत नहीं मिलती और युद्ध किसी कठिनाई का हल भी नहीं होता है। यह भी सबको पता चल चुका है।

परम पावन दलाई लामा जी ने यह कहा है कि 21वीं शताब्दी को शांति का शताब्दी घोषित कर देना चाहिए। इस संसार में बहुत से जीव जंतु है परन्तु मानव के बराबर कोई जीव नहीं है।

अगर मनुष्य चाहें तो सभी सुखों को प्राप्त कर सकता है किन्तु हम इस दिशा की ओर जाने से बचते रहे हैं। परम पावन जी ने बार बार यह कहा है कि जितने मनुष्य इस दुनिया में जीवित हैं चाहे या ना चाहे हम सभी को इस जगत में ही रहना है और साथ ही रहना है। हम सब सुखी रहना चाहते हैं और दुखी नहीं होना चाहते हैं। अगर ऐसा ही है तो हम आपस में क्यों लड़े?। उन्होंने यह भी कहा है कि जब हम इस दुनिया में जन्म लेते हैं उस समय हमारे भीतर कोई भेदभाव नहीं होता है। हमें कोई रंग का अंतर नही दिखता ना ही धर्म, जात पात या धनवान और निर्धन में कोई अंतर दिखता है। यही हमारा वास्तविक स्वभाव है। धीरे धीरे हम इस पवित्र

स्वभाव को संकुचित कर देते हैं और अंजाने में हम अपने जीवन में दुखों की स्थापना कर देते हैं। परपमावन जी ने विज्ञान का भी अध्ययन किया और बचपन से ही उनको विज्ञान के प्रति गहरी रुचि रही है।

उन्होंने दुनिया के कई जाने माने वैज्ञानिकों के साथ महत्वपूर्ण बैठक और चर्चा भी की है। आधुनिक विज्ञान की खोज में भी यही पाया है कि मनुष्य का वास्तविक स्वभाव शांति व प्रेम है। और यह भी पाया गया है कि मनुष्य को शांत रहने में कई लाभ होते हैं। और अशांत रहने पर जीवन के बहुत से सुखों को खो सकता है। चाहे स्वास्थ्य के क्षेत्र हो या अपने परिवार के रिश्तों के क्षेत्रो में हो, व्यापार का क्षेत्र हो, इतना ही नहीं आप अपने मन को शांत नही रख पाए तो विश्व में अशांति की वृद्धि कर सकते हैं। इसलिए परमपावन जी ने भरपूर प्रयास किया है और अभी भी कर रहें है ताकि सभी धार्मिक सम्प्रदाओं को एकजुट करके विश्व में भाईचारा को बढ़ावा देने का कार्य करें।

सर्वप्रथम हमें यह जानना आवश्यक है कि अगर सभी मनुष्य सुखी रहे तो हम भी सुखी रह पाएंगे। केवल हम सुख के बारे में सोचेंगे तो कभी भी पूरी तरह से सुख को प्राप्त नहीं कर पाएंगे। विज्ञान ने भी यही स्वीकार किया है कि हम एक सामाजिक प्राणी है इसलिए एक दूसरे के ऊपर 100 प्रतिशत निर्भर है। इसलिए जब सब सुखी हो तभी हम भी सुख को प्राप्त कर पाएंगे। हमें एक दूसरे का आदर करना सीखना चाहिए। तभी हम शांति को बढ़ावा दे सकेंगे।

परम पावन जी हर समय हमें यह याद दिलाते हैं कि हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि सबसे पहले हम सब एक मनुष्य हैं। इससे कम भी नहीं और अधिक भी नहीं है। हमारी आस्था अलग अलग हो सकती है, धर्म भी अलग अलग हो सकता है, रंग रूप भी अलग हो सकता है परन्तु यह सब अमुख्य प्रश्न है। इसलिए हम सभी को यह सीख लेना चाहिए कि हमें एक दूसरे के रंग, रूप, विचारों, धनवान, निर्धन और अलग अलग आस्था को परे रखकर सभी को सम्मान देना चाहिए। विश्व में आस्थाएं और रंग रूप सब एक होना असंभव है। अनहोनी को होनी कोई नहीं बना सकता है। पहाड़ को समुंदर कोई नही बना सकता। इस असंभव कार्य को संभव बनाने का प्रयास क्यों करें। हम अपने कीमती समय को व्यर्थ क्यों करें।

आस्था और रंग रूप अलग होने के बावजूद हम शांति से एक साथ रह सकते हैं। इसकी मिसाल भारत है। भारत में सदियों से अलग अलग परिपेक्ष में पृष्ठभूमि के लोग शांति से रह रहे हैं। बौद्ध दर्शन में यह भी कहा गया है कि अधिकतर हमारे समाज में जितनी परेशानियाँ हैं उन सबका मूल कारण हमारी सोच ही है। इसलिए अगर हम सोच को परिवर्तित कर पाएं तो ही विश्व की स्थिति बदलने की उम्मीद रख सकते है। वरना हमारी स्थिति अच्छी होने की उम्मीद बहुत कम दिखाई देती है।

परम पावन दलाई लामा जी ने इस का भी बार बार जिक्र किया है कि हमारे पास दो प्रकार की चाहत है। एक शारीरिक सुख और दूसरी मानसिक सुख। शारीरिक सुख के लिए हमने बहुत कुछ प्राप्त कर लिया है। परन्तु मानसिक सुख प्राप्त करने के लिए अभी भी हम बहुत पीछे रह गये हैं। उसके दो कारण हो सकते हैं, पहला इस क्षेत्र में अज्ञान होना और दूसरा मानसिक सुख की प्राप्ति के उपाय की उपलब्धता की कमी होना। विश्व में विज्ञान की प्रगति बहुत आगे है परन्तु चित्त के जानकारी की उपलब्धता को आगे नहीं कर पाएं।

इसके कारण अभी तक मानसिक सुख को प्राप्त करने के उपाय बहुत कम हैं। चित्त और मन के बारे में विस्तार से शिक्षा पूर्व देशों में ही उपलब्ध है। खास करके भारत के संस्कृति के अंतर्गत, वर्तमान स्थिति के अनुसार सोचा जाएं तो यह शिक्षा पाने के लिए बौद्ध दृष्टि से अधिक विस्तृत कही भी नहीं है। इसलिए परमपावन जी ने कहा है कि यह शिक्षा संसार के लिए एक वरदान साबित हो सकता है। और इसका अध्ययन शैक्षणिक क्षेत्र में करना चाहिए। यह ज्ञान लेने वा इसके लाभ पाने के लिए किसी को बौद्ध बनने की आवश्यकता नहीं है। यह एक बौद्धिक जानकारी है इससे हमें मन की शांति प्राप्त करने का उपाय और ज्ञान मिलेगा।

इसलिए परम पावन जी का यह भी मानना है कि हमारे लिए प्राचीन काल के नालंदा विश्वविद्यालय के महान पंडितों की पुस्तकों का अध्ययन करना बहुत आवश्यक है। बौद्ध दर्शन में यह कहा है कि अधिकतर हमारे समाज में जितने भी परेशानियाँ हैं उन सबका कारण हमारी सोच पर निर्भर करता है। इसलिए सोच को परिवर्तित कर पाएं तो ही विश्व की स्थिति बदलने की उम्मीद रख सकते हैं अन्यथा हमारी स्थिति अच्छी होने की उम्मीद बहुत कम दिखाई देती है। इसलिए अगर हम विश्व में अच्छे भविष्य की कल्पना करते हैं तो हमें हमारे स्वार्थी मानसिकता को अवश्य बदलना होगा। और इस दिशा में जाने के लिए शिक्षा के संस्थानों में शिल्प शिक्षा को प्रथम स्थान पर रखना चाहिए।

मुझे परम पावन जी की इन शिक्षाओं से यह अनुभव हुआ है कि विश्व में वर्तमान परिस्थितियों के अनुसार ज्यादातर लोग शर्म धर्म सब भूल गये हैं और यही अशांति का कारण है। प्राचीन काल में लोग झूठ बोलने से शर्माते थे और वर्तमान में सच्च बोलने से शर्माते हैं। इस प्रकार चोरी करना, हिंसा करना, सभी स्थितियों की यही दशा है। यही हमारे सारे दुखों का मूल है। परन्तु आज कल के लोग इसे नहीं पहचानते हैं और ना चाहते हुए भी दुख की ओर छलांग लगा देते हैं। विश्व में कोई नहीं कहता है कि झूठ बोलना अच्छा है और चोरी करना अच्छा कार्य है। किन्तु सब उल्टा ही करते हैं। इस क्षेत्र में परिवर्तन लाने का एक ही उपाय है और वह है शील का पालन करना। शील का पालन करने से अशांति की समाप्ति हो जाएंगी तथा चारों ओर शांति स्थापित होगी। परमपावन जी ने अपना पूरा जीवन जगत की शांति और इंसानियत के प्रति समर्पित कर दिया है।

विश्व में इस बात को मान्यता देते हुए उन्हें नोबेल शांति पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। आज इस अवसर का लाभ उठाते हुए इस माध्यम से मैं स्वयं एक भारत का नागरिक होने और हिमालयी क्षेत्र में एक छोटा सा नामी व्यक्ति होने के नाते अपनी भारत सरकार से यह अनुरोध करना चाहता हूँ कि वह परम पावन दलाई लामा जी को भारत के सर्वोच्च पुरस्कार भारत रत्न भेंट करके उन्हें सम्मानित करें। यह केवल मेरा ही सुझाव नहीं है बल्कि भारत के सारे हिमालयी क्षेत्र में इस अभियाचना की आवाज बुलंदी से गूंजती रही है।

अंत में, मैं प्रार्थना करता हूँ कि परम पावन जी की दीर्घायु हो और इस प्रकार से विश्व में सभी प्राणियों का मार्गदर्शन करते रहें। सर्वमंगलम।

छोगोन रिन्पोछे

ड्रुक्पा काग्यू के बौद्ध शिक्षक एवं परमपावन दलाई लामा के पूर्व हिंदी अनुवादक

སྙིང་རྗེ་ཆེན་པོའི་སྟོབས་ཀྱི་འཚེ་མེད་ལམ།
རྒྱ་ཆེར་སྤེལ་ལས་ཞི་བདེའི་གཟེངས་རྟགས་ཕུལ།
འཛམ་གླིང་ཀུན་གྱི་བཀུར་ཞིང་དུས་འཁོར་དངོས།
བསྟན་འཛིན་རྒྱ་མཚོའི་ནོར་བུར་གསོལ་བ་འདེབས།

महाकरुणा के बल से बना अहिंसा का मार्ग
विस्तार हुआ फिर शांति पुरस्कार से सम्मान
समस्त जगत का हो आप साक्षात कालचक्र
तेनजिन ग्याछो नाम के रत्न को मेरा सुनमन

परम पावन दलाई लामा जी के चरणों में यह वर्ष "धन्यवाद वर्ष" के रूप में मनाने का तिब्बत सरकार के माननीय सिक्योंग डा0 लोबसंग संगझे जी के मंत्रिमंडल द्वारा प्रस्तावित किए संदर्भ से सूचना एवं अंतरराष्ट्रीय संबंध विभाग से मुझे व्याख्यान करने का ज्ञापन हुआ है पर ज्ञान सीमित विषय असीमित होने के कारण कठिन सा दिखता है फिर भी उनके जीवन और दर्शन से हम आप सब अपने अपने स्तर पर परिचित हैं।

परम पावन जी की चार प्रमुख प्रतिबद्धताएं हैं संक्षिप्त में इस प्रकार हैं-

पहली प्रतिबद्धता - दलाई लामा जी बताते हैं, मैं स्वयं विश्व भर के मनुष्यों में से एक मनुष्य होने से स्वभाव से सुख चाहना और दुख न चाहना एक समान है इसलिए सुख और शांति के लिए मनुष्य सेवा हो।

दूसरी प्रतिबद्धता- स्वयं एक धार्मिक होने के कारण सभी धार्मिक समुदाय के माध्य भाईचारा पर प्रोत्साहित करना जो कि सभी धर्म का हज़ारों वर्ष से समाज की खुशहाली के प्रति अत्यधिक योगदान रहा है।

तीसरी प्रतिबद्धता- एक तिब्बती नागरिक होने के नाते तिब्बत के धर्म, संस्कृति और पर्यावरण का संरक्षण करना व तिब्बती जनसमूह मुझ पर भरोसा रखते हैं इसलिए यह मेरा कर्तव्य भी है।

चौथी प्रतिबद्धता- भारतीय दर्शन के एक अनुयायी होने के संदर्भ में निष्पक्ष तर्कसंगत द्वारा मन और विज्ञान आदि के विषय को सिद्ध करने की प्राचीन भारतीय शिक्षा विधि पर भूमिका प्रदान करना।

यहाँ जो विषय मुझे कहा गया है वह दूसरी प्रतिबद्धता है, परम पावन दलाई लामा जी ने कई बार अपने प्रवचन व वक्तव्यों में कहा है कि मैं एक बौद्ध भिक्षु हूँ और मेरे लिए बौद्ध धर्म श्रेष्ठ है, इस आधार पर यह तो नहीं कह सकता कि धर्मों में बौद्ध धर्म सबसे श्रेष्ठ है फिर स्वयं बुद्ध काल में सारा भारत बौद्ध नहीं बना अब भले हमारे हाल काल में सारा संसार बौद्ध कैसे बनेगा ऐसा संभव नहीं है। वास्तव में सारे संसार का कल्याण तो अलग अलग धर्मों से हो रहा है किसी एक धर्म से नहीं इस सोच से सभी धर्मों के प्रति आदर भाव से आस्था रखें हालाँकि आत्मा, ईश्वर, शून्यता आदि की परिभाषाएं शास्त्रार्थ के माध्यम से सिद्ध कर के ज्ञात हो सकती हैं और यह उचित भी है क्योंकि प्रश्न जटिल है चित्त-चेतना आदि के संदर्भ का है। हमारे आभास से कोसों दूर है कर्म-संस्कार ज्ञान-मोक्ष का विषय है इसलिए अध्ययन महत्वपूर्ण है पर मूल शिक्षा के संदर्भ में सनातन हिंदू, जैन, बौद्ध, सिख, इस्लाम, ईसाई आदि धर्मों द्वारा प्रेम, सहनशीलता, संतुष्टि, अनुशासन आदि के समान उपदेश है। उदाहरण के तौर पर क्रोध उत्पन्न न हो इस हेतु मन को शांत रखें उसके उपाय हेतु कटुता न रखें जिससे मन अशांत हो सकता है और यह मन तो मेरा अपना है, ऐसे कितने सारे धर्म ग्रंथों में शिक्षाएं हैं जो सदियों से हैं और कल्पना नहीं कल्याण है। मठ, मंदिर, गुरुद्वारा, मस्जिद, चर्च आदि धार्मिक स्थल जो धर्म के प्रतीक हैं स्वयं परमपावन जी उन धर्म स्थलों का तीर्थ यात्रा के स्तर पर कार्यक्रम व यात्रा करते हैं।

दलाई लामा जी के वचनों के आधार पर कहूँ तो मनुष्य समाजिक प्राणी है बुद्धि प्राप्त होने के उपरांत अगर लाभ सब से ज्यादा कर सकते तो हानि भी सबसे ज्यादा मनुष्य ही पहुंचा सकता है। मनुष्य के पास परिवार है, पडोसी हैं ऐसे में मिल-जुलकर रहना जरुरी है। उससे कटुता व दुश्मनी पैदा नहीं होगी फिर ऐसे इंसान को लोग प्यार करते हैं, पसंद करते हैं और संदेह नहीं रखते, विश्वास रखते हैं ऐसा समाज बनने और विकसित होने में अलग अलग धर्मों का सदियों से योगदान रहा है और आज विज्ञान और तकनीक से दुनिया छोटी होती जा रही है और एक-दूसरे पर निर्भरता बढ़ती जा रही है। ऐसी परिस्थिति में सभी धर्म संप्रदायों का कर्तव्य बढ़ जाता है क्योंकि उनके पास सुखी जीवन, समाजिक एकता और विश्व शांति स्थापित करने की क्षमता है जो संभवतः किसी और शासन तंत्र के पास न हो और आधुनिक शब्दकोश से कहे तो ये सारे धर्म विश्व की सबसे प्राचीन संस्थायें हैं इन धर्मों ने समय-समय पर समाज को प्रेम की शिक्षा तथा मोक्ष का ज्ञान दिया है।

परम पावन जी बताते हैं कि इस कार्य को अगर कोई अगुवाई दे सकता है तो वो भारत ही है सदियों से इस देश में यहाँ से आरम्भ तथा बाहर से आये सभी धर्म के लोग एक साथ निर्विरोध शांतिपूर्ण रह रहे हैं जैसा कि हम तिब्बती हिंदुस्तान को 'भारत आर्य भूमि' नाम से संबोधित करते हैं, करीब तीन हज़ार साल से इस देश के पास धर्म, दर्शन, संस्कृति का ऐतिहासिक अनुभव तथा सभ्यता है, उदाहरण के तौर पर सातवीं शताब्दी में राजा ठि□सोंग देत्सेन की प्रार्थना से नालन्दा

विश्वविद्यालय के आचार्य शांतारक्षित तिब्बत पधारे थे तब से भगवान बुद्ध के वचन, भारतीय आचार्यों के शास्त्रों का नालंदा स्वरुप तिब्बती भाषा में यथार्थ अनुवाद हो कर करीब तीन सौ पोथियाँ में विराजमान है और इसी कारणवश आधुनिक व विशेषकर पश्चिम के विद्वानों द्वारा विद्यालयों में 'तिब्बती बौद्ध धर्म' के नाम से विख्यात है।

यह सचाई है हम तिब्बतीयों के दलाई लामा गुरु के साथ साथ तिब्बत के महामहिम है, राष्ट्रीय अध्यक्ष है तब उनके जीवन दर्शन से परिचित होना आवश्यक है। लेकिन साथ में विशेष कर अध्ययन व शोध के लिये विद्यार्थियों को भी लाभ रहेगा दलाई लामा का जीवन धर्म-दर्शन, समाजिक-राजनीतिक, संकट-सामना तथा ज्ञान-विज्ञान से भरे हैं जैसा कि समाजवाद और साम्यवाद की दौड़ से वह गुज़रे हैं फिर आज तो प्रख्यात वैज्ञानिक भी उनको एक वैज्ञानिक मान चुके हैं।

भारत के संदर्भ में स्वयं परमपावन जी बताते हैं कि मेरा जीवन और दर्शन-दोनों भारत की देन है अगर आप हम चिंतन करें मात्र दलाई लामा ही वह गुरू, व्यक्ति व नेता हैं जो प्रथम राष्ट्रपति डा0 राजेन्द्र प्रसाद जी से लेकर आज के महामहिम राष्ट्रपति श्री रामनाथ कोविंद जी तक तथा प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू जी से होकर आज के प्रधानमंत्री माननीय श्री नरेन्द्र मोदी जी तक से एक-दूसरे को जानते-समझते हैं, एक दफ़ा मसूरी स्थित देश की अकादमी संस्थान में आने वाले कल के एक अधिकारी ने उनसे पूछा था कि हमसे ज्यादा हिंदुस्तान आप ने देखा, आपकी नजर में देश की सबसे बड़ी समस्या क्या हैं? देखिये ऐसा लोगों का विश्वास है हमारा सौभाग्य है कि दलाई लामा जी स्वस्थ हैं और उनकी आयु भी कुछ ख़ास नहीं अर्थात् दर्शन मिलता रहेगा, यह समय एक दुर्लभ अवसर है।

अंत में परम पावन जी के वचन का संक्षिप्त में उद्धृत करूँ यह उन्होंने नागार्जुन तथा शांतिदेव आदि सत्रह नालंदा आचार्यों की स्तुति रचना में लिखा है कि किसी भी मूल विषय को जानने के लिये कर्म और स्वभाव इन दो सत्य को जानें तभी जीवन में दुख, पाप, सुख और पुण्य उन चार सत्य को समझ पाओगे इसी लिए जरूरी है मोक्ष के संस्कार हेतु अभ्यास करें।

परम पावन दलाई लामा जी त्रिलोकीनाथ हैं, अंतरराष्ट्रीय हैं उनके जीवन दर्शन के विषय पे मेरा व्याख्यान व व्याकरण में गलतियां हुई हों तो उसके लिए मैं क्षमा प्रायश्चित हूँ और अब उनकी दीर्घायु प्रार्थना के साथ संपन्न करता हूँ इतिहासकार बताते हैं कि यह पाठ सदियों से तिब्बत में राष्ट्रीय गान हुआ करता था, उस समय के दलाई लामा के नाम से पाठ किये जाते थे जैसा कि तेरहवें दलाई लामा थुपतेन ज्ञात्सो नाम से संबोधित है, प्रार्थना पाठ के अर्थ अनुवाद के साथ मुझे अनुमति दें।

གངས་རི་ར་བའི་སྐོར་བའི་ཞིང་ཁམས་སུ།
ཕན་དང་བདེ་བ་མ་ལུས་བྱུང་བའི་ནས།
སྤྱན་རས་གཟིགས་དབང་བསྟན་འཛིན་རྒྱ་མཚོ་ཡིས།
ཞབས་པད་སྲིད་བདེ་བར་དུ་བརྟན་འགྱུར་གཅིག

हिम पर्वत से सजे क्षेत्र में
सुख लाभ का आप एक हो
लोकेशवर तेनजिन ग्यात्सो
दर्शन जगत अंत तक हो
सर्व मंगलम

डा0 उपनन्द थेरो

श्री लंका थेरवाद बौद्ध धर्म के विद्वान और शिक्षक

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मा सम्बुद्धस्स।
नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मा सम्बुद्धस्स।
नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मा सम्बुद्धस्स।

परम पावन दलाई लामा जी को त्रिवार वंदामि
तिब्बत सरकार, धर्मशाला में परम पावन जी की प्रतिबद्धताओं पर ऑनलाइन के माध्यम से संगोष्ठी का आयोजन कर रही है इसके लिए सरकार साधुवाद की पात्र है।

मैं भिक्षु डॉ0 उपनन्द थेरो, महासचिव, यूथ बुद्धिस्ट सोसाइटी ऑफ इंडिया, संकिसा विगत कई वर्षों से परम पावन जी को सुन रहा हूँ। वास्तव में विश्व में शांति और सद्भावना के लिए परम पावन जी की चार प्रतिबद्धताओं का अभ्यास सम्पूर्ण विश्व के लिए एक वरदान साबित हो सकती है। ऐसे में तिब्बत सरकार परम पावन जी की इन प्रतिबद्धताओं को ऑनलाइन के माध्यम से एक संगोष्ठी करके लोगों तक पहुँचा रही है। इसके लिए सरकार को बहुत बहुत साधुवाद, धन्यवाद, मंगलकामनाएं। परम पावन जी ने संकिसा के लोगों पर अनुकम्पा करके यूथ बुद्धिस्ट सोसाइटी ऑफ इंण्डिया के अनुरोध पर 2015 और 2018 में दो बार धर्म प्रवचन दिये। उनके प्रवचन से यहाँ के लोगों को काफी लाभ भी हुआ। लोग परम पावन जी के विचारों को अंगीकार भी कर रहे है। परम पावन दलाई लामा जी अक्सर इस बात को कहते आएं है कि शिक्षा ही विभिन्न धर्मों के बीच सद्भाव की कुंजी हैं। वास्तव में शिक्षा ही व्यक्ति को श्रेष्ठ बनाती है। शिक्षा व्यक्ति के विचारों को जन्म देती है, और व्यक्ति के जिस तरह के विचार होते हैं उसी तरह के उसके कार्य भी होते हैं।

यदि हमारे मन में एक दूसरे के प्रति ईर्ष्या, हीनता इत्यादि की भावना, आदि विचार चल रहे होते हैं तो हमारा जो कर्म है, जो मेरी क्रियाऐं हैं, जो मैं करता हूँ उसी के अनुरूप करता हूँ। जिस तरह के मनुष्य के कार्य होते हैं, उसी तरह का समाज पर प्रभाव पड़ता है। इसलिए शिक्षा ही एक ऐसा माध्यम है जो व्यक्ति के विचारों को बदल सकती है और वह भी एक कुशल शिक्षा एक सच्चे सही विचारों की शिक्षा, अन्ततोगत्वा जैसा व्यक्ति सोचता है, वैसा ही करता है।

क्योंकि मन ही श्रेष्ठ होता है जिस तरह के मन में विचार चल रहे होते हैं उसी तरह के व्यक्ति समाज में कर्म करता है और वैसा ही प्रभाव पड़ता है। भगवान बुद्ध ने धम्मपद की प्रथम गाथा में ही कहा है कि

मनोपुब्बंगमाधम्मा मनोसेट्ठा मनोमया
मनसा चे पदुट्ठेन भासति वा करोति वा
ततो नं दुक्खमंवेति, चक्कं व वहतो पदं। 1

अर्थातः मन सभी धर्मां में पूर्वगामी, आगे आगे चलने वाला है, मन श्रेष्ठ है, मनोमय है। यदि कोई अकुशल मन से कुछ बोलता है या कुछ करता है तो दुःख उसका उसी प्रकार पीछा करता है जैसे बैल, बैलगाडी के चक्कों का अनुगमन करते हैं।

मनोपुब्बंगमाधम्मा मनोसेट्ठा मनोमया
मनसा चे पसन्नेन भासति वा करोति वा
ततो नं सुखमंवेति, छाया व अनपायनी । 2

उसी प्रकार, मन सभी धर्मां में पूर्वगामी, आगे आगे चलने वाला है, मन श्रेष्ठ है, मनोमय है। यदि कोई कुशल मन से कुछ बोलता है या कुछ करता है। तो सुख उसका उसी प्रकार से साथ देता है जैसे उसको कभी ना छोड़ने वाली छाया। अर्थात एक अच्छे समाज का निर्माण कैसे हो सकता है यह समाज के लोगों के मन की मनोदिशा पर ही निर्भर है। यदि लोग अच्छा सोचते हैं, अच्छा बोलते हैं, अच्छा करते हैं तो निश्चित तौर पर एक अच्छे समाज का निर्माण कर सकते हैं। जो समाज शांति, भाईचारा, अहिंसा, प्रेम, करूणा और दया पर आधारित होगा। उस समाज के लिए इस तरह की शिक्षा का होना बहुत अनिवार्य है क्योंकि दूसरे धर्मों के प्रति अविश्वास और शत्रुता का भाव अक्सर उन धर्मों की शिक्षाओं के बारे में अज्ञान के कारण उत्पन्न होता है। जब हमें एक दूसरे के धर्मो का ज्ञान नहीं होता है तो अक्सर लोग अपने धर्म को श्रेष्ठ और दूसरे को हीन मानते हैं। इस तरह से जब दूसरे के धर्म को हम हीन मानते हैं तो उसके प्रति ईर्ष्या की भावना, अहंकार इत्यादि की भावना उत्पन्न होने लगती है। धीरे धीरे यह चित्त में उत्पन्न भावना ही एक अहिंसा का रूप भी ले लेती है। दूसरे के प्रति द्वेष, हिंसा इत्यादि उत्पन्न करती है।

इसलिए सभी धर्मों का ज्ञान होना बहुत जरूरी है। यह शिक्षा के माध्यम से ही प्राप्त किया जा सकता है। सभी धर्मों में प्रेम, करूणा, क्षमा और दया के सार्व भौमिक मूल्यों के प्रति समान रूप से आस्था व्यक्त की गई है। उन सभी का लक्ष्य भी एक समान है व्यक्तियों और समाज के जीवन को और अधिक सुखमय बनाना, इस प्रकार से जितने भी विश्व में धर्म हैं, मान्यताएं हैं, मत हैं वह सभी मिल करके एक ही शिक्षा देते हैं, या ऐसे भी कह सकते हैं इन सबका जो लक्ष्य है, उद्देश्य है वह एक ही है। समाज में लोगों के जीवन को और अधिक सुखमय बनाना उनके जीवन में प्रसन्नता उत्पन्न कराना लोगों को सुखी बनाना जिससे एक अच्छे समाज का निर्माण हो सके उनके बीच के वैचारिक मतभेद किसी भी दृष्टि से उन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए इन मूल्यों को वह नहीं नकारते हैं, वे तो बस विभिन्न प्रकार के उन रूपरेखाओं और व्याख्याओं को दर्शाते

हैं जो इन गुणों को विकसित करने की दृष्टि से साधकों के लिए समान रूप से असरदार होती हैं। इसलिए धार्मिक सौहार्द को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न धर्मों के अनुयायियों को यह सीखना चाहिए कि वह इस समन्वय की स्थित में पहुँचते हैं। जहाँ विश्वास, सम्मान और सौहार्द में वृद्धि हो सकती है। इसलिए मेरा मानना है कि आज के परिपेक्ष्य में अंतरधार्मिक शिक्षा की नितान्त आवश्यकता हैं।

यह इसलिए ताकि प्रत्येक पक्ष दूसरे एक पक्ष को सम्मान देना सीख सकें। जब हम एक दूसरे के धर्मों के विषय, उनकी शिक्षाओं के विषय में, उनके मतों के विषय में अच्छे से परिचित होंगे तब हम समझ सकेंगे कि इन सभी धर्मों का जो मूल उद्देश्य है वह तो मनुष्य की मनुष्यता को निखारने के लिए है। समाज में शांति, भाईचारा इत्यादि स्थापित करने के साथ साथ मुनष्य के जीवन को और अधिक सुखमय बनाना ही है। तब हम कभी भी दूसरे के धर्म पर, दूसरे के मत पर कटाक्ष नहीं करेंगे। इसलिए माना जाता है कि शिक्षा सामाजिक, धार्मिक सद्भाव को हासिल करने की कुंजी है। यही एक वह कुंजी है जो धार्मिक सद्भाव का दरवाजा खोल सकती है।

भगवान बुद्ध ने हमेशा सर्वधर्म सद्भाव पर जोर दिया, यहाँ तक कि जब उन्होंने प्रथम बार सारनाथ में प्रथम धर्मचक्र प्रवर्तन करने के बाद अपने साठ भिक्षुओं को धर्म प्रचार के लिए भेजा तो उन्होंने भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा कि

चरथ भिक्खवे चारिकं, बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय, लोकानुम्पाय अत्ताय हिताय सुखाय...... भिक्षुओं, बहुत लोगों के हित के लिए, बहुत लोगों की सुख के लिए, लोक पर अनुकम्पा करके, देवता और मनुष्यों के प्रयोजन के लिए, हित के लिए, सुख के लिए विचरण करो।

साथ ही उन्होंने कहा--

सब्बे सत्ता सुखी होन्तु सब्बे होन्तु च खेमनो
सब्बे भद्राणि पस्सन्तु मां कच दुक्खमागमा।

अर्थात, संसार के सभी प्राणी, सभी जन सुखी हो, सभी जन क्षमा के पात्र हैं। उन्हें क्षमा प्राप्त हो इत्यादि उपदेश देकर संसार के मनुष्यों सहित सभी प्राणियों के सुखी जीवन की कामना की है। जहाँ केवल प्रेम, करूणा और दया का भाव समाहित हो, उन्होंने अपने जीवन काल में कभी किसी भी मत, दर्शन या धर्म की बुराई नहीं की। न ही अपने शिष्यों को ऐसा करने को कहा। उन्होंने समाज में व्याप्त कुरूतीयों अथवा असमाजिक मान्यताओं का पुरजोर खण्डन जरूर किया है जो कि मनुष्य के सर्वांगीण विकास एवं मनुष्यता के लिए रोड़ा थी। तथागत बुद्ध तो संसार के प्राणियों के प्रति करूणा और दया के प्रतिमूर्ति थे, कभी कभी भिक्षुओं इत्यादि को उनकी गलतियों पर डांटा भी करते थे। किन्तु बुद्ध की जो डांट होती थी वह कुम्हार के सदृष्ट होती थी। जिस प्रकार से जब कुम्हार कोई मिट्टी का बर्तन बनाता है तो वह बाहर से ठोकता हैं किन्तु अंदर से एक हाथ लगा कर रखता है जिससे कि उसकी चोट से वर्तन टूटने न पाये। भगवान की भी

डांट इसी प्रकार से हुआ करती थी वह अंदर से प्रेम, करूणा, मैत्री का हाथ लगाकर बाहर से कभी कभी डांट भी दिया किया करते थे, तो इस प्रकार से भगवान बुद्ध का यह जो समाज में व्याप्त बुराईयों के प्रति या फिर विसंगतियों, कुरूतीयों, असमाजिक मान्यताओं के प्रति इन मान्यताओं का जो खंडन था, वह किसी द्वेष, ईर्ष्या इत्यादि की वजह से नहीं था बल्कि मनुष्य के सर्वागींण विकास एवं उनके सुखी जीवन के लिए था। लोगों को निर्वाण के मार्ग तक पहुंचाने के लिए था। जब भगवान बुद्ध ने मैत्री करूणा एवं अहिंसा जैसी बातों पर जोर दिया और क्रोध, द्वेष, ईर्ष्या आदि का विनाश कर मन की शुद्धी की बात की तो फिर किसी की भी व्यक्तिगत या धर्मगत बुराई की बात तो सम्भव ही नहीं, क्यों कि राग, द्वेष, ईर्षा आदि के साथ साथ मैत्री, करूणा, अहिंसा, प्रेम आदि का अभ्यास तो हो ही नहीं सकता।

इसलिए बुद्ध के उपदेश में सदा सर्वधर्म सद्भाव का पाठ पढ़ाते हैं। पंचशील का सिद्धांत बुद्ध का महत्वपूर्ण सिद्धांत है। जिसका अभ्यास संसार के सभी मनुष्य कर सकते हैं। चाहे किसी भी धर्म या मत के मानने वाले हों। जिनको भारतीय संविधान के नीति निदेशक तत्वों में भी समाहित किया गया है।

पंचशील सिद्धांतो की शिक्षा और प्रसार से भी सामाजिक सर्वधर्म सद्भाव की परिकल्पना को साकार किया जा सकता है। विदित है, कि सर्व धर्म सद्भाव की भावना को सामाजिक स्तर पर हासिल करने के लिए प्रेम, करूणा, अहिंसा, मैत्री आदि मूल मंत्र हैं, और इन मूल मंत्रों की प्राप्ति के लिए तथागत बुद्ध द्वारा स्थापित पंचशील सिद्धांत या तथागत बुद्ध द्वारा स्थापित ये पंचशील के सिद्धांत एक वरदान साबित हो सकते हैं।

क्योंकि पंचशीलों के अभ्यास से व्यक्ति के विचार परिशुद्ध होते हैं और जब विचार परिशुद्ध होते हैं तो आचरण परिशुद्ध होता है। जब आचरण परिशुद्ध होता है तो समाज की नींव भी उसी तरह से पड़ती है। चाहे वह किसी भी धर्म को मानने वाले लोग हों सभी इन पंचशील सिद्धांतो का अचरण करने लगेंगे। तो उनके विचार परिशुद्ध होंगे। एक समान होंगे, विचारों में एक रूपता होगी, जब विचारों में एक रूपता होगी तो हिंसा, द्वेष, क्रोध, इत्यादि का तो प्रश्न ही नही उठता।

इस संसार में सारी चीजें अशांति, द्वोष, क्रोध, विघटन तब उत्पन्न होते हैं जब विचारों में एकरूपता नहीं होती है। विचारों में एकरूपता का न होना, एक समान विचारों का पालन न करने की वजह से होता है। इसलिए मेरा ऐसा मानना है कि यदि लोग सर्व साधारण के लिए सर्व मान्य इन पंचशील सिद्धांतो का आचरण करने लगें, तो समाज में सर्वधर्म सद्भाव की परिकल्पना को जरूर साकार किया जा सकता है। इन पंचशील सिद्धांतो में कहा गया है हिंसा न करना अर्थात अहिंसा का अभ्यास करना, चोरी ना करना अर्थात किसी के वस्तु के प्रति लोभ आदि उत्पन्न न करना, व्यभिचार न करना, झूठ, कठोर आदि न बोलना अर्थात मृदुभाषी होना, नशीले पदार्थें का सेवन न करना, भगवान कहते है --

यो पानमति पातेति मुसावादञ्च भासति
लोके अदिन्न आदयति परदारञ्च गच्छति
सुरामेरय पानञ्च यो नरो अनुयुञ्जति
इधमेव सो लोकस्मिं मूलंखनति अत्तनो।

अर्थात जो जीव हिंसा करता है, झूठ बोलता है, चोरी करता हैं, परस्त्रीगमन करता हैं, शराब दारू पीता है वह इस संसार में अपनी ही जड़ स्वयं खोदता है।

धम्मपद में भगवान बुद्ध ने एक जगह और भी कहा है- कटु वचन न बोलो, दूसरे भी तुमको वैसे ही बोलेंगे, दुर्वचन, दुखदायी होता है, दुर्वचन बोलने से बदले में दंड ही मिलता है। इस प्रकार भगवान बुद्ध के बताए इन पंचशील सिद्धांतो मात्र का ही यदि लोग ठीक से अनुसरण करने लगे। जो कि वास्तविक रूप में सभी जनों के हित के लिए, सभी जनों के सुख के लिए, सभी जनों के कल्याण के लिए हैं। तो सामाजिक सर्वधर्म सद्भाव को हासिल किया जा सकता है।

मैं एक बार पुनः परम पावन जी को त्रिवार वंदामि करते हुए तिब्बत सरकार को बहुत बहुत साधुवाद, मंगलकामनाएं जो कि उन्होंने इतने सुंदर सामाजिक उपयोगी विश्व में शांति स्थापित करने वाले परमपावन की प्रतिबद्धताओं पर एक ऑनलाई बातचीत श्रृंखला का आयोजन किया। उसमें मुझे भी अवसर प्रदान किया इसके लिए तिब्बत सरकार को बहुत बहुत साधुवाद, धन्यवाद, मंगलकामनाएं।

सब्बेसत्ता सुखी होन्तु.......

जंगछुप छोड़ोन

महासचिव, गेलुग इंटरनेशनल फाउंडेशन एवं गादेन शरत्से मठ के पूर्व मठाधीश

सर्वदृष्टिप्रहाणाय यः सद्धर्ममदेशयत् ।
अनुकम्पामुपादाय तं नमस्यामि गौतमम् ॥
གང་གིས་ཐུགས་བརྩེ་ཉེར་བཟུང་ནས། །ལྟ་བ་ཐམས་ཅད་སྤང་བའི་ཕྱིར། །
དམ་པའི་ཆོས་ནི་སྟོན་མཛད་པ། །གོ་ཏམ་དེ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །

सभी विविध ग्रंथों के लिए आंख के समान,
तथा मैत्रीपूर्ण उपाय कुशल कार्यों से,
सौभाग्यवानों को मुक्ति का सर्वोच्च द्वार,
प्रदर्शित करने वाले कल्याण मित्रों को, मेरा विनम्र प्रणाम।

बर्फीले पहाड़ों से घिरी भूमि तिब्बत में,
सभी सुख और उपकार के स्रोत,
अवलोकितेशवर, तेनज़िन ग्यात्सो जी,
कृपया मेरा विनम्र प्रणाम स्वीकार करें।

इन पंक्तियों से भगवान बुद्ध, अन्य गुरुजन और परम पावन दलाई लामा जी को नमन करके मैं आगे कहना चाहूँगा कि तिब्बत के निर्वासित सरकार द्वारा २०२० पूरे वर्ष को परम पावन दलाई लामा जी के अपार कृपा के कृतज्ञता हेतु मनाया जा रहा है। इस विशेष अवसर पर इस कार्यक्रम के संयोजक निर्वासित तिब्बत सरकार के विदेश तथा प्रचार विभाग ने मुझे परम पावन जी की चार प्रतिबद्धताओं में से तीसरी प्रतिबद्धता पर अपना विचार आप सभी से साझा करने के लिए आमन्त्रित किया। बड़े ही सौभाग्य की बात हे कि ये अवसर मुझे प्राप्त हुआ। इस विषय पर मैं कोई विशेष विद्वान तो नहीं हूँ, मगर वर्षों तक मैंने परम पावन जी के विचारों को सुना हे और तिब्बती समुदाय में बहुत लंबा समय बिताने के कारण कुछ विचार हैं जो मैं आप लोगों से साझा करना चाहूँगा। शुरुआत मैं परम पावन जी के संक्षिप्त जीवनी से करना चाहूंगा। वैसे परम पावन जी की परिचय की किसी को जरूरत नहीं है। फिर भी मैं उनके जीवन के बारे में कुछ महत्वपूर्ण बातें संक्षिप्त में आप सबके समक्ष रखना चाहूँगा और उसके पश्चात उनकी तीसरी प्रतिबद्धता पर कुछ विचार आप लोगों के साथ साझा करना चाहूँगा।

परम पावन चौदहवें दलाई लामा तेनज़िन ग्यात्सो, एक संक्षिप्त जीवनी

जन्म तथा पहचान

परम पावन चौदहवें दलाई लामा तेनज़िन ग्यात्सो का जन्म ६ जुलाई १९३५ को उत्तर पूर्वी तिब्बत में आमदो के एक छोटे से गाँव तकछेर में एक कृषक परिवार में हुआ था। दो वर्ष की आयु में ल्हामो दोंडुब नाम का वह बालक तेरहवें दलाई लामा थुबतेन ग्यात्सो के अवतार के रूप में पहचाना गया। दलाई लामा को अवलोकितेश्वर या चेनेरेज़िग का मानवीय रूप माना जाता है (जो कि करुणा के बोधिसत्त्व तथा तिब्बत के विशेष संरक्षक कुलदेव माने जाते हैं)। बोधिसत्त्व प्रबुद्ध सत्त्व हैं जिन्होंने अपना निर्वाण स्थगित कर प्राणि मात्र की सेवा के लिए पुनः जन्म लेने का निश्चय लिया है।

तिब्बत में शिक्षा

परम पावन की मठीय शिक्षा छह वर्ष की आयु में उनके गुरु की देख रेख में प्रारंभ हुई। उनके पाठ्यक्रम में पाँच महाविद्या तथा पाँच लघु विद्या थी। महाविद्या थी प्रमाण विद्या, शिल्प विद्या, शब्द विद्या, चिकित्सा विद्या तथा आध्यात्मिक विद्या, जो अन्य पाँच वर्गों में विभक्त थाः प्रज्ञापारमिता, माध्यमिक, विनय, अभिधर्म और प्रमाण। पाँच लघु विद्या थे काव्य, नाटक, ज्योतिष, छन्द तथा अभिधान। सन् १९५९ प्रारम्भ २३ वर्ष की आयु में वे ल्हासा के जोखंग मंदिर में मोनलम (प्रार्थना) उत्सव के मध्य उन्होंने अंतिम परीक्षा दी। परीक्षा में बड़े ही सम्मान के साथ सफलता प्राप्त करके उन्हें गेशे ल्हारम्पा की उपाधि (जो कि उच्चतम उपाधि है और बौद्ध दर्शन में डॉक्टर के समकक्ष है) से सम्मानित किया गया।

नेतृत्व का उत्तरदायित्व

चीन द्वारा १९४९ में तिब्बत पर आक्रमण के बाद १९५० में परम पावन से पूरी राजनैतिक सत्ता संभालने का आग्रह किया गया। १९५४ में वे माओ चेतुंग तथा अन्य चीनी नेताओं (जिनमें देंग ज़ियोपिंग और चाउ एन लाइ भी शामिल थे) के साथ शांति वार्ता के लिए बीजिंग गए। पर अंततः १९५९ में चीनी सेना द्वारा ल्हासा के तिब्बती राष्ट्रीय संघर्ष को बड़ी क्रूरता से कुचले जाने के कारण परम पावन जी को भारत में शरण लेने के लिए बाध्य होना पड़ा। तबसे वे उत्तरी भारत के धर्मशाला में निवास करते हैं।(जो कि निर्वासित तिब्बती राजनीति और प्रशासन का केन्द्र है।) चीनी आक्रमण के बाद परम पावन ने तिब्बत के प्रश्न पर संयुक्त राष्ट्र संघ से अपील की और संयुक्त राष्ट्र संघ ने तिब्बत पर १९५९, १९६१, और १९६५ में तीन प्रस्ताव पारित किए।

प्रजातांत्रिय प्रक्रिया

१९६३ में परम पावन ने तिब्बत के प्रजातांत्रिय संविधान का एक प्रारूप प्रस्तुत किया जिसमें तिब्बती प्रशासनिक व्यवस्था को प्रजातांत्रिक बनाने के लिए विशेष प्रावधान रखे । इस संविधान में अभिव्यक्ति, विश्वास, सभा तथा घूमने फिरने की स्वतंत्रता प्रतिष्ठापित है।

१९९२ में परम पावन ने भविष्य के स्वतंत्र तिब्बत के संविधान के दिशा निर्देश प्रकाशित किए। उन्होंने घोषणा की कि जब तिब्बत स्वतंत्र होगा तो तात्कालिक कार्य एक अंतरिम सरकार की स्थापना करना होगा जिसका पहला कार्य एक संवैधानिक सभा का चुनाव करना होगा, जो तिब्बत की प्रजातांत्रिक संविधान की रूप रेखा बनाकर उसे स्वीकार करेगी। उस दिन परम पावन अपने सभी ऐतिहासिक तथा राजनैतिक सत्ता अंतरिम राष्ट्रपति को सौंप देंगे और एक साधारण नागरिक की तरह जीवन व्यतीत करेंगे। परम पावन जी ने कहा कि तिब्बत तीन पारम्परिक प्रदेशों से बना संघीय प्रजातंत्र होगा।

मई १९९० में परम पावन द्वारा जो सुधार सुझाए गए थे वह तिब्बती समुदाय के लिए एक सच्चे शरणार्थी प्रजातांत्रिय प्रशासन के रूप में साकार हुए। तिब्बती मंत्री परिषद् काशाग (जिसकी नियुक्ति उस समय तक परम पावन किया करते थे) को शरणार्थी तिब्बती संसद के साथ भंग कर दिया गया। उसी वर्ष भारतीय उपमहाद्वीप और ३३ से अधिक देशों के शरणार्थी तिब्बतियों ने ग्यारहवीं तिब्बती संसद के सदस्यों का चुनाव किया। संसद ने अपनी ओर से काशाग मंत्रिमंडल के नए सदस्यों का चुनाव किया।

सितंबर २००१ में प्रजातांत्रिकरण की ओर एक बड़ा कदम उठाया गया, जब निर्वाचकों ने मंत्रिमंडल के सबसे वरिष्ठ कालोन ठिपा का सीधा चुनाव किया। इसके बाद कालोन ठिपा ने अपने मंत्रिमंडल की नियुक्ति की जिनके लिए तिब्बती संसद की स्वीकृति प्राप्त करना आवश्यक है। तिब्बत के लंबे इतिहास में, यह पहला अवसर था जब जनता ने तिब्बत के राजनैतिक नेतृत्व को चुना।

शांति पहल

तिब्बत की बिगड़ती परिस्थिति के शांति समाधान के लिए एक पहले कदम के रूप में सितंबर १९८७ में परम पावन ने पाँच बिंदु शांति प्रस्ताव रखा। उन्होंने कल्पना की कि तिब्बत एक आश्रय स्थल बनेगा (एशिया के केन्द्र में शांति का क्षेत्र) जहाँ सभी प्राणी समन्वय की भावना के साथ रह सकेंगे और उसके कोमल वातावरण को सुरक्षित रखा जा सकेगा।

१५ जून, १९८८ को यूरोपियन संसद में परम पावन ने पाँच बिंदु शांति योजना के अंतिम बिंदु का विस्तार करते हुए एक और विस्तृत प्रस्ताव रखा। उन्होंने तिब्बत के तीनों प्रांतों में स्वशासित प्रजातांत्रिय राजनीतिक सत्ता के लिए चीनी और तिब्बतियों के बीच बातचीत का रास्ता सुझाया। यह सत्ता चीनी संघ के साथ होगी तथा चीन सरकार तिब्बत की विदेश नीति तथा सुरक्षा के लिए उत्तरदायी रहेगी। मगर परम पावन द्वारा प्रस्तावित विभिन्न शांति प्रस्तावों पर सकारात्मक उत्तर देने में चीन अब तक बिलकुल विफल रहा है।

सार्वभौमिक पहचान

परम पावन दलाई लामा शांति प्रिय व्यक्ति हैं। १९८९ में तिब्बत को स्वतंत्र कराने में उनके अहिंसात्मक संघर्ष के लिए उन्हें नोबेल शांति पुरस्कार से सम्मानित किया गया। अत्यधिक आक्रामक स्थितियों में भी वे निरंतर अहिंसात्मक नीतियों का समर्थन करते रहे हैं। वे पहले नोबेल विजेता हुए हैं जिन्होंने वैश्विक पर्यावरण की समस्याओं के प्रति अपनी चिंता जताई।

परम पावन ६ महाद्वीपों के ६२ से भी अधिक देशों की यात्रा कर चुके हैं। वे बड़े देशों के राष्ट्रपतियों, प्रधानमंत्रियों और राजकीय शासकों से मिले हैं। वे विभिन्न धर्मों के प्रमुखों और जाने माने वैज्ञानिकों से भी संवाद कर चुके हैं।

उनके शांति, अहिंसा, अंतर्धमिय समझ, सार्वभौमिक उत्तरदायित्व तथा करुणा के संदेश को देखते हुए १९५९ से परम पावन जी को ८४ से भी अधिक सम्मान, सम्माननीय डॉक्टरेट, पुरस्कार इत्यादि सम्मानित किये जा चुके हैं। परम पावन ने ७२ से भी अधिक पुस्तकें भी लिखी है। फिर भी परम पावन स्वयं को एक साधारण बौद्ध भिक्षु कहकर संबोधित करते हैं।

राजनीति सेवानिवृत्ति

१४ मार्च २०१० को परम पावन ने तिब्बती जनप्रतिनिधि सभा निर्वासन में तिब्बती संसद को पत्र लिख कर तिब्बतियों के निर्वासन के चार्टर के अनुसार अपने तात्कालिक अधिकार से उन्हें मुक्त करने का अनुरोध किया, क्योंकि तकनीकी रूप से वे तब तक राज्य प्रमुख थे। उन्होंने घोषणा की कि वह उन परम्पराओं को समाप्त कर रहे थे जिसके अनुसार दलाई लामा ने तिब्बत में आध्यात्मिक और राजनैतिक अधिकार का प्रयोग किया था। उन्होंने स्पष्ट किया कि उनका उद्देश्य था कि वे मात्र आध्यात्मिक विषयों से संबंध रखते हुए पहले चार दलाई लामा की स्थिति को पुनः प्रारंभ करें। उन्होंने पुष्टि की कि लोकतांत्रिक ढंग से निर्वाचित नेतृत्व तिब्बती राजनीतिक मामलों के प्रति सम्पूर्ण औपचारिक उत्तरदायित्व ग्रहण करेगा। अब से गादेन फोडंग (दलाई लामा का आधिकारिक कार्यालय और आवास) उस कार्य को पूरा करेगा।

परम पावन दलाई लामा २९ मई २०११ तक तिब्बत के राजकीय प्रमुख रहे और २९ मई २०१० को, परम पावन ने औपचारिक रूप से दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर कर तथा अपनी सारी राजनीतिक शक्तियाँ तथा उत्तरदायित्व प्रजातांत्रिक तरीके से चुने हुए तिब्बती नेतृत्व को हस्तांतरित किये। ऐसा करते हुए उन्होंने दलाई लामा की ३६८ वर्षीय परम्परा (जो तिब्बत के आध्यात्मिक और राजनीतिक प्रमुख दोनों के रूप में कार्य कर रही थी) को औपचारिक रूप से समाप्त किया। तब से वे केवल तिब्बत के सर्वोच्च आध्यात्मिक गुरु हैं।

भविष्य

१९६९ में ही परम पावन ने स्पष्ट किया था कि दलाई लामा के पुनर्जन्म को मान्यता दी जाए अथवा नहीं वह तिब्बती, मंगोलियाई और हिमालय क्षेत्रों के लोगों के निर्णय पर निर्भर था। परन्तु स्पष्ट दिशा निर्देशों के अभाव में, एक स्पष्ट खतरा था कि यदि संबद्धित जनता भावी दलाई लामा को पहचानने के लिए तीव्र इच्छा प्रकट करे तो निहित स्वार्थ राजनीतिक स्थिति का लाभ उठा लेंगे। अतः सितंबर २४, २०११ को अगले दलाई लामा की मान्यता के लिए स्पष्ट दिशा निर्देश प्रकाशित किए गए जिससे किसी तरह के संदेह अथवा धोखे के लिए कोई स्थान न रह जाए।

परम पावन ने घोषणा की कि जब वह नब्बे वर्ष के होंगे तो वे वह तिब्बती बौद्ध परम्परा के शीर्ष लामा, तिब्बती जनता और तिब्बती बौद्ध धर्म में रुचि रखने वाले अन्य संबंधित लोगों के साथ परामर्श करेंगे और यह मूल्यांकन करेंगे कि दलाई लामा की संस्था उनके बाद जारी रहे अथवा नहीं। उनके कथन में इस पर भी चिन्तन किया गया कि किन विभिन्न तरीकों से उनके उत्तराधिकारी की पहचान हो सकेगी। यदि ऐसा निर्णय लिया गया कि एक पन्द्रहवें दलाई लामा को मान्यता दी जानी चाहिए तो ऐसा करने का उत्तरदायित्व प्रमुख रूप से दलाई लामा के गादेन फोडंग ट्रस्ट के संबंधित अधिकारियों पर होगा। उन्हें तिब्बती बौद्ध परम्पराओं के विभिन्न प्रमुख और विश्वसनीय वचन बद्ध धर्म संरक्षक से परामर्श करना चाहिए, जो दलाई लामा की वंशावली से अविभाज्य रूप से जुड़े हुए हैं। उन्हें इन संबंधित दलों से सलाह और दिशा निर्देश प्राप्त करना चाहिए और उनके निर्देशानुसार खोज और मान्यता की प्रक्रियाओं को पूरा करना चाहिए। परम पावन ने कहा है कि वह इस बारे में स्पष्ट लिखित निर्देश छोड़ जाएँगे। उन्होंने आगे चेतावनी दी कि ऐसे वैध उपायों द्वारा मान्यता प्राप्त पुनर्जन्म के अतिरिक्त, पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना के एजेंटों सहित राजनैतिक उद्देश्य के लिए किसी के भी द्वारा निर्वाचित किसी उम्मीदवार को कोई मान्यता या स्वीकृति नहीं दी जानी चाहिए।

परम पावन जी की तीसरी प्रतिबद्धता

जब हम परम पावन जी के तीसरी प्रतिबद्धता के बारे में विस्तार से सोचते हैं तो : पहला तिब्बती भाषा तथा भोटी लिपि उभर कर हमारे सामने प्रकट होता है। इसका विशेष कारण यह है कि तिब्बती भाषा तथा भोटी लिपि तिब्बती संस्कृति की जान है। विश्व भर में इस वक़्त बौद्ध धर्म कि बडी जरुरत है, हमें यह मानना पड़ेगा। बौद्ध धर्म या भगवान बुद्ध के उपदेशों को सप्शट और सटीकता से समझने और समझाने के लिए तिब्बती भाषा और भोटी लिपि से बेहतर कोई भी दूसरा माध्यम नहीं है। तिब्बती भाषा तथा भोटी लिपि में संरक्षित विशाल बौद्ध साहित्य जो संपूर्ण प्राणी जगत के लिए भलाई के लिए अति महत्वपूर्ण है। इस महान बौद्ध साहित्य के कुच्छ अंश प्राचीन पाली साहित्य से अनुवादित है ज़्यादातर प्राचीन संस्कृत साहित्य से प्राप्त हुई है। जिसमें

महान भारतीय दार्शनिक आचार्यों के अनेकों सिद्धांत का विवरण उपलब्ध है और उनको गहराई से समझने के लिए तिब्बती भाषा तथा भोटी लिपि अनिवार्य है।

दूसरा तिब्बती संस्कृति, नालंदा विश्वविद्यालय के आचार्यों से प्राप्त गौरवशाली विरासत है।

तीसरा ऊंचे पठारी इलाके तिब्बत के पर्यावरण हमारे सामने प्रकट होता है। हमें यह समझ में आता है कि तिब्बत के बहुत ही ऊंचे पठारी इलाके में एक विशेष प्रकार का बहुत ही कोमल और नाजुक पारिस्थितिकी तंत्र य पर्यावरण है, वहां पर विशेष प्रकार के दुर्लभ वनस्पतियाँ उत्पन्न होता है जो अपने आप में बहुत ही विशेष है, अगर तिब्बत के पठारीय वातावरण और वहां के पारिस्थितिकी तंत्र य पर्यावरण को नुक़सान होता है तो उसका असर विश्व व्यापी हो सकता है। अगर वक्त रहते उसकी अच्छी तरह से सुरक्षा नहीं की गयी तो पूरे विश्व के लिए बहुत ही बड़ा नुकसान दे हो सकता है। इसलिए परम पावन दलाई लामा जी हमेशा से कहते रहे हैं कि तिब्बत की पारिस्थितिकी तंत्र य पर्यावरण संपूर्ण विश्व का प्राकृतिक धरोहर है और उसकी रक्षा करना बहुत ही जरूरी है।

क्योंकि परम पावन दलाई लामा जी तिब्बतियों के जग जाहिर और सर्व सम्मानित नेता है, और उनको तिब्बत में रहने वाले और अप्रवासी तिब्बती सभी का भरपूर समर्थन और संपूर्ण विश्वास प्राप्त है, तिब्बती लोग उनसे आशा कर बड़ी उम्मीद रखते हैं कि वह किसी ना किसी तरह से उनकी कल्याण और रक्षा करेंगे, तिब्बत के पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों का रक्षा करेंगे, इस कारण यह सब परम पावन जी का महत्वपूर्ण दायित्व बन जाता है । इस कारण वह कहते है। (मैं एक तिब्बती हूँ और दलाई लामा का नाम धारण करता हूँ। तिब्बतियों ने अपना विश्वास मुझ पर रखा है। इसलिए, मेरी तीसरी प्रतिबद्धता तिब्बती प्रश्न है। न्याय के लिए उनके संघर्ष में तिब्बतियों के एक स्वतंत्र प्रवक्ता होने का मेरा अपना एक उत्तरदायित्व है।)

पाँच बिंदु शांति योजना

२१ सितम्बर १९८७ को वाशिंगटन डी सी में संयुक्त राज्य अमरीका के कांग्रेस को संबोधित करते हुए परम पावन ने निम्नलिखित शांति प्रस्ताव रखा

१ सम्पूर्ण तिब्बत को एक शांति क्षेत्र में परिवर्तित किया जाए।

२ चीन की जनसंख्या स्थानातंरण की नीति जो तिब्बतियों के अस्तित्व के लिए ही एक खतरा है, को पूरी तरह से छोड़ दिया जाए।

३ तिब्बतियों के आधारभूत मानवीय अधिकार और प्रजातांत्रिय स्वतंत्रता के प्रति सम्मान की भावना।

४ तिब्बत के प्राकृतिक पर्यावरण की पुनर्स्थापना और संरक्षण तथा चीन द्वारा आणविक शस्त्रों के निर्माण और परमाणु कूड़ादान के रूप में तिब्बत को काम में लाए जाने को छोड़ना ।

५ तिब्बत के भविष्य की स्थिति और तिब्बतियों तथा चीनियों के आपसी संबंधों के विषय में गंभीर बातचीत की शुरुआत।

१५ जून,१९८८ को यूरोपियन संसद में परम पावन ने पाँच बिंदु शांति योजना के अंतिम बिंदु का विस्तार करते हुए एक और विस्तृत प्रस्ताव रखा। उन्होंने तिब्बत के तीनों प्रांतों में स्वशासित प्रजातांत्रीय राजनैतिक सत्ता के लिए चीनी और तिब्बतियों के बीच बातचीत का रास्ता सुझाया। यह सत्ता चीनी संघ के साथ होगी तथा चीन सरकार तिब्बत की विदेश नीति तथा सुरक्षा के लिए उत्तरदायी रहेगी।

३ प्रश्न क्या आप को लगता है कि आप कभी तिब्बत लौटने में सक्षम हो पाएँगे।

उत्तर: हाँ, मैं इस बात को लेकर आशावादी बना रहता हूँ कि मैं तिब्बत लौटने में सक्षम हूँगा। चीन बदलने की प्रक्रिया में है। यदि आप आज के चीन की तुलना दस या बीस वर्ष के पहले से करें तो अत्यधिक परिवर्तन आया है। चीन अब एकाकी नहीं है। यह विश्व समुदाय का भाग है। वैश्विक अन्योन्याश्रितता विशेष रूप से आर्थिक और पर्यावरण के संदर्भ में राष्ट्रों के लिए पृथक बना रहना असंभव है। इसके अतिरिक्त मैं चीन से अलग होने की माँग नहीं कर रहा। मैं अपने मध्यम मार्ग दृष्टिकोण को लेकर प्रतिबद्ध हूँ, जिसके अनुसार तिब्बत चीन की पीपुल्स रिपब्लिक के भीतर रहते हुए एक उच्च स्तरीय स्व शासन अथवा स्वायत्तता का आनंद उठा सकता है। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि यह तिब्बतियों तथा चीनियों दोनों ही के लिए पारस्परिक रूप से हितकारी है। हम तिब्बती चीन की सहायता से तिब्बत का विकास कर सकते हैं और साथ साथ अपनी अनूठी संस्कृति, जिसमें आध्यात्मिकता सम्मिलित है, और हमारे नाजुक पर्यावरण का संरक्षण कर सकते हैं। तिब्बती समस्या का समाधान सौहार्दपूर्ण ढंग से निकाल कर चीन अपनी स्वयं की एकता और स्थिरता में योगदान करने में सक्षम हो सकेगा।

५ प्रश्न आपकी क्या प्रतिबद्धताएँ हैं।

तीसरा, मैं एक तिब्बती हूँ और दलाई लामा का नाम धारण करता हूँ। तिब्बतियों ने अपना विश्वास मुझ पर रखा है। इसलिए, मेरी तीसरी प्रतिबद्धता तिब्बती प्रश्न है। न्याय के लिए उनके संघर्ष में तिब्बतियों के एक स्वतंत्र प्रवक्ता होने का मेरा अपना एक उत्तरदायित्व है।

१० प्रश्न आपके पूर्व वर्तियों में से किसी एक में क्या आपकी विशेष रुचि है या जिनके साथ आप एक विशेष आत्मीयता का अनुभव करते हैं।

उत्तर: तेरहवें दलाई लामा। उन्होंने विहार के महाविद्यालयों में अध्ययन के स्तरों में बहुत सुधार किया। सच्चे विद्वानों को उन्होंने बहुत प्रोत्साहन दिया। उन्होंने लोगों का पूरी तरह से योग्य हुए

बिना धार्मिक पदानुक्रम में आगे बढ़ने के लिए, जैसे विहाराधीश बनने इत्यादि की प्रक्रिया लगभग असंभव कर दी थी। इस संबंध में वे बहुत सख्त थे। उन्होंने हज़ारों भिक्षुओं का अभिषेक भी करवाया। ये उनकी दो मुख्य धार्मिक उपलब्धियाँ थी। उन्होंने बहुत दीक्षा या व्याख्यान नहीं दिए। अब जहाँ तक देश का संबंध था तो शासन कला को लेकर उनमें महान विचार और सम्मान था। विशेष रूप से दूरस्थ प्रांतों के संबंध में। उन्हें किस प्रकार शासित किया जाना चाहिए इत्यादि। उन्हें इस बात की बहुत परवाह थी कि किस प्रकार सरकार को और अधिक कुशलता से चलाया जाए। उन्हें हमारी सीमाओं और इस प्रकार के बातों को लेकर बहुत चिंता थी।

१३ प्रश्न आपको अनंत करुणा के बोधिसत्व अवलोकितेश्वर का अवतार स्वरूप माना जाता है। व्यक्तिगत रूप से आप इस बारे में कैसा अनुभव करते हैं? क्या इस विषय में आप इस अथवा उस पक्ष पर सुस्पष्ट विचार रखते हैं।

उत्तर: मेरे लिए निश्चित रूप से यह कहना कठिन है। जब तक कि मैं ध्यान प्रयास में न लगूँ, इस तरह कि एक एक साँस अपने जीवन के पूर्व भाग में लौटूँ नहीं, मैं निश्चित रूप से नहीं कह सकता।

१४ प्रश्न इसी विषय को आगे बढ़ाते हुए चेनेरेजिग की जो यथार्थवादी भूमिका आप निभा रहे हैं उस दृष्टिकोण से आपको इस विषय में कैसा लगता है? केवल कुछ ही लोगों को किसी न किसी रूप दैविक माना गया है। यह भूमिका एक बोझ या एक आनंद है।

उत्तर: यह बहुत सहायक है। इस भूमिका के माध्यम से मैं लोगों को काफी लाभ पहुँचा सकता हूँ। अतः मुझे यह प्रिय है: मैं इसके साथ अपनत्व अनुभव करता हूँ। यह स्पष्ट है कि यह लोगों के लिए बहुत उपयोगी है, और इस भूमिका में होने के लिए मेरे कर्म संबंध हैं। साथ ही यह भी स्पष्ट है कि विशेष रूप से तिब्बती लोगों के साथ एक कर्म संबंध है। अब आप देखें, कि आप सोच सकते हैं कि इन परिस्थितियों में, मैं बहुत भाग्यवान हूँ। यद्यपि भाग्य शब्द के पीछे वास्तविक हेतु तथा कारण हैं। इस भूमिका को स्वीकार करने में मेरी क्षमता का कर्म बल है और साथ ही मेरी इच्छा का भी बल है। इस संबंध में महान शांतिदेव के बोधिसत्त्व चर्यावतार में एक कथन है जिसके अनुसार (जब तक अंतरिक्ष का अस्तित्व है, जब तक भव चक्र में प्राणी भटक रहे हैं, मैं भी उनके कष्टों के निवारण हेतु बना रहूँ।) इस जीवन काल में मेरी यह कामना है और मैं जानता हूँ कि पूर्व जन्मों में मेरी यह कामना थी।

अब अंत में मैं यह कहना चाहूँगा कि परम पावन दलाई लामा जी के बहुत सारे महत्वपूर्ण विचार हैं। और उन सब विचारों में अति महत्वपूर्ण विचारों को जब अलग से प्रस्तुत किए जाता है तो चार प्रतिबद्धताएँ उभर कर आती हैं। और उनमें से विशेषकर यह तीसरी प्रतिबद्धता जो तिब्बती

भाषा, भोटी लिपि, संस्कृति तथा भारत के नालंदा विश्वविद्यालय के आचार्यों से प्राप्त गौरवशाली विरासत को संरक्षित करने एवं तिब्बत के प्राकृतिक पर्यावरण के संरक्षण करने के लिए हम सबको भरपूर कोशिश करनी चाहिए।

मैं आप सब से उम्मीद और अनुरोध करता हुँ कि हम सब मिलकर परम पावन जी की इन प्रतिबद्धताओं पर काम करने के लिये आगे बड़े। आप सबको धन्यवाद।

मलिंग गोम्पो

संस्थापक, इंडियन हिमालयन काउंसिल ऑफ नालंदा बुद्धिस्ट ट्रेडीशन
तथा सदस्य, अल्पसंख्यक शिक्षा, मानव संसाधन मंत्रालय, भारत सरकार

टाशी देलेक। सबसे पहले मैं केंद्रीय तिब्बती प्रशासन के सूचना एवं अंतर्राष्ट्रीय संबंध विभाग को आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने वर्ष 2020-2021 को परम पावन दलाई लामा जी के प्रति कृतज्ञता वर्ष के रूप में समर्पित किया है। परम पावन 14वें दलाई लामा के बारे में हम सभी जानते हैं कि उन्होंने अपना जीवन मानव जाति और मानवता के कल्याण के लिए समर्पित किया है। हम जितना भी उनका आभार प्रकट करें वह कम ही होगा।

यह जानकार बहुत खुशी हुई कि केंद्रीय तिब्बती प्रशासन ने तिब्बतियों तथा भारत के सभी देशवासियों की ओर से साल 2020 को परम पावन दलाई लामा जी को कृतज्ञता प्रकट करने के रूप में समर्पित किया है। परमपावन जी ने जो कार्य किया है हम जितना भी आभार प्रकट करें, कृतज्ञता प्रकट करें वह कम हैं फिर भी यह एक चिन्ह है कि हम परम पावन जी को कितना सम्मान और पूजते हैं। उनकी शिक्षा जो दुनिया के लिए है वह हमारे लिए कितना महत्वपूर्ण है। इसको आगे रखने का एक माध्यम से यह वर्ष परमपावन दलाई लामा के प्रति आभार प्रकट करने के रूप में मनाया जा रहा है।

परम पावन जी ने अपने जीवन में अनेक मूल्यों को जैसे मानव मूल्यों के उदार और प्रचार के लिए अपने पूरे जीवन कार्य किया है। उन्होंने अपने जीवन में कुछ प्रतिबद्धताएं रखी हैं। परम पावन दलाई लामा जी ने मानव कल्याण हेतु जीवन में चार प्रमुख प्रतिबद्धताएं रखी हैं।

उसमें दूसरी प्रतिबद्धता है वह धार्मिक सद्भाव या समंजस्य को बढ़ावा देना। परम पावन दलाई लामा जी ने विभिन्न धर्मों के बीच सद्भाव और सदाचार को बढ़ावा देने के लिए अपने जीवन को समर्पित किया है।

अलग अलग धर्म जो इस दुनिया में है उसका अपना महत्व है उसी महत्व को सुंदर तरीके से दर्शाते हुए परम पावन जी कहते है कि अलग अलग धर्म होना यह हमारे लिए आशीर्वाद का रूप है। क्योंकि अगर अलग अलग धर्म हैं तो अलग अलग मनुष्य हैं उसके लिए अलग स्वरूप हैं, स्वभाव होता है और मनुष्य जो दुनिया के विभिन्न देशों में रहते हैं उनका अपना एक स्वभाव होता है। तो उस जगह और स्वभाव के मुताबिक अलग अलग धर्मों का इस दुनिया में जन्म हुआ है।

इसलिए उन अलग अलग परिस्थितियों के लिए, अलग अलग मनुष्य के स्वभाव के लिए, अलग अलग मानव की आदतों के लिए, स्वभाव के लिए विभिन्न धर्म उसमें उपयुक्त होता है। हमें अलग अलग धर्म है वह अपनी प्रकार से अलग अलग जगहों के लिए, अलग अलग मनुष्य की स्वभाव के लिए वह अच्छा रहता है। उसको हमें इस प्रकार से देखना है।

इसलिए अलग अलग धर्म होना हमारे लिए एक आशीर्वाद का रूप है। हर एक धर्म अपनी शिक्षा देता है। मानवता के उत्थान के लिए, मानवता की भलाई के लिए यह सभी धर्मों का उपदेश है। जितने भी धर्म हैं सभी धर्मों का उपदेश है वह मानवता की भलाई के लिए है। उनका कहना और करने का तरीका है वह अलग अलग हो सकता है। लेकिन यह सारे अलग अलग धर्म जो हैं वह अलग अलग मार्ग हैं एक ही परमात्मा के पास जाने का रास्ता है। जिस प्रकार अलग अलग नदियां, हिमालय के अलग अलग क्षेत्रों और पहाड़ों से आके अंत में समुद्र में जाकर विलय होकर विराट समुद्र बनता है।

इस प्रकार से अलग अलग धर्म हैं परम पावन जी कहते हैं यह हमारी मानवता के लिए आशीर्वाद है। हमें इसलिए हर एक धर्म को सम्मान करना चाहिए। उसका आदर करना चाहिए। क्योंकि मूल रूप से सभी धर्मों का उद्देश्य वह मूल रूप से प्रेम, करूणा, अहिंसा, सहनशीलता यह सभी मानव मूल्य हैं उन पर आधारित हैं। सभी धर्म मानवता की भलाई के लिए रास्ता दिखाते हैं। इसलिए दुनिया के अलग अलग जगहों में जो धर्म हैं उन सबका उद्देश्य एक ही है। इन सब धर्मों से उभर कर पंथनिरपेक्ष पर भी आज परम पावन दलाई लामा जी ने दुनिया भर में इसका प्रचार कर रहे हैं।

सभी धर्मों का मूल उद्देश्य प्रेम, करूणा, सद्भाव की शिक्षा देना है। इस दुनिया के सभी मनुष्य खुशी चाहते हैं उसे प्राप्त करने के लिए परम पावन जी ने कहा है कि विभिन्न धर्म मानवता के लिए आशीर्वाद है। सभी धर्मों की शिक्षा है उसका हमें आदर करना चाहिए। इसलिए सभी धर्मों के बीच भाईचारे का संबंध हो, सभी धर्मों के गुरु और अनुयायी अपने धर्म को समझें और एक दूसरे के धर्म को आदर और सम्मान करें। अपने जीवन चरित्र को उस धर्म के आधार पर आगे ले जाने का प्रयास और प्रयत्न करें।

इस प्रकार से परम पावन दलाई लामा जी ने कहा है कि अलग अलग धर्म को हम नाकारात्मक सोच के साथ ना देखें। हमें अलग अलग मार्ग से एक ही सच्चाई की तरफ ले जाने का कार्य करता है। हर एक धर्म का अपना अपना सच्चाई होता है, अलग अलग सच्चाई लेकिन अलग अलग राह है। मूल्य धर्म जो मनुष्य का मूल्य रूप से करुणा, मैत्री, सहनशीलता, अहिंसा वही मार्ग दर्शाता है।

इसी धर्म सामंजस्य को लेकर परम पावन जी ने दुनिया भर में जहाँ उनका प्रवास और प्रवचन रहा हो, जहाँ लोगों के साथ उनका संवाद रहा तो उन्होंने धर्म सामंजस्य को लेकर कहा कि आज की 21वीं सदी में, आज के समय जब बहुत बदल गया है, आज जो सारे दुनिया है एक छोटा सा परिवार हो गया है। उसमें जरूरी यह है कि हम एक दूसरे को आदर सम्मान करें।

विभिन्न धर्मों के बीच में धर्म सामंजस्य हो उसको हम बढ़ावा दें। आज सारी दुनिया छोटा होने के कारण आपस में मेल-जोल ज्यादा होने के कारण, एक दूसरे के बीच जानने का अवसर

मिल रहा है वह ज्यादा हो गया है। पहले जमाने में लोग दुनिया के अलग अलग जगहों में रहते थे, बौद्ध धर्म एशिया के जगहों पर ज्यादा फैला हुआ था, इसी प्रकार इस्लाम धर्म, मध्य-पूर्वी अरब देशों में ज्यादा फैला था, ईसाई धर्म पश्चिम देशों में ज्यादा फैला हुआ था, हिंदू धर्म भारत तथा एशियाई देशों में ज्यादा फैला हुआ था। इन सभी धर्मों का अलग अलग जगहों में जन्म हुआ है।

पुराने जमाने में आने जाने का यातायात साधन तथा संपर्क की कमी थी। इसलिए लोगों का आपस में मिलना बहुत कम था। जब लोगों का आपस में मिलना कम होता था, तो लोगों के बीच धर्म और संस्कृति के बारे में जानकारी कम होती थी।

जब से लोग आपस में मिलने लगे हैं, आज 19वीं सदी और 21वीं सदी के बीच जो बदलाव हुआ है, आज वह दूरी खत्म हो गई है। आज सभी दुनिया एक परिवार के रूप में सामने आ गई है। सारे धर्म एक साथ आ गये हैं। सब को जानने की इच्छा ज्यादा बढ़ गई है। उसी प्रकार सूचना में वृद्धि हुई है, टेक्नोलोजी और विज्ञान के कारण से ज्ञान में भी काफी बदलाव है। इसलिए हमें धार्मिक सद्भाव को बढ़ावा देने की जरूरी है।

एक दूसरे के धर्म का आदर और सम्मान करना बहुत ही जरूरी है। क्योंकि हम इतिहास में देखें तो धर्म के नाम पर जिस प्रकार से युद्ध हुए, धर्म के नाम पर कितने लोगों की जान चली गई। यह बहुत ही भयानक है। इसलिए आज की इक्कीसवीं सदी में भी जब सारी दुनिया जो नेशन-स्टेट्स लोकतंत्र की तरफ बढ़ रही है। फ्रीडम की तरफ बढ़ रही है। धार्मिक आज़ादी की तरफ बढ़ रही है तो उसमें बहुत जरूरी है कि हम एक दूसरे के धर्म को समझे।

धर्म का आपस में भाईचारा का संदेश, आपस में आस्था, धर्म के बीच संवाद हो और इसको धार्मिक सद्भाव को बढ़ावा दें। तब जाकर दुनिया में शांति हो सकती है। अगर हम एक दूसरे के धर्म का सम्मान नहीं करेंगे, उनकी शिक्षा को सम्मान नहीं करेंगे फिर दूसरों धर्मों के लोग भी हमारे धर्म का सम्मान नहीं करेंगे। इससे राग, द्वेष जैसे नाकारात्मक सोच बढ़ेगी।

परम पावन जी कहते हैं कि जहाँ तक धर्म सामंजस्य की बात है उसको अगर हम देखे तो भारत देश इसका बहुत सुन्दर उदाहरण है। भारत देश के इतिहास को हम देखें, भारत देश की सभ्यता को देखें, इसकी विरासत को देखें, परम्पराओं को देखें प्राचीन काल से तो भारत देश एक ऐसा देश है जहाँ अनेक धर्मों को मानने वाले, अनेक प्रकार के धर्म ने साथ में रहकर समृद्धि और आगे बढ़ने का उदाहरण दुनिया को दिया है।

भारत के इतिहास को देखा जाएं तो स्वामी विवेकानन्द जो कि हिंदु भिक्षु थे उन्होंने अमेरिका के विश्व धर्मों के बीच सम्मेलन के दौरान अपने संबोधन में सारी दुनिया विशेषकर अमेरिका के भाईयों और बहनों को कहा कि भारत एक ऐसा देश है जिसने दुनिया के हर धार्मिक उत्पीड़न के पीड़ितों को शरण दिया है। जियूस, पारसी, मुस्लिम तथा जिन्हें सताया गया है वह सभी भारत में आये और शरण ली। आज भारत में मुस्लिम की आबादी सबसे ज्यादा है। भारत देश एक ऐसा

देश है जिसने सभी धर्मों को साथ में लेने का प्रयास किया है और उसने सारे संसार को एक सुंदर उदाहरण दिया है।

आज के 21वीं सदी का भारत देश में हिंदू, मुस्लिम, ईसाई, सिख, पारसी तथा बौद्ध धर्म को मानने वाले सभी शांति के साथ रहते हैं। भारत की सभ्यता और संस्कृति को देखते हुए, भारत के संविधान के निर्माताओं ने भी प्रावधान रखा है कि भारत देश को एक पंथनिरपेक्ष देश के रूप में ऐलान किया जाए। भारत देश एक पंथनिरपेक्ष तथा सभी धर्मों का सम्मान करने वाला देश रहे हैं।

हमारे भारत देश का कोई धर्म एक देश धर्म नहीं रहेगा। क्योंकि यह भारत देश एक ऐसा देश है जहाँ अलग अलग प्रकार के धर्मों को मानने वाले रहते हैं। इसलिए भारत में देंखेगे, भारत की सरकार में भी अल्पसंख्यक मामले के लिए मंत्रालय भी होता है। उस प्रकार से भारत में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, जहाँ पर मानव मूल्यों का आधार, सार्वभौमिक जिम्मेदारी को आदर करते हुए इस प्रकार से 21वीं सदी के भारत के संविधान में भी उस प्रकार से प्रावधान रखा गया है।

परम पावन जी दुनिया के हर जगह जब जाते हैं, पश्चिम देशों में, वह धर्म सामंजस्य की बात करते हैं तो भारत का सुंदर उदाहरण देते हैं। हमें भारत देश से सीखने की जरूरत है। वह अपने आपको भारत की संस्कृति, भारत की सभ्यता का चेला मानते हैं। वह भारत को गुरू भूमि मानते है। क्योंकि तिब्बत की संस्कृति, वह भी हमारी नालंदा परम्परा जो कि संस्कृत की संस्कृति से जुड़ा है। भारत की सभ्यता है, भारत की परम्परा है, भारत की संस्कृति है वह हमें बहुत कुछ सिखाती है। जहाँ तक पंथनिरपेक्ष और धर्म सामंजस्य की बात करते हैं तो परम पावन दलाई लामा जी हमेशा भारत का उदाहरण देते हैं। आप तो दुनिया के संयुक्त राष्ट्र में भी धार्मिक सद्भाव को लेकर सब धर्मों को मानने वाला, उनकी अपनी फ्रीडम को लेकर के सारी दुनिया का उपदेश देते हैं कि किस प्रकार से मानव मूल्यों जैसे मानवाधिकार, बुनियादी अधिकार को हर देश का आदर करना चाहिए।

इसलिए परम पावन दलाई लामा जी अपने दूसरी प्रतिबद्धता धार्मिक सद्भाव को बढ़ावा देने पर हमेशा कार्यरत हैं। क्योंकि आज की 21वीं सदी में इसकी अत्यंत आवश्यकता है। हम दुनिया की शांति, मानवता का कल्याण और उत्थान के लिए काम करना है तो विश्व के सभी धर्मों के बीच भाईचारा होना जरूरी है। साथ ही इसमें कोई भेदभाव ना हो तथा एक दूसरे के धर्म को आदर करना। उसी प्रकार सभी धर्मों के अध्यात्मिक गुरुओं के बीच वार्तालाप करना, संवाद करना, अपनी चर्चाओं, विचार को एक दूसरे से आदान-प्रदान करना, सर्वधर्म सम्मेलन आयोजित करना इत्यादि अनेक विषयों पर परम पावन जी ने दुनिया भर में जहाँ भी जाते हैं वह धार्मिक सद्भाव को बढ़ावा देने के लिए काम करते हैं।

परम पावन दलाई लामा जी ने अपने जीवन में अपने देश को खोया है और आज वह भारत में रह रहे है। भारत उनका दूसरा घर है। दूसरा देश है। परम पावन जी ने इन कठिन परिस्थितियों में भी दुनिया को और मानवता की अच्छाई के लिए एक बौद्ध भिक्षु के रूप में कार्य किया है। उन्होंने कठिन परिस्थितियों में जिस राह पर चलके तिब्बत की आज़ादी को प्राप्त करने की कोशिश की, शांति के मार्ग से, अहिंसा के मार्ग से, उसी चीज को सम्मानित करते हुए उन्हें 1989 को नोबल शांति पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। परम पावन दलाई लामा जी निरंतर अपने प्रयास को कायम रखते हुए धर्म समंजस्य को बढ़ावा देने के लिए दुनिया भर में प्रवास करके इसपर कार्य किया है। उनका संदेश अलग अलग धर्मों को मानने वाले, अलग अलग धर्म के गुरुओं से हमेशा यही रहा है कि हम लोगों का मुख्य मार्ग एक ही है। हमारे बीच में, विभिन्न धर्मों के बीच में समानताएं ज्यादा हैं और अंतर बहुत कम हैं। इसलिए हमें जरूरी है कि हमारी जो समानता है उसको हम जोर देकर काम करें। अलग अलग धर्म हैं, अलग अलग परम्परा हैं उसको आपस में हमें एक साथ लेकर काम करने की बहुत जरूरत है।

बौद्ध धर्म में भी विभिन्न परम्पराएं हैं उनके बीच में आपसी आस्था (इंटर फेथ) की बैठक और संवाद करना चाहिए। ईसाई में भी अलग अलग संप्रदाय हैं उनको भी साथ में ले करके आपस में चर्चा करना तथा एक दूसरे की परम्परा और संप्रदाय को समझना और देखना की मूल रूप से एक ही संदेश है मानवता का कल्याण करना। जो थोड़ी भिन्नता है जिसको ज्यादा लोगों ने बाहर उलझाने की कोशिश की है उसे हमें नही करना है। क्योंकि मूल रूप से अगर हम देंखे तो हमारी समानता ज्यादा है। इसी को ध्यान में रखते हुए परम पावन दलाई लामा जी ने निरंतर धर्म सामंजस्य को बढ़ावा देने की इस प्रतिबद्धता को लेकर कार्य कर रहे हैं।

उन्होंने धार्मिक सद्भाव के संदर्भ में अनेक कार्यक्रमों को संबोधित किया है जिसमें 18 जुलाई 2011 में संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के चिकागो में विभिन्न धर्मों के अध्यात्मिक गुरूओं के साथ संवाद किया और अपने विचार प्रस्तुत किए। सभी धर्मों के गुरूओं ने अपने विचार को रखा और उन्होंने देखा कि मूल रूप से सभी धर्मो का संदेश मानवता के कल्याण के लिए है। इसलिए यह बहुत जरूरी है कि हम मानवता को जो अलग अलग धर्म के अनुयायी हैं उनको यह संदेश दें कि सभी धर्मों का मार्ग, संदेश एवं शिक्षा एक ही है। इसलिए हमें हर एक धर्म को सम्मान और आदर करना चाहिए। इस संवाद को मैकगिल विश्वविद्यालय और अन्य संस्थाओं द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित किया था। इस सम्मेलन में ईसाई थे, इस्लाम थे, यहूदी थे और उन सभी ने परम पावन दलाई लामा जी की बहुत प्रशंसा की।

उन्होंने कहा कि परम पावन दलाई लामा जी ने हमें नई राह दिखाई है, विभिन्न धर्मों के लोग एक साथ एक मंच पर एकत्रित होकर चर्चा करने का सुअवसर प्रदान किया है। सभी आध्यात्मिक गुरुओं ने कहा कि सभी धर्मों का मुख्य उद्देश्य और मार्ग एक ही वह यह है कि मानवता का कल्याण करें। इससे पूरे विश्व में मानवता की भलाई के लिए एक संदेश आया है।

आज 21वीं सदी में धर्म जैसा एक विषय जो इंसान के लिए व्यक्तिगत होता है, वह बहुत ही संवेदनशील भी होता है। यह ज्यादातर भावना से भी जुड़ा हुआ है। वही धर्म का कार्य है। इस प्रकार से परमपावन दलाई लामा जी ने सितंबर 2014 को नई दिल्ली में पहली बार भारत में विद्यमान विविध आध्यात्मिक परंपराओं की आध्यात्मिक गुरुओं तथा धर्म में विश्वास नहीं रखने वाले विशेषज्ञों की बैठक का आयोजन किया था। परम पावन दलाई लामा जी ने भारत का उदाहरण देते हुए कहा कि भारत ऐसा देश है जहाँ विभिन्न धर्मों में आस्था रखने वाले लोग खुशी और शांति के साथ रहते हैं।

इसी प्रकार 8 सितंबर 2011 को अमेरिका पर आतंकवादियों का हमला हुआ था, उसकी भी वर्षगाँठ पर सभी धर्मों के आदर सम्मान किया। सितंबर 2011 में हमला हुआ है वह एक मुसलमान के द्वारा हो सकता है लेकिन एक मुसलमान के कारण सभी मुस्लिम कौम को खराब कहना गलत होगा। उन्होंने कहा कि सभी धर्मों के बीच में ऐसी कुछ लोग होते हैं जो समाज में हानि पहुँचाते हैं। इसलिए इस्लाम खराब है हमें यह मानना नहीं चाहिए। हमें सभी धर्मों को सम्मान और आदर देना चाहिए। सभी धर्मों के बीच में आपसी भाईचारा होना चाहिए। उसी प्रकार उसी श्रृंखला में 2012 में परम पावन जी ने वियना, अस्ट्रिया में अलग अलग धर्मों को लेकर सर्वधर्म सम्मेलन के अपर संवाद किया। जहाँ फिर से उन्होंने 21वीं सदी में धार्मिक सद्भाव को बढ़ावा देने की आवश्यकता पर जोर दिया है।

इसी प्रकार परम पावन दलाई लामा जी ने 1989 में नोबल शांति पुरस्कार से सम्मानित राशि के द्वारा नई दिल्ली स्थित फाउंडेशन फॉर यूनिर्वासल रेसपोनसिबिलिटी नामक संस्था की स्थापना की। यह संस्था विशेष रूप से परम पावन दलाई लामा जी के जीवन की प्रतिबद्धता और नालंदा परम्परा की शिक्षा पर अनेक कार्यक्रम आयोजित कर रहा है। इसके मुख्य कार्यक्रम में से एक है धार्मिक सद्भाव को बढ़ावा देना है। यह संस्था प्रतिवर्ष “आपसी आस्था में संवाद और तीर्थयात्रा” नामक शीर्षक पर कार्यक्रम आयोजन करती है। इसमें अनेक धर्मों के युवा वर्ग इस कार्यक्रम में भाग लेते हैं। इस दौरान सभी प्रतिभागी तीर्थयात्रा के अंतर्गत मंदिर, मस्जिद, गिरजाघर इत्यादि का दौरा करते हैं ताकि सभी धर्म के लोगों के बीच धार्मिक सदाचार विकसित हो। कार्यक्रमों का परिणाम काफी लाभदायक रहा है। जिस जिस लोगों ने इस कार्यक्रम में भाग लिया है उन्हे बहुत अच्छा महसूस हुआ। सभी धर्म और आस्था के लोग दूसरों के प्रति सद्भाव और सदाचार की भावना रखते हैं। इस संस्था का एक अन्य कार्य है, “अंतर धार्मिक सद्भाव और समझ”।

इसलिए अगर हम देंखे तो परम पावन दलाई लामा जी ने अपनी प्रतिबद्धता धार्मिक सदाचार को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। ऐसे विषय पर कार्यरत होना 21वीं सदी में प्रांसगिक और लाभदायक है।

मैं, केंद्रीय तिब्बती प्रशासन द्वारा वर्ष 2020 को परम पावन दलाई लामा जी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए उनके जीवन की चार प्रमुख प्रतिबद्धताओं पर ऑनलाईन बातचीत श्रृंखला का आयोजन करने के लिए आभार प्रकट करता हूँ। इससे देश और दुनिया में एक संदेश जाएगा कि परमपावन दलाई लामा जी ने अपना जीवन धार्मिक सद्भाव को बढ़ावा देने के लिए कार्य करते हुए समर्पित किया है। यह आज की मानवता के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण और जरूरी है।

इन्ही शब्दों के साथ, मैं अपनी वाणी को विराम देता हूँ। फिर से, मैं केंद्रीय तिब्बती प्रशासन के सूचना एवं अंतर्राष्ट्रीय संबंध विभाग को धन्यवाद देना चाहता हूँ। बहुत बहुत धन्यवाद। टाशी देलेक।

गेशे जिन्पा डाकपा

तिब्बती बौद्ध धर्म में गेशे डिग्री से सम्मानित प्रथम गैर-हिमालय मूल के व्यक्ति

टाशी देलेक, नमस्कार। केंद्रीय तिब्बती प्रशासन के सूचना एवं अंतर्राष्ट्रीय संबंध विभाग के सभी कर्मचारियों को धन्यवाद करना चाहता हूँ जिन्होंने इस वर्ष परम पावन दलाई लामा जी की कृपा के सम्मानार्थ के प्रति अपनी कृतज्ञता अर्पित करने के लिए परम पावन दलाई लामा जी की चार प्रतिबद्धताओं के विषय पर कथन श्रृंखला का आयोजन किया और इस बातचीत श्रृंखला में मुझे कुछ बात रखने का सुअवसर प्रदान किया।

सर्वप्रथम में परम पावन दलाई लामा जी को नमन करता हूँ। हम सभी जानते हैं कि परम पावन दलाई लामा जी सन 1959 में अपने अनुयायियों के साथ भारत पहुँचे। और तब से भारत में विराजमान हैं। इसका मुख्य कारण चीनी सरकार द्वारा उनके देश, तिब्बत पर जबरन कब्जा करके वहाँ पर चीन की सत्ता स्थापित करना था जो सर्वथा गलत और अमानवीय है।

चीन ने तिब्बत की राष्ट्रीय पहचान और राष्ट्रीय संस्कृति को नष्ट करने का प्रयास किया परन्तु परम पावन दलाई लामा जी ने भारत में रहकर अपने देश की राष्ट्रीय पहचान और राष्ट्रीय संस्कृति को पुनर्जीवन देकर एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक काम किया है। इस कार्य को तिब्बत और विश्व के इतिहास में हमेशा श्रद्धा एवं मैत्री भाव से स्मरण किया जाएगा।

परम पावन जी के नेतृत्व में तिब्बती समाज ने कई उपलब्धियाँ हासिल की। स्वयं परम पावन दलाई लामा जी के व्यक्तित्व में एक बड़ा परिवर्तन हुआ जिसका प्रमाण विश्व ने उन्हें नोबल शांति पुरस्कार से सम्मानित किया था। यह सब उन्होंने भारत में रहकर किया।

हम भारतीयों को इस शताब्दी के सबसे अधिक लोकप्रिय तथा विश्व के शांतिदूत, विश्व में भारत के अहिंसा का प्रतिनिधित्व करने वाले परमपावन दलाई लामा जी के प्रति सम्मान और आदर होना स्वाभाविक है। इसके साथ तिब्बत एवं भारत के संबंध और परमपावन दलाई लामा जी के बारे में जानना भी आवश्यक है।

तिब्बत और भारत के संबंध न केवल राजकीय स्तर पर पिछले छह दशकों से ही नहीं अपितु 7वीं शताब्दी से शुरू हुए हैं। भारत के तपस्वी और धार्मिक श्रद्धालु, तिब्बत के कैलाश पर्वत और मानसरोवर जैसे क्षेत्रों को अपना श्रद्धा का केंद्र मानते हैं। इसी प्रकार तिब्बती भारत को अपना गुरु तथा आर्यवर्त देश मानते हैं। 7वीं शताब्दी में तिब्बत के 33वें शासक के रूप में धर्मराज सोंगत्सेन गम्पो ने राज्य धर्म करने के पश्चात उन्हें अपने देश की भाषा होने के बावजूद तिब्बत की लिपि न होने के कारण अपने देश का राज्य कंदा और पड़ोस के देशों में संबंध बनाने में समस्या उत्पन्न हुई। तब उन्होंने अपने मंत्री थोनमी संभोट को भारत में विद्या अर्जन के लिए

भेजा। उस समय भारत में गुप्त वंशीय राजाओं का राज था और उनकी भाषा और लिपि गुप्ता कालीन ब्रहमी लिपि जो ईस्वी संग पूर्व सन 350 वर्ष से प्रचलित थी। उस लिपि को आधार बनाकर थोनमी संभोट ने तिब्बत की एक स्वतंत्र लिपि बनाई।

वह तब से लेकर आज तक भारत, तिब्बत तथा भारत के उत्तर-पूर्वी राज्यों जैसे लद्दाख, सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश, आज के हिमाचल में स्पीति आदि राज्यों में विद्यमान हैं। यह प्रमाण है कि तिब्बत कभी भी चीन का अंग नहीं रहा था। क्योंकि तिब्बत की अपनी एक स्वतंत्र भाषा, स्वतंत्र लिपि, स्वतंत्र संस्कृति और स्वतंत्र राज की व्यवस्था थी।

8वीं शताब्दी में 38वें शासक के रूप में राज ग्रहण करने वाले धर्मराज त्रिसोंग देत्सेन ने तिब्बती लोगों के सुख और हित के लिए भारत के हितकारी और अहिंसावादी बौद्ध धर्म का परिचय कराने के लिए भारत से महान विद्वान बौद्ध भिक्षु आचार्य शांतरक्षित जी को तिब्बत में आमंत्रित किया। आचार्य शांतरक्षित जी भारत के नालंदा विश्वविद्यालय के मठाधीश थे। उन्होंने तिब्बत में सर्वप्रथम तिब्बतियों को भारत के मूल बौद्ध धर्म से परिचय कराया। उन्होंने तिब्बत में समये नाम के विहार का निर्माण करवाया। तिब्बत के कुछ उपासकों को भिक्षु दीक्षा देकर तिब्बत में भारत के श्री नालंदा परम्परा की शुरुआत की। कुछ लोगों का यह कहना कि तिब्बत का धर्म एक लामावाद है और उनकी परम्परा तिब्बत में अपनी बनाई हुई है। यह सर्वथा गलत और मिथ्या है।

क्योंकि तिब्बत की परम्परा सम्पूर्ण रूप से शुद्ध नालंदा की परम्परा है। आचार्य शांतरक्षित के बाद तिब्बत में भारत के कई विद्वान व आचार्य को आमंत्रित किया जाने लगा। उन्होंने भारत से तिब्बत में तिब्बती लोगों को नालंदा की परम्परा अनेक सारी विद्याएं और बुद्ध के वचनों को तिब्बतियों का पाठ पठाया। जैसे आचार्य कमलशील, आचार्य पद्मसम्भव, आचार्य दीपंकर अतिश इन सारे विद्वानों ने तिब्बत में भारतीय धर्म और प्राचीन विद्याओं का विस्तार किया। जैसे जैसे भारत से तिब्बत में बौद्ध धर्म का प्रचार और प्रसार बढ़ा। भारत में तिब्बत के विद्वान आने लगे, उन्होंने भारत के नालंदा, तक्षशिला, विक्रमशिला आदि विश्वद्यिलयों में रहकर बौद्ध धर्म और प्राचीन विद्याओं का अध्ययन किया है।

साथ में दुभाषी बनकर उन्होंने भारत के संस्कृत ग्रंथों को, भारतीय आचार्यों के अन्य ग्रंथों को और साथ ही संस्कृत के सम्पूर्ण बुद्ध के त्रिपिटक को तिब्बती भाषा और लिपि में अनुवादित करके तिब्बत की लिपि में लिपिवृद्ध किया। इसमें तिब्बत के दुभाषी लोत्सवा रत्नाभद्र जैसे आदि विद्वानों का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

इस तरह भारत और तिब्बत की आध्यात्मिक और गुरु शिष्य की परम्परा स्थापित हुई। तब से आज तक वह कायम बनी रही है। तिब्बत में जैसे जैसे बौद्ध धर्म और प्राचीन विद्याओं का प्रचार एवं विस्तार हुआ। तिब्बत में भी कई आचार्य उत्पन्न हुए और इसके साथ भारत के आचार्यों की तिब्बत में आने वाली संख्या कम होने लगी।

13वीं शताब्दी में भारत के बाहर के देशों ने, भारत पर आक्रमण कर भारत के बड़े-बड़े विश्वविद्यालयों जैसे नालंदा, विक्रमशिला, तक्षशिला के ग्रंथालयां को जलाया, विहारों को नष्ट किया तथा अध्यापन करने वालें हजारों भिक्षु एवं भिक्षुणियों की हत्या करके भारत से धीरे धीरे भारत की प्राचीन विद्या और बौद्ध धर्म का विनाश होने लगा।

भारत और तिब्बत के संबंध में कमियाँ होने लगी परन्तु तिब्बत में भारतीय धर्म, भारतीय विद्या को संरक्षण, संवर्धन तथा उसका विस्तार किया। भारत में बौद्ध धर्म को बढ़ावा देने के लिए राजाओं ने समय देकर बड़े-बड़े विश्वविद्यालय बनाए थे उसी तरह तिब्बत में समय समय के राजाओं ने तिब्बत में बौद्ध धर्म और प्राचीन विद्याओं की रक्षा, राजश्रय देकर तिब्बत में विश्वविद्यालयों का निर्माण किया और वहाँ पर लाखों की संख्या में बौद्ध भिक्षु, भिक्षुणियां, उपासक, उपासिका इस प्राचीन विद्या और बौद्ध धर्म का अध्यपन करने लगे।

इस तरह 7वीं शताब्दी से लेकर 19वीं शताब्दी तक तिब्बत ने भारत की इस प्राचीन विद्या को अपने देश में संभाल के रखा, इसका संवर्धन तथा विस्तार किया। परन्तु 1959 में चीन ने तिब्बत पर आक्रमण करते समय सर्वप्रथम तिब्बत के विश्वविद्यालयों का विनाश किया, वहाँ के बड़े-बड़े विहारों और मठों को नष्ट किया तथा कई ग्रंथालयों को जलाने का प्रयास किया, लाखों भिक्षु, भिक्षुणियों तथा नागरिकों की हत्या की और ऐसे समय में परम पावन दलाई लामा जी ने अपने संस्कृति और राष्ट्रीय पहचान और तिब्बत को भारत के महान विद्वानों ने विरासत दी थी जो प्राचीन विद्याओं उसका सवर्धन करने के लिए चीन के सामने शांति का प्रस्ताव रखा लेकिन चीन ने इस शांति के प्रस्ताव को ठुकराया तब परम पावन दलाई लामा जी ने भारत आने का निर्णय लिया।

उसके बाद चीनीयों ने परम पावन दलाई लामा जी को अपने ही राष्ट्र से जाने के बाद देशद्रोही घोषित कर दिया। परम पावन दलाई लामा जी जब भारत पधारे तो उन्हें अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ा परन्तु उन्होंने इन कठिनाईयों का सामना करते समय बहुत ही शांतिपूर्वक तरीके से समस्याओं को हल किया।

तिब्बत की जनता परम पावन दलाई लामा जी को बड़े ही श्रद्धा और विश्वास के साथ देखती है। कोई लोग उन्हें जीवित बुद्ध कहते हैं तो कोई उन्हें ईश्वार या राजा कहते हैं। परन्तु परम पावन जी स्वयं को एक साधारण भिक्षु मानते हैं।एक साधारण भिक्षु की तरह ही जीवन जीते हैं। परम पावन दलाई लामा जी ने अपने जीवन में चार प्रतिबद्धताओं का पालन करते हैं। समय समय पर इन प्रतिबद्धताओं को वैश्विक रूप से लोगों के समक्ष रखते हुए उसका अभ्यास करने के लिए लोगों को प्रेरित किया हैं।

उनकी पहली प्रतिबद्धता है सात अरब मनुष्य में से एक मनुष्य होने के नाते वह लोगों को इस समाज का प्रयत्न करते हैं कि जब अपना मन अशांत रहता है तब बाहरी भौतिक सुख साधन

भीतर की शांति को स्थापित नहीं कर पाते। जब अपना मन शांत रहता है तब शारीरिक कष्ट भी भीतर की शांति को भंग नहीं कर सकते।

परम पावन दलाई लामा जी लोगों को अपनापन की भावना और मानवीय मूल्यों जैसे करूणा, क्षमा, शांति, आत्मविश्वास आदि गुणों को अपने अंदर विकसित करके सुख पूर्वक जीवन जीने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। वह कहते हैं मनुष्य होने के नाते हम सभी एक समान हैं। हम सभी सुख चाहते है कोई दुख नही चाहता है। इन मानवीय मूल्यों का उपयोग करके हम व्यक्तिगत, पारिवारिक और समाज में शांति और सुख ला सकते हैं। मानवीय मूल्यों का उपयोग करने के लिए धर्म का विश्वास करना या धर्म को मानने वाले या न मानने वाले हों इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। जो इन मानवीय मूल्यों का उपयोग करते हैं उनके जीवन में शांति और समृद्धि आती है।

उनकी दूसरी प्रतिबद्धता वह विश्व की सभी धार्मिक परम्पराओं में आपसी मेल-जोल बनाने के लिए प्रयत्न करते हैं। उनका कहना हैं कि धार्मिक परम्पराओं में आपसी मेल संभव है। विश्व के सामने जब इस बात को कहते हैं तो उसका उदाहरण भारत देश का देते हुए कहते हैं कि भारत एक ऐसा देश है जहाँ पर भारत से उत्पन्न हुए धर्म और भारत के बाहर से आई धार्मिक परम्पराऐं साथ में रहती हैं। यह वास्तव में संभव है जब भारत में विभिन्न आध्यात्मिक परम्पराएं एक दूसरे के साथ कई दशकों से शांति के साथ रह रही हैं। इसलिए धार्मिक परम्पराऐं और इसके आपस में मेल-जोल बना सकें।

उनका कहना है कि विश्व की सभी प्रमुख धार्मिक परम्पराऐं दार्शनिक स्तर पर मतभेद होने के बावजूद भी सभी धर्म मनुष्य को सुख शांति और मनुष्य को एक अच्छे मनुष्य बनने के समान सक्षम हैं। यह बहुत महत्वपूर्ण है कि सभी धार्मिक परम्पराओं को एक दूसरे के प्रति सम्मान करना चाहिए। अपने मूल्यों को एक दूसरे से बांटना चाहिए। एक सत्य और एक धर्म के विचार के बारे में वह कहते हैं कि साधक के व्यक्ति विचार से वह उसका व्यक्तिगत प्रश्न है परन्तु व्यापक समाज के संदर्भ में हमें यह जानना आवश्यक है कि मानवीय समाज के लिए भिन्न परम्पराएं, भिन्न धर्मों की आवश्यकता होती है।

उनकी तीसरी प्रतिबद्धता, वह तिब्बती होने के साथ साथ दलाई लामा नाम धारण किये हुये हैं। इस वजह से तिब्बत की जनता उन्हें आदर्श, श्रद्धा के साथ देखती है और उनका भी यह दायित्व बनता है कि तिब्बत की संस्कृति, तिब्बत की भाषा, तिब्बत की राष्ट्रीय पहचान और तिब्बत के पर्यावरण का संरक्षण करें। साथ ही तिब्बत को नालंदा के आचार्यों से मिली विरासत का संरक्षण करें। तिब्बत के पर्यावरण के संतुलन का संरक्षण करने का उनका दायित्व बनता है।

उनकी चौथी प्रतिबद्धता, परम पावन दलाई लामा जी ने कुछ वर्ष पहले इस प्रतिबद्धता के बारे में भारतीय लोगों से संवाद करना प्रारंभ किया है। भारतीय विद्याओं के मूल्यों का पुनर्जीवन करना है। उनका तात्पर्य बौद्ध धर्म से नहीं है अपितु भारतीय अहिंसा, असंप्रदायिक दर्शन, तर्क

सिद्धांत, मनोविज्ञान और विपस्सना आदि जैसी विद्याओं से है। जगह जगह पर कला और राष्ट्रीय युद्ध ऐसी समस्या को हम केवल अहिंसा से ही समाप्त कर सकते हैं। पश्चिम देशों में मनोविज्ञान जैसे विषय बहुत ही प्रसिद्ध हैं परन्तु यह सब नए हैं क्योंकि भारत में इसका विश्लेषण तीन हजार सालों से किया जा रहा है। क्वांटम फिजिक्स जैसे गंभीर विषय को भारतीय आचार्यों ने 2600 वर्ष पूर्व अपने ग्रंथों में लिखा था इसके मूल भारत में है तथा वह तिब्बती ग्रंथों में उपलब्ध मिलते हैं।

भारत की प्राचीन विद्या से विकसित मानसिक क्रियाशीलता की विधि तथा ध्यान जैसे मानसिक अभ्यास के ऊपर जैसी कलाओं का, विद्याओं का इस जगत में आज के समय में बहुत आवश्यकता है। भारत के पास तर्क और कारण का दृढ़ इतिहास है और भारत की इस प्राचीन विद्या को पंथनिरपेक्ष, शैक्षणिक दृष्टि से देखा जा सकता है। परम पावन जी भारत की भूमि को एक विश्ष्ठि भूमि के रूप से देखते हैं जहाँ प्राचीन विद्या और वर्तमान विद्या के समन्वय से इस समाज में एक समन्वय और नैतिकता पर आधारित एक समाज का प्रसार किया जा सकता है।

परम पावन दलाई लामा जी इन विद्याओं को विश्व के सामने भारतीय प्रतिनिधित्व के रूप में रखते हैं ना कि तिब्बत के प्रतिनिधित्व के रूप में रखते हैं। भारतीय लोगों को इस बात के लिए उन्हें धन्यवाद देना चाहिए। परम पावन दलाई लामा जी मज़ाक में कभी कभी कहते हैं कि भारतीय लोग अपनी संस्कृति, अपनी प्राचीन परम्पराओं को भूल चुके हैं और हम तिब्बती जो भारत के गंभीर और आज्ञाकारी शिष्य हैं, उन्होंने इस प्राचीन भारतीय विचार को संभाल कर रखा है लेकिन मेरा कहना है गुरू जी के इस प्रयास को हम भारतीय लोगों को गंभीरता से लेने की आवश्यकता है। इन प्राचीन विद्याओं का उपयोग कर हम भारत में सुख, शांति और समृद्धि ला सकते हैं। इसका उपयोग करके विश्व में शांति भी स्थापित कर सकते हैं।

भारत के लोगों के अनुरोध करता हूँ कि भारत की इस प्राचीन विद्या को पुनर्जीवित करने के लिए गुरु जी के इन उद्देश्यों की सहायता करके विश्व में शांति स्थापित करने का सहयोग करें। सभी भारतीयों की ओर से परम पावन दलाई लामा जी की दीर्घायु की प्रार्थना करता हूँ। परम पावन जी हम लोगों की इस प्रार्थना को स्वीकार करें। परम पावन जी के इस उद्देश्य के साथ विश्व में शांति कायम बनी रहे। धन्यवाद।